मुक्त व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम

पाठ्यक्रम कोड-813

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम

3

शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के अधीनस्थ एक स्वायत्त संस्थान

ए–24/25, सेक्टर–62, नोएडा–201309 (उ.प्र.)

वेबसाइट : www.nios.ac.in, टोल फ्री नं. 1800 1809393

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम (813)

आभार

सलाहकार समिति

अध्यक्ष
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश

निदेशक (व्या. शिक्षा)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश

पाठ्यक्रम-पाठ्यचर्या समिति

श्रीमती सरिता शर्मा, पाठ्यचर्या समिति अध्यक्ष एवं निदेशक, योगसरिता फाउंडेशन, एशियाड विलेज, नई दिल्ली

प्रोफेसर सुरेशलाल बरनवाल
योग विभागाध्यक्ष, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड

डॉ. तबस्सुम, प्राकृतिक चिकित्सक,
योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान,
थाने, मुम्बई

प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, पाठ्यक्रम समिति अध्यक्ष एवं डीन, योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

डॉ. निधीश यादव, सहा. प्रोफेसर
योग विभाग पतंजलि विश्वविद्यालय,
हरिद्वार, उत्तराखंड

श्रीमती सीमा सिंह, योगाचार्या
इंटीग्रल योग केन्द्र, वैशाली
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश

डॉ. राजीव रस्तोगी
सहा. निदेशक, केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद,
आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

डॉ. रामावतार शर्मा, योग विशेषज्ञ
राजकीय जनरल हॉस्पीटल
(आयुष विभाग, हरियाणा सरकार),
नूह (हरियाणा)

श्रीमती रेखा शर्मा
योग शिक्षक
भारतीय विद्याभवन,
नई दिल्ली

लेखन

सहायक दल

डॉ. राजेन्द्र प्रताप मलिक
प्रवक्ता, योग विभाग
एम.बी. गवर्न्मेण्ट पी.जी. कॉलेज
हल्द्वानी, नैनीताल, उत्तराखंड

डॉ. पवन कुमार चौहान
व.कार्यकारी अधिकारी (योग),व्या. शि.वि.
रा.मु.वि.शि. संस्थान, नोएडा, उत्तर प्रदेश

डॉ. तबस्सुम
प्राकृतिक चिकित्सक
योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान,
थाने, मुम्बई

डॉ. निधि गर्ग
सहायक प्रोफेसर
एस.ए. मेडीकल कॉलेज एण्ड
हॉस्पीटल, मथुरा (उ.प्र.)

संपादन

श्रीमती सरिता शर्मा, निदेशक,
योगसरिता फाउंडेशन,
एशियाड विलेज
नई दिल्ली

प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, डीन
योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी
विश्वविद्यालय
हरिद्वार, उत्तराखंड

डॉ. रामावतार शर्मा, योग विशेषज्ञ
राजकीय जनरल हॉस्पीटल
(आयुष विभाग, हरियाणा सरकार),
नूह (हरियाणा)

डॉ. राजीव रस्तोगी
सहा. निदेशक, केन्द्रीय योग एवं
प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद,
आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

डॉ. निधि गर्ग
सहायक प्रोफेसर
एस.ए. मेडीकल कॉलेज एण्ड
हॉस्पीटल, मथुरा (उ.प्र.)

डॉ. मोनिका हीरा
सीएमओ
विवेकानन्द नेचुरोपैथी हॉस्पीटल
नई दिल्ली

पाठ्यक्रम समन्वयन

डॉ. पवन कुमार चौहान
व. कार्यकारी अधिकारी (योग),व्या. शि.वि.
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उ.प्र.)

ग्राफिक्स/पिक्चर तथा विशेष सहयोग

आरोग्य योग नेचरोपैथी केन्द्र, देहरादून
कल्पतरू योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान, अलवर (राजस्थान)
श्री सांई इन्स्टीयूट ऑफ योग एण्ड नेचुरोपैथी, हरिद्वार
यूनिवर्सल योग एण्ड नेचुरोपैथी इंस्टीट्यूट, अलीगढ़

लेज़र कम्पोजर

टेसा मीडिया एण्ड कम्प्यूटर्स, सी–206, शाहीन बाग, जामिया नगर, नई दिल्ली–110025

अध्यक्ष की कलम से...

प्रिय शिक्षार्थियो,

एनआईओएस के प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम में प्रवेश के लिए आपको बहुत–बहुत बधाई !

प्राचीनकाल से ही मानव प्रकृति के सानिध्य में रहा है, जहां उसने अपनी जीवन शैली में प्रकृति को समाहित कर स्वस्थ जीवन जीने की कला सीखी है। उसका खान–पान, पालन–पोषण, रोग–मुक्ति आदि सब कुछ प्रकृति ही करती है, जिसकी झलक, हमारी जीवन शैली और संस्कृति में दिखाई पड़ती है। किन्तु आज भौतिकवाद, भोग–विलासता, आधुनिक जीवन शैली और खान–पान की आदतों में बदलाव के कारण, जीवनशैली संबंधित विकार (जैसे–मोटापा, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह आदि) तेजी से बढ़ रहे हैं। इन सबसे बचने और स्वस्थ एवं चुस्त–दुरुस्त जीवन जीने के लिए, एक बार फिर, योग एवं प्राकृतिक जीवन शैली को अपनाने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। प्रकृति में रहकर, जहां स्वस्थ जीवन प्राप्त होता है वहीं योग, शरीर, मन व आत्मशक्ति का सर्वांगीण विकास करता है और अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। इस दशक में योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में, जो महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है, वह निसंदेह बहुत महत्वपूर्ण है।

अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने, रोगों से बचने और इलाज के लिए, लोग प्राकृतिक चिकित्सा तथा अन्य वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों की ओर तेजी से आकर्षित हो रहे हैं। अतः आज समाज में, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा की विशेषरूप से मांग है। इस विशेष मांग को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) ने अपने अधिकृत प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से दो वर्ष छः माह के इस प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम की शुरूआत की है। इसमें छः माह की इंटर्नशिप का प्रावधान है। जो लोग, योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में रुचि रखते हैं और एक पेशेवर के रूप में काम करने के इच्छुक हैं, उन सभी लोगों के लिए यह एक विशिष्ट कार्यक्रम है।

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान के इस डिप्लोमा कार्यक्रम, को प्रभावी बनाने के लिए, प्रैक्टीकल–प्रशिक्षण का 70% और सिद्धान्त (Theory) का 30% वेटेज (Weightage) निर्धारित किया गया है। प्रशिक्षणार्थियों में यथोचित कौशल विकास, कार्य कुशलता, गुणवत्ता व क्षमता में वृद्धि हेतु, अध्ययन केन्द्रों पर यथोचित व्यक्तिगत संपर्क कक्षाएँ, सत्रीय कार्य, प्रैक्टीकल एवं प्रशिक्षण कक्षाएँ, इंटर्नशिप आदि का प्रावधान है।

एनआईओएस, भारत सरकार के अंतर्गत केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) के समतुल्य एक राष्ट्रीय शैक्षिक बोर्ड है, जो अपने सभी कार्यक्रम राष्ट्रीय स्तर पर, शिक्षाविदों और ट्रेड संबन्धित विशेषज्ञों की भागीदारी से विकसित करता है। प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान के इस डिप्लोमा कार्यक्रम को राष्ट्रीय स्तर के विषय विशेषज्ञों की समिति द्वारा विकसित किया गया है। पाठ्यक्रम विकास में विशेष सहयोगी रहे, श्रीमती सरिता शर्मा, निदेशक, योगसरिता संस्थान, दिल्ली, प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, डीन, योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, डॉ0 भानु जोशी, विभागाध्यक्ष, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, डॉ0 निधीश यादव, सहा0 प्रोफेसर, योग विभाग, पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार का, मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ, जिनके अतुलनीय सहयोग से, यह कार्यक्रम विकसित हो सका। साथ ही सीसीआरवाईएन, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, अन्य विश्वविद्यालयों, योग व प्राकृतिक चिकित्सा संस्थानों और टीम के उन सभी सदस्यों को भी, धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से, इस पाठ्यक्रम विकास के लिए अथक प्रयास किये।

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम में प्रवेश लेने वाले अभ्यार्थियों को मैं, शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ और आशा करता हूँ कि यह कार्यक्रम आपके जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

आपके सफल एवं उज्ज्वल भविष्य की कामनाओं के साथ !

(प्रोफेसर चन्द्र भूषण शर्मा)

अध्यक्ष, एनआईओएस

दो शब्द...

प्रिय शिक्षार्थियो,

एनआईओएस के प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम में आपका स्वागत है!

आधुनिकता के इस भौतिकदौर में, अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने, रोगों से बचने और सुरक्षित इलाज की सभी को आवश्यकता है। आज लोग अपने स्वास्थ्य और फिटनेस को लेकर काफी सजग हैं। वे समझने लगे हैं कि, प्रकृति के साथ योगमयी जीवन जीना आवश्यक है। जहां प्रकृति स्वस्थ जीवन प्रदान करती है वहीं योग, शरीर, मन व आत्मशक्ति का सर्वांगीण विकास करता है और अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। यही कारण है कि लोग आज, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा तथा अन्य प्राचीन चिकित्सा–पद्धतियों की ओर आकर्षित हो रहे हैं और समाज में, प्राचीन चिकित्सा–पद्धतियों की मांग विशेषरूप से बढ़ी है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) ने अपने अधिकृत प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से, प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम की शुरूआत की है। जो लोग, योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में रुचि रखते हैं और एक पेशेवर के रूप में काम करने के इच्छुक हैं, उन सभी लोगों के लिए एनआईओएस द्वारा यह विशिष्ट कार्यक्रम विकसित किया गया है।

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान के इस दो वर्षीय डिप्लोमा कार्यक्रम में सैद्धांतिक और व्यावहारिक अर्थात प्रैक्टिकल मिलाकर, कुल 12 विषय सम्मलित हैं और छः माह की इंटर्नशिप का विशेष प्रावधान है, जिसे दो साल के प्रशिक्षण के उपरांत संबन्धित प्राकृतिक चिकित्सा के केन्द्रों, संस्थानों और अस्पतालों में पूरा करना आवश्यक होगा।

इस कार्यक्रम में, आपको अध्ययन सामग्री, स्व–निर्देशक सामग्री के रूप में प्रदान की जाएगी और व्यावहारिक घटक अर्थात प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण एनआईओएस के मान्य प्रशिक्षण अध्ययन केंद्रों (एवीआई) पर प्रदान किया जाएगा, जहां यथोचित व्यक्तिगत संपर्क कक्षाएँ, सत्रीय कार्य, प्रैक्टीकल एवं प्रशिक्षण कक्षाएँ, इंटर्नशिप आदि का प्रावधान निर्धारित है। योजना के अनुसार, प्रथम वर्ष में आप, सैद्धांतिक और व्यावहारिक 06 विषयों का प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे और परीक्षा में बैठेंगे। इसी प्रकार द्वितीय वर्ष में भी आप, सैद्धांतिक और व्यावहारिक 06 विषयों का प्रशिक्षण प्राप्त कर, परीक्षा में बैठेंगे। तदुपरान्त किसी प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग केंद्र अथवा चिकित्सालय में 06 माह की इर्न्टनशिप को पूरा करेंगे।

शिक्षार्थियों को ध्यान में रखते हुए, पाठ्यक्रम को, स्व–निर्देशित पाठ्यसामग्री के रूप में विकसित किया गया है, जिसमें यूनिट परिचय, यूनिट के उद्देश्य, अध्यापक की शैली में विषयों व उपविषयों को शिक्षक की भांति समझाते हुए, बीच–बीच में आपकी प्रगति जानने के लिए प्रश्न, आपने क्या सीखा और अंत में निबंधात्मक प्रश्नों का समावेश किया गया है।

यह पाठयसामग्री राष्ट्रीय स्तर पर विषय विशेषज्ञों की समिति द्वारा विकसित की गई है। पाठ्यक्रम विकास में विशेष सहयोगी रहे श्रीमती सरिता शर्मा, निदेशक, योगसरिता संस्थान, दिल्ली, प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, डीन, योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, डॉ0 भानु जोशी, विभागाध्यक्ष, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, डॉ0 निधीश यादव, सहा0 प्रोफेसर, योग विभाग, पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार का, मैं ह्रदय से आभारी हूँ, जिनके मार्गदर्शन में यह कार्यक्रम विकसित हो सका। साथ ही सीसीआरवाईएन, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, अन्य विश्वविद्यालयों, योग व प्राकृतिक चिकित्सा संस्थानों और टीम के अन्य सभी सदस्यों का भी मैं, आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने इस पाठ्यक्रम विकास के लिए अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया।

आशा करता हूँ कि यह कार्यक्रम आपको पसंद आएगा और आपके जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। इस कार्यक्रम से संबन्धित, यदि कोई सुझाव है तो, आपका स्वागत है। आप निःसंकोच हमसे संपर्क कर सकते हैं या लिखकर भेज सकते हैं।

आपके सफल एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए ढेर सारी शुभकामनाएँ!

शुभकामनाओं सहित,
कार्यक्रम समन्वयक और समिति
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम

पाठ्यक्रम और पाठ्यचर्या

प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में, प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा एक महत्वपूर्ण पाठ्यक्रम है। यह पाठ्यक्रम, उन सभी लोगों के लिए विकसित किया गया है, जो योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में रुचि रखते हैं और एक पेशेवर के रूप में, काम करने के इच्छुक हैं। प्राचीनकाल से ही मानव प्रकृति के सानिध्य में रहा है, जहां उसने अपनी जीवन शैली में प्रकृति को समाहित कर स्वस्थ जीवन जीने की कला सीखी है। आज स्वस्थ एवं चुस्त–दुरुस्त रहने के लिए, योग एवं प्राकृतिक जीवन शैली को अपनाने की आवश्यकता महसूस की जा रही है।

आधुनिक जीवन शैली के पैटर्न और खान–पान की आदतों में बदलाव के कारण जीवनशैली संबंधी रोग जैसे – मोटापा, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह आदि बीमारियां तेजी से बढ़ रही हैं। यही कारण है कि, लोग अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने, रोगों से बचने और इलाज के लिए, प्राकृतिक चिकित्सा तथा अन्य वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों की ओर तेजी से आकर्षित हो रहे हैं। अतः आज समाज में, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा की विशेषरूप से मांग है। इस विशेष मांग को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) ने अपने अधिकृत प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से इस व्यावसायिक पाठ्यक्रम की शुरूआत की है।

उद्देश्य

पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य, योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में लोगों को कुशल पेशेवर और निवारक विशेषज्ञ बनाना है। पाठ्यक्रम को पूरा करने के पश्चात, प्रशिक्षु निम्नांकित में कौशल प्राप्त करने और दक्षता हासिल करने में सक्षम होंगे –

- योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के परिचय पर प्रकाश डालने में;
- स्वास्थ्य–जागरूकता, स्वच्छता, एवं आहार की आवश्यकता एवं महत्व का उल्लेख करने में;
- योग दर्शन एवं क्रिया विज्ञान को समझा पाने में;
- योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांतों तथा पंचतत्वों पर प्रकाश डालने में;
- प्राकृतिक जीवन शैली की अवधारणाओं को जानने और व्यावहारिक बनाने में;
- स्वास्थ्य संवर्धन, बीमारियों की रोकथाम सहित सामान्य संक्रमण और जीवन शैली संबन्धित बीमारियों का प्रबंधन और आपातकालीन स्थितियों के दौरान नियंत्रण करने में;
- मानव शरीर रचना एवं शरीर क्रिया विज्ञान की मूलभूत जानकारी रखने में;
- योग के एकीकृत दृष्टिकोण के अनुप्रयोगों को लागू करने में;

- प्राकृतिक चिकित्सा से विभिन्न विकारों व बीमारियों की चिकित्सा प्रदान करने में;
- मानव शरीर पर योग के प्रभाव को स्पष्ट करने में।

प्रवेश अर्हता

- किसी भी मान्यता प्राप्त बोर्ड से न्यूनतम 12 वीं कक्षा पास (समकक्ष)

अथवा

- वे सभी लोग, जो योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा में किसी प्रतिष्ठित संस्थान (एनआईओएस द्वारा स्वीकृत)/विश्वविद्यालय से न्यूनतम एक वर्ष का डिप्लोमा कर चुके हैं, वे पाठ्यक्रम के द्वितीय वर्ष में सीधे प्रवेश ले सकते हैं, लेकिन प्रथम वर्ष की परीक्षा द्वितीय वर्ष के साथ उत्तीर्ण करनी आवश्यक होगी।
- न्यूनतम आयु –18 वर्ष

लक्ष्य समूह

वे सभी लोग, जो योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में 'कुशल पेशेवर और निवारक विशेषज्ञ' बनने के इच्छुक हैं।

रोजगार के अवसर

कार्यक्रम पूरा करने के पश्चात प्रशिक्षु, योग संस्थानों, योग केंद्रों, स्वास्थ्य क्लबों, प्राकृतिक चिकित्सालयों तथा अन्य प्राचीन चिकित्सा पद्धति के केन्द्रों आदि में सहायक चिकित्सक अथवा समकक्ष के रूप में काम कर सकते हैं।

पाठ्यक्रम की अवधि : पाठ्यक्रम की अवधि दो वर्ष छः माह इंटर्नशिप।

अध्ययन की योजना: कुल अध्ययन घंटे = 1200 घंटे + छः माह की इंटर्नशिप

स्व–अध्ययन – 20%, सिद्धांत और प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण – 80%

प्रथम वर्ष: 10 माह × 8 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 480 घंटे

द्वितीय वर्ष: 10 माह × 8 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 480 घंटे

थ्योरी व प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण कुल संपर्क घंटे – 480 + 480 = 960 घंटे + स्व–अध्ययन – 240 घंटे

छः माह की रेग्युलर इंटर्नशिप = 6 माह × 20 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 720 घंटे

पाठ्यक्रम–पाठ्यचर्या

पाठ्यक्रम में सिद्धांत और प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण सहित कुल 12 विषय शामिल हैं। अध्ययन सामग्री स्व–निर्देशक सामग्री के रूप में प्रदान की जाएगी और व्यावहारिक घटक अर्थात

प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण एनआईओएस के मान्य प्रशिक्षण अध्ययन केंद्रों (एवीआई) पर प्रदान किया जाएगा।

प्रथम वर्ष के विषय			
क्र.सं.	सैद्धान्तिक	क्र.सं.	प्रैक्टिकल
01	योग का आधारभूत ज्ञान	04	योग अभ्यास (प्रायोगिक)
02	प्राकृतिक चिकित्सा का आधारभूत ज्ञान	05	प्राकृतिक चिकित्सा का व्यावहारिक प्रशिक्षण (प्रायोगिक)
03	मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव	06	मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव (प्रायोगिक)
द्वितीय वर्ष के विषय			
01	यौगिक चिकित्सा	04	यौगिक चिकित्सा (प्रायोगिक)
02	पंच–तत्व चिकित्सा	05	पंच–तत्व चिकित्सा (प्रायोगिक)
03	अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ	06	अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (प्रायोगिक)
*किसी प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र पर छः माह की इंटर्नशिप के दौरान अनुसंधान संबन्धित परियोजना पर कार्य			

*प्रशिक्षु इंटर्नशिप के दौरान अनुसंधान संबन्धित परियोजना पर कार्य करेंगे। जिसके अधिकतम अंक 200 होंगे। इसका मूल्यांकन एनआईओएस द्वारा नियुक्त, बाह्य परीक्षक द्वारा किया जाएगा। जिसका प्रमाणपत्र संबन्धित एवीआई (प्रशिक्षण केंद्र) और प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र के सौजन्य से प्राप्त होगा।

निर्देश का माध्यम:

निर्देश का माध्यम हिंदी और अंग्रेजी

अनुदेश योजना:

- स्व–निर्देशित मुद्रित सामग्री
- एवीआई/अध्ययन केन्द्रों पर सम्पर्क कक्षाओं एवं व्यावहारिक–प्रशिक्षण की सुविधा
- श्रव्य–दृश्य सामग्री

मूल्यांकन और प्रमाणन की योजना

पाठ्यक्रम के दोनों घटकों (सैद्धान्तिक और व्यावहारिक) का मूल्यांकन किया जाएगा। अंतिम परिणाम की गणना करते समय आंतरिक आंकलन और इंटर्नशिप को भी ध्यान में रखा जाएगा। आंकलन, मूल्यांकन और प्रमाणन की योजना एनआईओएस द्वारा डिजाइन दिशा–निर्देशों के माध्यम से कार्यान्वित की जाएगी। एनआईओएस अपने नियमों और विनियमों के अनुसार अंतिम प्रमाणपत्र प्रदान करेगा।

क्र.सं.	प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम	कोर्स कोड	अधि. अंक	समय (घंटे में)	सत्रीयकार्य अधि.अंक	कुल अंक
प्रथम वर्ष						
1	योग का आधारभूत ज्ञान (सैद्धान्तिक)	811	70	3	30	100
2	प्राकृतिक चिकित्सा का आधारभूत ज्ञान (सैद्धान्तिक)	812	70	3	30	100
3	मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव (सैद्धान्तिक)	813	70	3	30	100
4	योग अभ्यास (प्रायोगिक)	814	70	3	30	100
5	प्राकृतिक चिकित्सा का व्यावहारिक प्रशिक्षण (प्रायोगिक)	815	70	3	30	100
6	मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान (प्रायोगिक)	816	70	3	30	100
	योग					600
द्वितीय वर्ष						
1	यौगिक चिकित्सा (सैद्धान्तिक)	817	70	3	30	100
2	पंच–तत्व चिकित्सा (सैद्धान्तिक)	818	70	3	30	100
3	अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (सैद्धान्तिक)	819	70	3	30	100
4	यौगिक चिकित्सा (प्रायोगिक)	820	70	3	30	100
5	पंच–तत्व चिकित्सा (प्रायोगिक)	821	70	3	30	100
6	अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (प्रायोगिक)	822	70	3	30	100
	योग					600
इन्टर्नशिप के दौरान अनुसंधान संबन्धित परियोजना पर कार्य						200
महायोग =						1400

उत्तीर्णता मापदंड : परीक्षार्थी को सैद्धान्तिक, व्यावहारिक प्रशिक्षण एवं सत्रीय कार्य तीनों में 50–50 प्रतिशत अंक प्राप्त करने होंगे।

पाठ्यक्रम शुल्क

पाठ्यक्रम का कुल शुल्क 30,000 रुपये है, जिसमें पाठ्यसामग्री, प्रक्रिया शुल्क आदि सम्मिलित है। परीक्षा में बैठने के लिए परीक्षा शुल्क एनआईओएस के नियमानुसार अलग से देय होगा। प्रवेश के दौरान अभ्यार्थी, प्रथम वर्ष में निर्धारित पाठ्यक्रम शुल्क 15,000 रुपये और द्वितीय वर्ष में 15,000 रुपये जमा करेंगे।

नोट : जो अभ्यर्थी सीधे द्वितीय वर्ष में प्रवेश लेंगे, उनके लिए यह पाठ्यक्रम शुल्क 25,000 रुपये होगा।

विषय सूची

क्र.सं.	यूनिट का नाम	पृष्ठ सं.
1	मानव शरीर संरचना परिचय एवं योग के प्रभाव	1
2.	मानव अस्थि तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	23
3.	पेशीयतंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	41
4.	ज्ञानेन्द्रिय तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	55
5.	पाचन तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	75
6.	श्वसन तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	95
7.	उत्सर्जनतंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	117
8.	रक्त परिसंचरण तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	137
9.	अन्तःस्रावी तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	157
10.	प्रतिरक्षा तंत्र एवं प्रजनन तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	175
11.	तंत्रिका तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव	185

1

मानव शरीर संरचना परिचय एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, इस संसार के समस्त जीवों में मानव शरीर ईश्वर की श्रेष्ठतम रचना है। सभी प्राणियों की तुलना में मनुष्यों की दो पैरों पर खड़े होकर चलने की विलक्षण क्षमता, धारा प्रवाह बोलने की क्षमता और विवेकपूर्वक कार्य करने की क्षमता इसे अन्य प्राणियों से भिन्न एवं श्रेष्ठ बनाते हैं। प्रस्तुत यूनिट का शीर्षक मानव शरीर संरचना का परिचय है। अतः यदि हम स्थूल रूप से देखें तो सिर, गर्दन, धड़, दो हाथ और दो पैर से युक्त रचना को मानव शरीर कहा जाता है परन्तु यह रचनाएं केवल मानव शरीर की बाह्य आकृति को प्रकट करती हैं। जबकि शरीर की बाहरी बनावट और संरचना के साथ–साथ इसकी आन्तरिक संरचना बहुत अधिक जटिल एवं महत्वपूर्ण होती है।

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप :

- मानव शरीर का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे;
- मानव शरीर की विवेचना करने में सक्षम हो सकेंगे;
- ऊतक का अर्थ एवं प्रकारों को समझाने में सक्षम हो सकेंगे;
- मानव शरीर के विभिन्न तंत्रों को समझा सकेंगे;
- मानव शरीर पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या करने में सक्षम हो पायेंगे।

टिप्पणी

1.1 मानव शरीर की संरचना

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन करें तो मानव शरीर की संरचना का मूल आधार कोशिका (Cell) होती है। जिस प्रकार बहुत सारी ईटों को आपस में मिलाकर एक भवन का निर्माण होता है, ठीक उसी प्रकार बहुत सारी कोशिकाएं आपस में मिलकर मानव शरीर की रचना करती हैं। मूल रुप से कोशिका मानव शरीर का मूल आधार होती हैं। यदि हम कोशिका के स्वरूप को समझें तो किसी पदार्थ के सबसे छोटे अंश को कोशिका कहा जाता है। **कोशिका इस संसार की सभी सजीव–निर्जीव वस्तुओं, पदार्थों, पेड़–पौधों एवं जीव जन्तुओं की सबसे छोटी रचनात्मक एवं क्रियात्मक यूनिट होती है।** कोशिका का अंग्रेजी शब्द (Cell) लेटिन भाषा के '**सेलुला**' से लिया गया है। यह शब्द एक छोटे कमरे के लिए प्रयुक्त होता है। सर्वप्रथम इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक **रॉबर्ट हुक** (सन् 1665) को कोशिका की खोज का श्रेय जाता है। प्रिय शिक्षार्थियों, इस संसार में कोशिका के विभिन्न प्रकारों को आप इस प्रकार समझ सकते हैं–

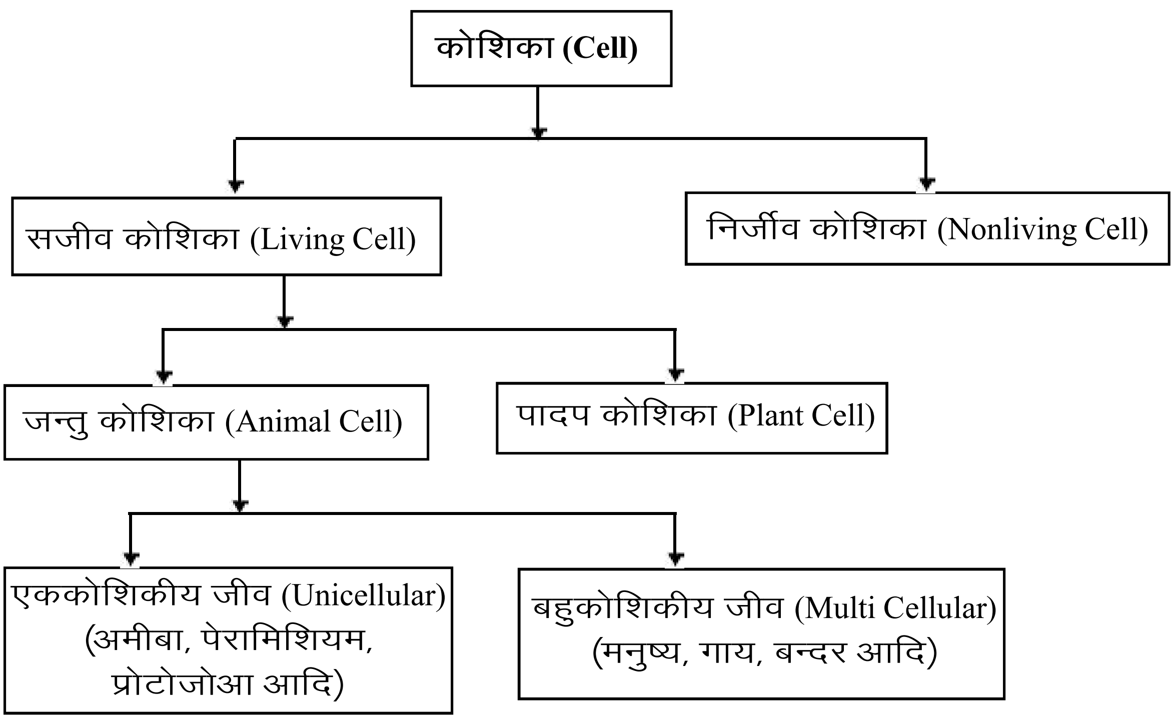

चित्र 1.1: कोशिकाओं के विभिन्न प्रकार

उपरोक्त रेखाचित्र से कोशिकाओं के विभिन्न प्रकारों का ज्ञान होता है। सर्वप्रथम ऐसी कोशिकाएं जिनमें जीवन के लक्षण उपस्थित होते हैं, उन्हें सजीव कोशिकाएं (Living Cells) कहा जाता है। संसार के समस्त सजीव जीव–जन्तुओं और पेड़–पौधों का निर्माण सजीव कोशिकाओं के द्वारा होता है। यहाँ पर जीवन के लक्षणों से अभिप्राय कोशिका में होने वाली पाचन, श्वसन, उत्सर्जन, प्रजनन, वृद्धि एवं विकास आदि क्रियाओं से होता है, जबकि इसके विपरीत जिन कोशिकाओं में उपरोक्त क्रियाएं नहीं होती, ऐसी कोशिकाएं निर्जीव कोशिकाएं

(Non Living Cells) कहलाती हैं। निर्जीव कोशिकाओं के मिलने से भौतिक पदार्थों का निर्माण होता है। सजीव कोशिकाओं (Living Cells) के दो प्रमुख वर्ग होते हैं– प्रथम जन्तु वर्ग और द्वितीय पादप वर्ग। ऐसी सजीव कोशिकाएं जिनमें क्लोरोफिल (Chlorophyll) नामक पदार्थ पाया जाता है और क्लोरोफिल की उपस्थिति से इन कोशिकाओं में सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में प्रकाश संश्लेषण (Photosynthesis) की क्रिया के द्वारा अपने भोजन का निर्माण स्वतः करने की क्षमता पायी जाती है, ऐसी कोशिकाएं **पादप कोशिका** (Plant Cell) कहलाती हैं। जबकि इससे भिन्न ऐसी सजीव कोशिकाएं, जिनमें क्लोरोफिल की अनुपस्थिति के कारण प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं पायी जाती है और जो अपने भोजन का निर्माण स्वतः नहीं कर पाती हैं, **जन्तु कोशिका** (Animal Cell) कहलाती हैं। जन्तु कोशिकाओं से जन्तुओं का और पादप कोशिकाओं से पादपों अर्थात् पेड़–पौधों का निर्माण होता है। जन्तुओं में निम्न वर्ग के जन्तुओं में केवल एक ही वर्ग अथवा प्रकार की कोशिकाएं पायी जाती हैं। दूसरे शब्दों में समझें तो ऐसे जन्तु जिनके शरीर में केवल एक ही प्रकार की कोशिकाएं पायी जाती हैं, एककोशिकीय जीव (Uni Cellular Organism) कहलाते हैं, जबकि ऐसे जीव जिनके शरीर में अलग–अलग कार्यों को करने के लिए अलग–अलग प्रकार की कोशिकाएं विशिष्टीकृत (Specialized) होती हैं या जिनके शरीर में अलग–अलग कार्यो को करने के लिए अलग–अलग प्रकार की कोशिकाएं पायी जाती हैं, ऐसे जीवों को उच्च श्रेणी के जीव अथवा बहुकोशिकीय जीव (Multi Cellular) कहलाते हैं। मानव एक **बहुकोशिकीय** (Multi Cellular) वर्ग का प्राणी है जिसके शरीर में अलग–अलग कार्यों जैसे श्वसन, पाचन, उत्सर्जन आदि क्रियाओं को करने के लिए अलग–अलग प्रकार की कोशिकाएं उपस्थित होती हैं। मानव शरीर की अलग–अलग कोशिकाओं में अलग–अलग कार्यों को करने की विलक्षण शक्ति होती है। उदाहरण से समझें तो आखों की कोशिकाओं में दर्शन करने की शक्ति और जीभ की कोशिकाओं में स्वाद ग्रहण करने की क्षमता होती है। हम यह भी समझ सकते हैं कि देखने का कार्य केवल आंखों के द्वारा ही संभव हो सकता है क्योंकि आंखों की कोशिकाओं में देखने की शक्ति होती है। ठीक इसी प्रकार कानों के द्वारा ही ध्वनि ग्रहण की जा सकती है क्योंकि कर्ण की कोशिकाओं में ध्वनि ग्रहण करने की शक्ति होती है। इसी विशेषता के कारण मनुष्य को बहुकोशिकीय जीवों की श्रेणी में रखा जाता है।

इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि मानव शरीर का निर्माण बहुत सारी सजीव कोशिकाओं के मिलने से होता है। यहाँ पर ध्यान देने योग्य तथ्य यह भी है कि मनुष्य के शरीर में प्रतिक्षण एवं निरंतर कोशिकाएं उत्पन्न होती रहती हैं एवं पूर्ण आयु को प्राप्त करने के उपरान्त मृत्यु को प्राप्त हो जाती हैं। इस प्रकार मनुष्य के शरीर में दो क्रियाएँ प्रतिक्षण चलती रहती हैं– प्रथम कोशिकाओं के निर्माण (Constructive Process) की, जिसमें कोशिकाओं का जन्म होता है और दूसरी क्रिया कोशिकाओं के विनाश (Destructive Process) की होती हैं। जिसमें अपनी पूर्ण आयु को प्राप्त करने के उपरान्त अथवा दूसरे अन्य कारणों जैसे चोट व दुर्घटना आदि के परिणाम स्वरुप कोशिकाएं नष्ट या मृत हो जाती हैं। मनुष्य की बाल्यावस्था में निर्माणकारी क्रिया की गति तीव्र और विनाशकारी क्रिया की गति अपेक्षाकृत धीमी होती है, जिसके फलस्वरुप शरीर की वृद्धि और विकास होता है और बालक

आगे चलकर युवा (Young) बन जाता है। युवावस्था में कुछ समय के लिए शरीर में कोशिकाओं के निर्माण और विनाश की क्रिया लगभग एक समान हो जाती है, जिसके फलस्वरुप शरीर का आकार, ऊर्जा एवं क्षमता लगभग एक समान बनी रहती है। इस अवस्था में शरीर की आकृति, शक्ति और कार्यक्षमता भी लगभग एक समान बनी रहती है। किन्तु वृद्धावस्था आने पर शरीर में कोशिकाओं के निर्माण की क्रिया की गति धीमी पड़ जाती है और कोशिकाओं के विनाश की क्रिया तीव्र हो जाती है जिसके परिणामस्वरुप शरीर की कार्य करने की क्षमता धीरे–धीरे कम होने लगती है और शरीर में विकार अथवा रोग उत्पन्न होने लगते हैं। हम चाहे कैसा भी और कितना भी पर्यत्न क्यों ना करें, शरीर में कोशिकाओं के निर्माण और विनाश की क्रिया को नहीं रोक सकते हैं क्योंकि यह जन्म के साथ प्रारम्भ होकर निरन्तर सतत् चलने वाली प्रक्रिया है।

मानव शरीर का निर्माण बहुत सारी सजीव कोशिकाओं के मिलने से होता है। एक व्यस्क मनुष्य के शरीर में लगभग 50 ट्रिलियन अर्थात् 500 खरब कोशिकाएं पायी जाती हैं। चिकित्सा विज्ञान में कोशिका को इस प्रकार परिभाषित किया जाता है–

"कोशिका मानव शरीर की मूलभूत संरचनात्मक एवं क्रियात्मक यूनिट होती है।"

शिक्षार्थियों, एक कोशिका अपने आप में एक पूर्ण यूनिट (Autonomous Body) होती है जिसके अन्दर एण्डोप्लाज्मिक रेटिकुलम, माइटोकॉण्ड्रिया, लाइसोसोम्स, राइबोसोम्स एवं केन्द्रक आदि अंग उपस्थित होते हैं। कोशिका में उपस्थित इन अंगों के द्वारा कोशिका में श्वसन, उत्सर्जन एवं प्रजनन आदि महत्वपूर्ण क्रियाएं सम्पन्न होती रहती हैं।

> The cell is the basic structural, functional and biological unit of all organisms. A cell is the smallest unit of life and often called "building blocks of life". The study of cell is called cytology.

मानव शरीर का निर्माण करने वाली इन कोशिकाओं की मूलभूत संरचना लगभग एक समान होती है। कोशिका की संरचना इस प्रकार समझी जा सकती है –

1.2 कोशिका की संरचना : (Structure of Cell)

प्रत्येक कोशिका के निम्नलिखित तीन प्रमुख भाग होते हैं –

क) कोशिका कला अथवा कोशिका आवरण (Cell wall or Cell Membrane)

ख) कोशिका द्रव्य अथवा साइटोप्लाज्म (Cytoplasm)

ग) केन्द्रक अथवा न्युक्लियस (Nucleus)

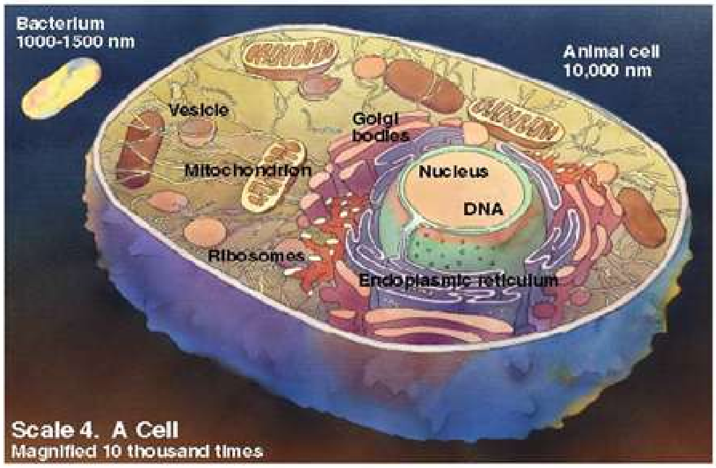

चित्र 1.2: कोशिका की संरचना

1.2.1 कोशिका कला, आवरण अथवा कोशिका भित्ति (Cell wall or Cell Membrane)

प्रत्येक कोशिका को बाहरी ओर से घेरकर रखने वाला आवरण कोशिका आवरण (Membrane) अथवा कोशिका भित्ति कहलाता है। पादप कोशिकाओं में यह आवरण सेल्यूलोज का जबकि जन्तुओं अर्थात् मानव शरीर की कोशिकाओं में यह आवरण प्रोटीन, ग्लाइकोजन, वसा एवं लिपिड्स का बना होता है। जिस प्रकार मनुष्य अपने घर के बाहर की चार दीवारी करते हुए स्वयं को सुरक्षित बनाता है ठीक इसी प्रकार कोशिका कला भी कोशिका के चारों ओर एक सुरक्षात्मक आवरण तैयार करती है। मानव शरीर की कोशिकाओं में यह आवरण अर्द्धपारगम्य झिल्ली (Semi permeable Membrane) के रुप में होता है अर्थात् ना तो यह पूर्ण रुप से पारगम्य होता है जिसके अन्दर से सभी पदार्थों का आवागमन हो सके तथा ना ही यह अपारगम्य होता है जिसके अन्दर से कोई भी पदार्थ अन्दर व बाहर नहीं आ जा सकें। अपितु इन दोनों के स्थान पर यह अर्द्धपारगम्य झिल्ली के रुप में होता है जिसके माध्यम से उपयोगी एवं अनुपयोगी पदार्थ जैसे ग्लूकोज, आक्सीजन, कार्बन डाई आक्साइड एवं यूरिक अम्ल आदि पदार्थों का आवागमन होता रहता है। कोशिका आवरण के स्वरुप को जानने के उपरान्त अब आपके मन में इसके कार्यों को जानने की जिज्ञासा भी अवश्य ही उत्पन्न हुई होगी। अतः अब कोशिका कला के प्रमुख कार्यों पर विचार करते हैं–

कोशिका कला अथवा कोशिका भित्ति के कार्य (Functions of Cell Membrane)

कोशिका कला निम्न महत्वपूर्ण कार्यों को सम्पन्न करती है –

1) कोशिका कला का सबसे प्रथम एवं मूलभूत कार्य कोशिका को बाहरी संरचनात्मक एवं सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करना होता है।

2) कोशिका कला कोशिका में उपस्थित उपयोगी एवं अनुपयोगी पदार्थों को ग्रहण करने एवं निष्कासित करने में महत्वपूर्ण भूमिका वहन करती है।

टिप्पणी

3) कोशिका कला सबसे बाहरी आवरण होता है जिसका कार्य बाह्य संवेदनाओं एवं उत्तेजनाओं को ग्रहण करना होता है।

4) कोशिका कला कोशिका का मूल आधार होती है। जिसके अन्दर कोशिका द्रव्य एवं कोशिका के अन्य महत्वपूर्ण अंग सुरक्षित बने रहते हैं।

इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन कोशिका कला के महत्व को स्पष्ट करते हैं। यहाँ पर यह पूर्ण रुप से स्पष्ट हो जाता है कि कोशिका कला कोशिका को संरचनात्मक आकार एवं सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करती है। कोशिका कला के अन्दर एक गाढ़ा रस उपस्थित होता है जिसे कोशिका द्रव्य (Cytoplasm) की संज्ञा दी जाती है। कोशिका द्रव्य की संरचना एवं कार्य इस प्रकार है–

1.2.2 कोशिका द्रव्य अथवा साइटोप्लाज्म (Cytoplasm)

प्रत्येक कोशिका के अन्दर एक गाढ़ा एवं चिपचिपा द्रव्य भरा होता है जिसे कोशिका द्रव्य (Cytoplasm) कहा जाता है। यह कोशिका द्रव्य कोशिका के समस्त कार्यों के लिए अर्थात् कोशिका के जीवन के लिए इतना अधिक महत्वपूर्ण होता है कि इसे कोशिका के जीवन रस की संज्ञा (Life of the Cell) दी जाती है। इस द्रव्य में कोशिका के विभिन्न महत्वपूर्ण अंग उपस्थित होते हैं एवं कोशिका की आवश्यक विभिन्न महत्वपूर्ण अनिवार्य क्रियाएं भी इसी कोशिका द्रव्य में होती हैं। कोशिका इसी द्रव्य के माध्यम से पोषण (Nutrition) प्राप्त करती है। यदि इस द्रव्य में कुछ नकारात्मक रासायनिक अथवा जैविक परिवर्तन हो जाए अथवा किसी कारण से यह द्रव्य नष्ट हो जाए तब ऐसी अवस्था में कोशिका की आन्तरिक जैविक क्रियाएं (Biological Process) रुक जाती हैं, जिसके परिणामस्वरूप कोशिका मृत हो जाती है। कोशिका द्रव्य में निम्नलिखित महत्वपूर्ण रचनाएं अर्थात् कोशिकांग उपस्थित होते हैं–

1) **एण्डोप्लाजमिक रेटिकुलम** (Endoplasmic Reticulum)

   यह जाल के समान रचनाएं होती हैं। जिनमें लिपिड्स एवं स्टीरॉयड हॉर्मोन्स का निर्माण (Production of Lipids and Steroid Hormones) होता है। इनका प्रमुख कार्य शरीर की पेशियों में आवेगों (Impulse) का संवहन करना होता है।

2) **गॉल्जी उपकरण** (Golgi Apparatus)

   ये कोशिका में समूह के रुप में उपस्थित होते हैं तथा कोशिका की रासायनिक क्रियाओं में भाग लेते हैं। कोशिका में उत्पन्न हुए स्राव (Secretion) इसके अन्दर एकत्र किए जाते हैं।

3) **माइटोकॉण्ड्रिया** (Mitochondria)

   कोशिका के अन्दर कुछ अण्डाकार अथवा जूते के समान आकार वाली अत्यन्त महत्वपूर्ण रचनाएं पायी जाती हैं जिन्हें माइटोकॉण्ड्रिया (Mitochondria) कहा जाता है।

टिप्पणी

माइटोकॉण्ड्रिया को कोशिका के ऊर्जा गृह (Power House of the Cell) की संज्ञा दी जाती है क्योंकि कोशिका के अन्दर इसी अंग में ग्लूकोज का ऑक्सीकरण होकर इससे ए.टी.पी. (Adinosine Triphosphate) के रुप में ऊर्जा मुक्त होती है। इस ऊर्जा का उपभोग कोशिका के विभिन्न आंतरिक एवं बाह्य कार्यों में किया जाता है। कोशिका में ग्लूकोज के एक अणु से 36 ए.टी.पी. उत्पन्न होते हैं।

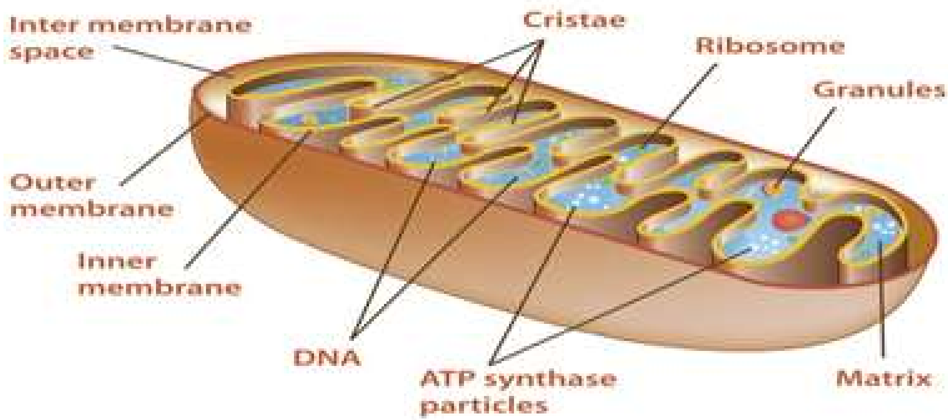

चित्र 1.3: माइटोकॉण्ड्रिया

4) **लाइसोसोम्स** (Lysosomes)

लाइसोसोम्स अण्डाकार अथवा गोलाकार थैली के रुप में कोशिका में पाये जाते हैं। लाइसोसोम्स में हाइड्रोलिटिक एन्जाइमस भरे होते हैं। इन हाइड्रोलिटिक एन्जाइम्स (HCl) का कार्य कोशिका में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट एवं वसा आदि के बड़े अणुओं को छोटे एवं सरल अणुओं में खंडित करना होता है किन्तु यदि किसी कारण से ये लाइसोसोम्स कोशिका में फट जाते हैं तब इनके अन्दर उपस्थित एन्जाइम्स कोशिका द्रव्य के रासायनिक संन्तुलन को विषम कर देता है एवं इसके फलस्वरुप कोशिका की जैविक क्रिया रूककर कोशिका की मृत्यु भी हो जाती है इसीलिए लाइसोसोम्स को आत्महत्या की थैलियाँ (Suicidal Bags) भी कहा जाता है।

5) **राइबोसोम्स** (Ribosomes)

राइबोसोम्स कोशिका द्रव्य में एकाकी अथवा समूह के रुप में बिखरे पाये जाते हैं। इनका महत्वपूर्ण कार्य कोशिका में प्रोटीन का संश्लेषण (Protein Synthesis) करना होता है। चूंकि कोशिका में प्रोटीन का निर्माण राइबोसोम्स में होता है अतः इस विशेषता के आधार पर राइबोसोम्स को कोशिका की प्रोटीन फैक्ट्री (Protein Factory of the Cell) की संज्ञा दी जाती है।

टिप्पणी

6) **सेन्ट्रोसोम्स** (Centrosome)

सेन्ट्रोसोम्स कोशिका में केन्द्रक के समीप छड़ की आकृति की रचना (Rod like structure) होती है। यह रचना कोशिका विभाजन (Cell Division) के महत्वपूर्ण कार्य में भाग लेती है।

7) **रिक्तिकाएं** (Vacuoles)

कोशिका द्रव्य में इधर–उधर अनेक रिक्त स्थान दिखलाई पड़ते हैं। इन रिक्त स्थानों को रिक्तिकाएं (Vacuoles) कहा जाता है। ये रिक्तिकाएं कोशिका द्रव्य में अपने स्थान एवं आकार में परिवर्तन करते रहते हैं। इन रिक्तिकाओं में कोशिका का अनुपयोगी द्रव्य एकत्र होता रहता है। कोशिका के अनुपयोगी पदार्थों को अन्दर ग्रहण करने के उपरान्त ये रिक्तिकाएं कोशिका कला के माध्यम से अनुपयोगी पदार्थों को बाहर उत्सर्जित कर देती हैं। कोशिका के अनुपयोगी पदार्थों को ग्रहण एवं वहन करने के कारण रिक्तिकाओं को कोशिका का डस्टबीन (Dustbin of the Cell) कहा जाता है।

इस प्रकार उपरोक्त सभी अंग कोशिका द्रव्य में उपस्थित रहते हैं। जिनके द्वारा कोशिका में निरन्तर अनेक क्रियाएं जैसे– श्वसन, उत्सर्जन, ऊर्जा उत्पादन आदि सम्पन्न होती रहती हैं। प्रिय शिक्षार्थियों, अब हम कोशिका के तीसरे महत्वपूर्ण मध्य भाग केन्द्रक की संरचना एवं कार्यों पर विचार करते हैं –

1.2.3 केन्द्रक अथवा न्युक्लियस (Nucleus)

कोशिका के मध्य में एक बड़ी एवं गोल रचना उपस्थित होती है, जिसे केन्द्रक कहा जाता है। मनुष्य के शरीर में पाये जाने वाली समस्त कोशिकाओं में केवल एक मात्र लाल रक्त कोशिकाओं (R.B.C.) को छोड़कर अन्य सभी कोशिकाओं के मध्य भाग में केन्द्रक उपस्थित होता है। केन्द्रक कोशिका का सबसे बड़ा अंगक होता है, जिसके अन्दर केन्द्रक द्रव्य भरा होता है। केन्द्रक द्रव्य में सूत्र के समान रचना पायी जाती है जिन्हें गुणसूत्र (Chromosome) कहा जाता है। इन गुणसूत्रों का निर्माण डी0एन0ए0 एवं हिस्टोन प्रोटीन (D.N.A & Histone Protein) से होता है। मानव कोशिका में कुल 23 जोड़ी (23 Pairs) गुणसूत्र पाये जाते हैं। गुणसूत्रों पर लड़ी के रुप में अनेक सूक्ष्म रचनाएं विद्यमान होती हैं, जो अपने अन्दर कोशिका के विशेष गुणों को समाहित किए होते हैं। इन सूक्ष्म रचनाओं को वंशाणु अथवा जीन (Gene) कहा जाता है। इन जीन के माध्यम से अनुवांशिक गुण पीढ़ी दर पीढ़ी वशांनुगत रूप से आगे चलते रहते हैं अर्थात् जीन पैतृक गुणों के वाहक (Genes carry parental characters) होते हैं।

यदि आप, सरल शब्दों में समझें तो केन्द्रक में उपस्थित ऐसी अतिसूक्ष्म रचनाएं जो अनुवांशिक लक्षणों को धारण कर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचाने अर्थात् स्थानान्तरित करने का महत्वपूर्ण कार्य करती हैं, वंशाणु (Gene) कहलाती हैं। हमारे बालों का रंग कैसा होगा, आँखों का रंग कैसा होगा अथवा कौन–कौन सी बीमारियों की संभावनाएं हो सकती हैं, ये सभी जानकारियां जीन में उपलब्ध होती हैं। केन्द्रक को कोशिका का मस्तिष्क (Brain of the Cell)

टिप्पणी

भी कहा जाता है। जिस प्रकार शरीर की सभी क्रियाओं का नियंत्रण मस्तिष्क द्वारा होता है, ठीक उसी प्रकार कोशिका की सभी क्रियाएं भी केन्द्रक द्वारा नियंत्रित होती हैं। केन्द्रक का अत्यंत महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट कार्य कोशिका विभाजन (Cell Division) में भाग लेना होता है। अपनी आयु के पूर्ण होने पर कोशिका नष्ट होने से पूर्व अपने समान दूसरी कोशिका को जन्म दे देती है, यह क्रिया कोशिका विभाजन (Cell Division) कहलाती है। इस दूसरी कोशिका की उत्पत्ति में केन्द्रक ही भाग लेता है। इस प्रकार कोशिका कला, कोशिका द्रव्य और केन्द्रक के मिलने से कोशिका का निर्माण होता है। कोशिकाएं समूह के रूप में संयुक्त होकर ऊतक की रचना करती हैं।

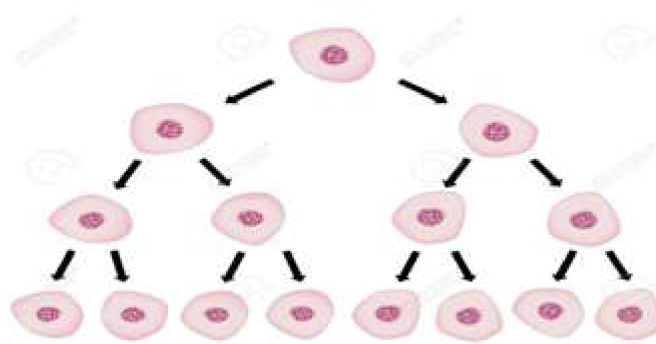

चित्र 1.4: कोशिका विभाजन की क्रिया **(Cell Division)**

यूनिटगत प्रश्न 1.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

i) प्रकाश संश्लेषण की क्रिया .... कोशिकाओं में होती है।

ii) जन्तु कोशिकाओं की कोशिका कला ....व...................की बनी होती है।

iii) कोशिका के अन्दर .... में लिपिड्स एवं स्टीरॉयड हॉर्मोन्स् का निर्माण होता है।

iv) .... को कोशिका की आत्महत्या की थैली कहा जाता है।

v) रक्त एक ....ऊतक है।

vi) रचना एवं कार्यों में समान कोशिकाओं का समूह .... कहलाता है।

vii) .... कोशिकाओं में सबसे कम पुनरुदभवन क्षमता होती है।

viii) ....ऊतक शरीर को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करता है।

ix) .... पेशियों का निष्क्रिय होना ही मृत्यु कहलाता है।

x) मनुष्यों में .... जोड़ी गुणसूत्र पाये जाते हैं।

टिप्पणी

ख) सही विकल्प चुनिए–

i) मनुष्य किस वर्ग का प्राणी है–

a) एककोशिकीय b) द्विकोशिकीय

c) अकोशिकीय d) बहुकोशिकीय

ii) मानव शरीर की मूलभूत रचनात्मक एवं क्रियात्मक यूनिट है–

a) ऊतक b) कोशिका

c) तंत्र d) अंग

iii) कौन सा अंग कोशिका का मस्तिष्क कहलाता है–

a) माइटोकाण्ड्रिया b) लाइसोसोम्स

c) केन्द्रक d) कोशिका द्रव्य

iv) कोशिका को पोषण कौन प्रदान करता है–

a) कोशिका द्रव्य b) कोशिका आवरण

c) केन्द्रक d) माइटोकॉन्ड्रिया

v) कोशिका में उत्पन्न स्राव किसमें एकत्र किये जाते हैं–

a) केन्द्रक b) गॉल्जी उपकरण

c) माइटोकॉन्ड्रिया d) रिक्तिकाएं

vi) कोशिका का ऊर्जागृह किसे कहते हैं–

a) माइटोकॉन्ड्रिया b) केन्द्रक

c) कोशिका कला d) एण्डोप्लाजमिक रेटिकुलम

vii) मानव शरीर की किन कोशिकाओं में केन्द्रक नहीं पाया जाता है–

a) आर.बी.सी. (इरिथ्रोसाइट) b) डब्ल्यू.बी.सी.(ल्यूकोसाइट)

c) नेफ्रोन d) न्यूरॉन

viii) ऐच्छिक पेशियाँ क्या कहलाती हैं–

a) धारीधार पेशियाँ b) कंकालीय पेशियाँ

c) तंत्रिकीय पेशियाँ d) सभी

ix) जीन्स किसके वाहक होते हैं –

a) पैतृक गुणों b) ऊर्जा

c) रक्त एवं ऑक्सीजन d) विचारों

x) सजीव एवं निर्जीव कोशिका के बीच की कड़ी क्या है –

a) जीवाणु b) विषाणु

c) रोगाणु d) अमीबा

ग) सही/गलत बताइए –

i) कोशिका की खोज सर्वप्रथम रार्बट हुक नामक वैज्ञानिक ने की। ( )

ii) जन्तुओं में कोशिका कला का निर्माण ग्लाइकोलिपिड्स से होता है। ( )

iii) मानव शरीर में सभी कोशिकाएं एक समान आकार की होती हैं। ( )

iv) ग्लूकोज के एक अणु से 36 ए0टी0पी0 उत्पन्न होते है। ( )

v) त्वचा एक संयोजी ऊतक है। ( )

घ) सुमेलित करें–

1)	माइटोकॉन्ड्रिया	a)	प्रोटीन फेक्ट्री
2)	लाइसोसोम	b)	ऊर्जा गृह
3)	रोइबोसोम्स	c)	डस्टबीन
4)	रिक्तिका	d)	कोशिका विभाजन
5)	केन्द्रक	e)	आत्महत्या की थैली

1.3 ऊतक (Tissue)

आपने कोशिका की संरचना एवं कार्य के विषय में जाना। आइये अब हम ऊतक का अध्ययन करते हैं।

आप जान चुके हैं कि मानव शरीर का निर्माण खरबों (Trillions) कोशिकाओं के मिलने से होता है। मूल रुप से शरीर की सभी कोशिकाएँ एक समान (Basically Similar) होती हैं अर्थात् इन सभी कोशिकाओं के आँतरिक अंग जैसे एण्डोप्लाज्मिक रेटिकुलम, माइटोकॉन्ड्रिया, लाइसोसोम्स आदि एक समान रूप में उपस्थित होते हैं। इस कारण इनमें पाचन, श्वसन, उत्सर्जन एवं प्रजनन आदि क्रियाएं भी समान रुप से पायी जाती हैं। कोशिकाओं का समूह ही ऊतक (Tissue) कहलाता है। ऊतक का अध्ययन ऊतक विज्ञान (Histology) के अन्तर्गत किया जाता है।

ऊतक को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है –

"रचना एवं कार्यों में समान कोशिकाओं का समूह ऊतक कहलाता है।"

"A Tissue is an ensemble of similar cells from the same origin that together carry out a specific function."

टिप्पणी

मानव शरीर में प्रत्येक ऊतक का अपना एक विशेष कार्य होता है। रचना एवं कार्यों के आधार पर मानव शरीर में ऊतकों के निम्नलिखित चार प्रमुख वर्ग होते हैं–

ऊतक

- उपकला ऊतक (Epithelial Tissue)
- संयोजी ऊतक (Connective Tissue)
- पेशीय ऊतक (Muscular Tissue)
- तंत्रिकीय ऊतक (Nervous Tissue)

सम्पूर्ण मानव शरीर का निर्माण, उपरोक्त चार प्रकार के ऊतकों से होता है। इनकी संरचना एवं कार्यों का वर्णन इस प्रकार है–

1.3.1 उपकला ऊतक (Epithelial Tissue) –

ऊतक का वह वर्ग जो विभिन्न आकार की कोशिकाओं से मिलकर बनता है एवं शरीर के बाह्य एवं आन्तरिक अंगों को ढकने का कार्य करता है, उपकला ऊतक (Epithelial Tissue) कहलाता है। उपकला ऊतक को ढकने का कार्य करने के कारण इसे आच्छादन ऊतक (Covering Tissue) भी कहा जाता है। उदाहरण से समझने के लिए जिस प्रकार फलों एवं सब्जियों के ऊपर छिलका पाया जाता है, ठीक उसी प्रकार उपकला ऊतक छिलके के रूप में शरीर के बाह्य एवं आँतरिक अंगों को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। बाह्य अंगों से अभिप्राय त्वचा से है अर्थात् त्वचा एक उपकला ऊतक है। इसके साथ-साथ आँतरिक अंगों जैसे आमाशय, फेफड़े, गर्भाशय, वृक्क, आदि अंगों को ढकने के रूप में उपकला ऊतक विद्यमान होता है।

1.3.2 संयोजी ऊतक (Connective Tissue) –

संयोजी ऊतक से अभिप्राय शरीर को संयोजित (Co-ordinate) करने एवं जोड़ने (Connect) से होता है। ऊतक का वह वर्ग जो शरीर के भीतर एक अंग को दूसरे अंग से जोड़ता हुआ संपूर्ण शरीर को संयोजित करने का कार्य करता है, संयोजी ऊतक (Connective Tissue) कहलाता है। संयोजी ऊतक के अंतर्गत अस्थियों एवं उपास्थियों का वर्णन आता है। अस्थियाँ एवं उपास्थियां आपस में मिलकर संपूर्ण शरीर को जोड़ने का कार्य करती हैं। इसके अतिरिक्त रक्त भी एक संयोजी ऊतक है जो संपूर्ण शरीर को आँतरिक स्तर पर संयोजित (Co-ordinate) करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है।

क्या आप जानते हैं–

- मानव शरीर का निर्माण 206 अस्थियों एवं उपास्थियों से होता है।
- स्वस्थ मनुष्य के शरीर में 5–6 ली. रक्त पाया जाता है।

टिप्पणी

- अस्थियाँ और रक्त दोनों ही संयोजी ऊतक के उदाहण हैं।
- इनका कार्य सम्पूर्ण शरीर को संयोजित करना है।

1.3.3 पेशीय ऊतक (Muscular Tissue)—

पेशीय ऊतक से अभिप्रायः कोशिकाओं के उस समूह से है जो संकुचन एवं विस्तार करने की शक्ति रखते हैं। इस शक्ति के द्वारा यह ऊतक मानव शरीर के विभिन्न अंगों को गतिशीलता (Movement) प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। अर्थात् वह ऊतक जो संकुचन एवं विस्तार के द्वारा शरीर को गतिशील बनाता है, पेशीय ऊतक (Muscular Tissue) कहलाता है। पेशीय ऊतक के अन्तर्गत निम्नलिखित तीन प्रकार की पेशियाँ पायी जाती हैं—

A) ऐच्छिक पेशियाँ (Voluntary Muscle)

B) अनैच्छिक पेशियाँ (Involuntary Muscle)

C) हृद पेशियाँ (Cardiac Muscle)

A) ऐच्छिक पेशियाँ (Voluntary Muscle)

ऐसी पेशियां जिन पर तंत्रिका तंत्र अर्थात् मस्तिष्क (Nervous System) का पूर्ण नियंत्रण पाया जाता है, ऐच्छिक पेशियां (Voluntary Muscle) कहलाती हैं। इन पेशियों में रेखाएं अथवा धारियाँ पायी जाती हैं, जिस कारण इन्हें रेखित पेशियाँ अथवा धारीदार पेशियाँ (Striated Muscle) कहा जाता है। ये पेशियाँ अस्थियों के साथ मिलकर मानव शरीर को गतिशील बनाने का कार्य करती हैं। इस आधार पर इन्हें कंकालीय पेशियाँ (Skeletal Muscle) भी कहा जाता है। उदाहरण के लिए— हाथों की पेशियाँ एवं पैरों की पेशियाँ (Biceps & Triceps Muscles) ऐच्छिक पेशियाँ हैं, जो मस्तिष्क के आदेशानुसार एवं हमारी इच्छानुसार कार्य करती हैं।

B) अनैच्छिक पेशियाँ (Involuntary Muscle)

ऐसी पेशियाँ जिन पर तंत्रिका तंत्र का पूर्ण नियंत्रण नहीं पाया जाता है, अपितु जो वातावरणीय दशाओं एवं परिस्थितियों के अनुरूप अपना कार्य करती हैं, अनैच्छिक पेशियाँ (Involuntary Muscle) कहलाती हैं। इस वर्ग की पेशियाँ एक लयबद्ध (Rhythm) रूप में अपना कार्य करती रहती हैं, जिस कारण इनमें थकावट उत्पन्न नहीं होती है। इस वर्ग की पेशियाँ शरीर के विभिन्न आँतरिक अंगों को गतिशील बनाती हुई अनेक शरीरोपयोगी महत्वपूर्ण क्रियाओं को संपादित करने का कार्य करती हैं। उदाहरण के लिए— श्वास नलिका (Trachea), आहार नलिका (Oesophagus), मूत्राशय (Urinary Bladder) एवं नेत्र में पायी जाने वाली पेशियां (Ciliary Muscle)।

टिप्पणी

C) हृद पेशियाँ (Cardiac Muscle)

यह पेशियों का एक विशेष वर्ग है जो मनुष्य के हृदय का निर्माण करता है। हृद पेशियों में ऐच्छिक एवं अनैच्छिक दोनों ही प्रकार के गुणों का समावेश होता है। इन पेशियों में ऐच्छिक पेशियों की तरह धारियां अथवा पट्टियां पायी जाती है तथा अनैच्छिक पेशियों की तरह इन पर इच्छा का कोई नियंत्रण नहीं होता हैं। इसके साथ–साथ यह पेशियां जन्म के साथ ही सक्रिय हो जाती हैं एवं जीवन पर्यन्त एक निश्चित लयबद्धता (Rythm) के साथ अपना कार्य करती रहती हैं। हृदपेशियों का सक्रिय रहना ही जीवन एवं निष्क्रिय होना ही मृत्यु का द्योतक होता है। मनुष्य के हृदय का निर्माण हृदपेशियों से होता है अर्थात् ये पेशियाँ केवल हृदय में ही पायी जाती हैं।

1.3.4 तंत्रिकीय ऊतक (Nervous Tissue)

मानव शरीर में कुछ ऐसी विशेष प्रकार की कोशिकाएं पायी जाती हैं, जिनमें बाह्य वातावरण से संवेदनाओं (Sensations from External Environment) को ग्रहण करने की क्षमता पायी जाती है। इन विशेष प्रकार की कोशिकाओं को न्यूरॉन (Neuron) अथवा तंत्रिका (Nerve Cell) कहा जाता है। ऊतक का वह वर्ग जो इन तंत्रिकाओं के मिलने से बनता है, तंत्रिकीय ऊतक (Nervous Tissue) कहलाता है। तंत्रिकीय ऊतक एक जाल के रूप में संपूर्ण शरीर में फैला होता है जो बाह्य वातावरण से संवेदनाओं को ग्रहण कर मस्तिष्क तक पहुंचाता है एवं मस्तिष्क से प्राप्त आदेशों का वहन करता हुआ शरीर के अंगों तक लेकर जाता है। तंत्रिकीय ऊतक की मूल यूनिट न्यूरॉन की सबसे प्रमुख विशेषता यह होती है कि इनमें सबसे कम पुनरूद्भवन क्षमता (Minimum Regenaration Power occurs in Neuron) पायी जाती है। अर्थात् एक बार नष्ट हो जाने के बाद तंत्रिका कोशिकाओं में पुनः जीवित होने की क्षमता सबसे कम होती है, जबकि मानव शरीर में यकृत की कोशिकाओं (हिपेटिक सैल्स) में यह पुनरूदभवन क्षमता (Maximum Regenaration Power occur in Hepatic Cells of Liver) सबसे अधिक होती है अर्थात् नष्ट होने के बाद यकृत कोशिकाएं बहुत जल्दी से पुनर्जीवित हो जाती हैं। तंत्रिकीय ऊतक से मस्तिष्क एवं मेरूरज्जु का निर्माण होता है।

इस प्रकार उपरोक्त चार प्रकार के ऊतक सम्पूर्ण मानव शरीर में फैले होते हैं तथा शरीर में अपने–अपने विशिष्ट कार्यों को संपादित करते रहते हैं। मानव शरीर में कोशिकाओं के मिलने से ऊतक, ऊतक के मिलने से अंग एवं अंगों के मिलने से तंत्र एवं तंत्रों से मानव शरीर का निर्माण होता है।

कोशिका → ऊतक → अंग → अंग संस्थान → मानव शरीर

Cell → Tissue → Organ → System → Human body

टिप्पणी

यूनिटगत प्रश्न 1.2

सही विकल्प चुनिए

1. रचना एवं कार्यों में समान कोशिकाओं का समूह कहलाता है—

   क) कोशिका ख) तंत्रिका ग) ऊतक घ) कोई नहीं

2. ऊतकों को कितने वर्गों में विभाजित किया गया है—

   क) तीन ख) चार ग) पाँच घ) दो

3. शरीर के बाह्य एवं आंतरिक अंगों को ढकने का कार्य करने वाले ऊतक को कहते हैं—

   क) संयोजी ऊतक ख) उपकला ऊतक ग) पेशीय ऊतक

   घ) तंत्रिकीय ऊतक

1.4 अंग तंत्र

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान मानव शरीर को मुख्य रूप से निम्नलिखित ग्यारह तंत्रों अथवा संस्थानों में विभाजित करता है—

1. अस्थि तंत्र (Skeletal System)
2. पेशीय तंत्र (Muscular System)
3. त्वचीय अथवा अध्यावरणीय तंत्र (Integumentary System)
4. पाचन तंत्र (Digestive System)
5. श्वसन तंत्र (Respiratory System)
6. उत्सर्जन तंत्र (Excretory System)
7. रक्त परिसंचरण तंत्र (Blood Circulatory or Cardiovascular System)
8. अन्तःस्रावी तंत्र (Endocrine System)
9. लसीका अथवा प्रतिरक्षा तंत्र (Lymphatic or Immunity System)
10. तंत्रिका तंत्र (Nervous System)
11. प्रजनन तंत्र (Reproductive System)

इन ग्यारह तंत्रों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

टिप्पणी

1) **अस्थि तंत्र (Skeletal System)-** शरीर का वह तंत्र जो अस्थियों एवं उपास्थियों (Bones & Cartilage) के मिलने से बनता है एवं शरीर को मूल आधारभूत संरचना (Body Frame Structure) प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है, कंकाल तंत्र कहलाता है। यह तंत्र मानव शरीर को एक निश्चित आकृति अथवा आकार प्रदान करता है। इसमें कुल **206 अस्थियों** का समावेश होता है। चिकित्सा विज्ञान में अस्थि तंत्र का विशेषज्ञ ऑर्थोपेडिक (Orthopedist) कहलाता है।

2) **पेशीय तंत्र (Muscular System)**– अस्थि तंत्र मानव शरीर को आकार तो प्रदान कर देता है, किन्तु इस मानव शरीर आकार रूपी संरचना को गति (Movement) पेशीय तंत्र से ही प्राप्त होती है। शरीर का वह तंत्र जो ऐच्छिक, अनैच्छिक एवं हृद पेशियों से मिलकर बनता है एवं शरीर को बाहरी एवं आन्तरिक दोनों ही स्तरों पर गतिशीलता (Movement) प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है, चिकित्सा विज्ञान में पेशीय तंत्र कहलाता है।

3) **त्वचीय अथवा अध्यावरणीय तंत्र (Integumentary System)**– वह तंत्र जो अस्थियों एवं पेशियों से मिलकर बने शरीर को बाहर से ढकने अर्थात् सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है, त्वचीय अथवा अध्यावरणीय तंत्र कहलाता है। यह तंत्र ज्ञानेन्द्रिय तंत्र (Sensory System) का भी एक भाग है। ज्ञानेन्द्रियों के अन्तर्गत बाह्य वातावरण से ज्ञान अथवा सूचनाओं को ग्रहण करने वाली त्वचा, जिह्वा, कर्ण, नासिका और आँख नामक पाँच ज्ञानेन्द्रियों का वर्णन आता है, किन्तु यहाँ पर इस तंत्र के अंतर्गत प्रमुख रुप से त्वचा की संरचना एवं कार्यों का वर्णन आता है। चिकित्सा विज्ञान में अध्यावरणीय तंत्र का विशेषज्ञ डर्मेटोलॉजिस्ट (Dermatologist) कहलाता है।

4) **पाचन तंत्र (Digestive System)**– मानव शरीर को आन्तरिक एवं बाह्य कार्यों को करने के लिए ऊर्जा (Energy) की आवश्यकता होती है, जिसे शरीर भोजन से प्राप्त करता है। शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र जो भोजन के पाचन (Digestion) से शरीर को ग्लूकोज के रूप में ऊर्जा प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है, पाचन तंत्र कहलाता है। पाचन तंत्र के अन्तर्गत मुखीय गुहा, आहार नलिका, आमाशय, छोटी आँत, बड़ी आँत, यकृत, पेन्क्रियाज आदि अंगों की संरचना एवं कार्यों का वर्णन आता है। चिकित्सा विज्ञान में पाचन तंत्र का विशेषज्ञ गेस्ट्रोएन्ट्रोलॉजिस्ट (Gestroenterologist) कहलाता है।

5) **श्वसन तंत्र (Respiratory System)-** मानव शरीर की कोशिकाओं में ऊर्जा का उत्पादन ग्लूकोज के ऑक्सीकरण (Oxidation of Glucose) के द्वारा होता है। ऑक्सीकरण की क्रिया में ऑक्सीजन O_2 अनिवार्य होती है एवं कार्बन डाईऑक्साइड की उत्पत्ति होती है। शरीर का वह तंत्र जो बाह्य वातावरण से ऑक्सीजन शरीर की कोशिकाओं तक पहुंचाने का कार्य करता है एवं कोशिकाओं में उपस्थित कार्बन डाई ऑक्साइड को बाह्य वातावरण में छोड़ने का कार्य करता है, श्वसन तंत्र कहलाता है। इसके अन्तर्गत नासिका, श्वास नलिका, श्वसनिका, फेफड़े एवं डॉयफ्राम आदि अंगों की संरचना एवं कार्यों का

टिप्पणी

वर्णन आता है। चिकित्सा विज्ञान में श्वसन तंत्र का विशेषज्ञ प्लमेनोलॉजिस्ट (Pulmonologist) कहलाता है।

6) **उत्सर्जन तंत्र (Excretory System)-** मानव शरीर में चयापचय (Metabolism) अर्थात् ऊर्जा ग्रहण एवं प्रयोग करने की दर के फलस्वरूप कुछ ऐसे अनुपयोगी तत्व उत्पन्न हो जाते हैं जो अनुपयोगी होने के साथ–साथ शरीर की सामान्य क्रियाओं में भी बाधा पहुंचाने का कार्य करते हैं। ऐसे अनुपयोगी पदार्थों को उत्सर्जी पदार्थ (Excretory Matter) कहा जाता है। शरीर का वह तंत्र जो ऐसे उत्सर्जी पदार्थों को शरीर से बाहर उत्सर्जित करने का कार्य करता है, उत्सर्जन तंत्र कहलाता है। इसके अन्तर्गत– वृक्क, मूत्राशय एवं मूत्रनलिका की संरचना एवं कार्यों का अध्ययन किया जाता है। चिकित्सा विज्ञान में उत्सर्जन तंत्र का विशेषज्ञ यूरोलॉजिस्ट (Urologist) कहलाता है।

7) **रक्त परिसंचरण तंत्र (Blood Circularatory or Cardiovascular System)**– रक्त मानव शरीर की अत्यन्त महत्वपूर्ण धातु है जो शरीर को संयोजित (Co-ordinate) करने के साथ–साथ संपूर्ण शरीर में परिभ्रमण करते हुए उपयोगी एवं अनुपयोगी पदार्थों के परिवहन (Transport) का कार्य करती है। शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र जो परिवहन के द्वारा आवश्यक पदार्थों की आपूर्ति एवं अनुपयोगी पदार्थों का निष्कासन करता हुआ संपूर्ण शरीर को सक्रिय बनाये रखने का कार्य करता है, रक्त परिसंचरण तंत्र कहलाता है। इसके अंतर्गत– रक्त एवं हृदय की संरचना एवं कार्यों का वर्णन आता है। चिकित्सा विज्ञान में रक्त परिसंचरण तंत्र का विशेषज्ञ कार्डियोलॉजिस्ट (Cardiologist) कहलाता है।

8) **अन्तःस्रावी तंत्र (Endocrine System)-** मानव शरीर में ऊर्जा उत्पत्ति एवं प्रयोग की दर अर्थात् मेटाबोलिक रेट (Metabolic Rate) समय–समय पर परिवर्तित होती रहती है। दूसरे शब्दों में शरीर की क्रियाशीलता देशकाल एवं परिस्थिति के अनुसार समय–समय पर निरन्तर परिवर्तित होती रहती है। जैसे रात्रिकाल सोने के समय एवं प्रातः काल उठकर कार्य करते समय शरीर में ऊर्जा की स्थिति का स्तर भिन्न होता है। शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र जो शरीर की क्रियाशीलता अर्थात् चयापचय दर को नियन्त्रित करने का कार्य करता है, अन्तःस्रावी तंत्र कहलाता है। इसके अंतर्गत– शरीर में उपस्थित विभिन्न अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की संरचना एवं कार्यों का वर्णन आता है। चिकित्सा विज्ञान में अन्तःस्रावी तंत्र का विशेषज्ञ एण्डोक्राइनोलॉजिस्ट (Endocrinologist) कहलाता है।

9) **प्रतिरक्षा तंत्र (Immunity System)**– शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र जो बाह्य जीवाणुओं (Bacteria), विषाणुओं (Virus) एवं रोगाणुओं (Germs) से शरीर की सुरक्षा का महत्वपूर्ण कार्य करता है, प्रतिरक्षा तंत्र कहलाता है। इसके अंतर्गत– लिम्फ ग्रन्थियों (Lymph Glands) की संरचना एवं कार्यों का वर्णन आता है। इसे ही लिम्फेटिक सिस्टम (Lymphatic System) भी कहा जाता है। चिकित्सा विज्ञान में प्रतिरक्षा तंत्र का विशेषज्ञ इम्यूनोलॉजिस्ट (Immunologist) कहलाता है।

10) **तंत्रिका तंत्र (Nervous System)**– शरीर का वह तंत्र जो शरीर की समस्त आन्तरिक एवं बाह्य क्रियाओं को नियंत्रित करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है तथा बाह्य वातावरण से संबंध स्थापित करता हुआ प्रेरणाओं (Impulse) एवं संवेदनाओं (Sensation) को मस्तिष्क तक पहुंचाता है एवं मस्तिष्क से प्राप्त आदेशों का पालन करता है, तंत्रिका तंत्र कहलाता है। इस तंत्र के अंतर्गत– मस्तिष्क, मेरूरज्जु एवं तंत्रिकाओं की संरचना एवं कार्यों का अध्ययन किया जाता है। चिकित्सा विज्ञान में तंत्रिका तंत्र का विशेषज्ञ न्यूरोलॉजिस्ट (Neurologist) कहलाता है।

11) **प्रजनन तंत्र (Reproductive System)**– मनुष्य में अपने वंश को आगे बढ़ाने हेतु प्रजनन क्षमता पायी जाती है, जिसके द्वारा वह अपने समान रूप–रंग एवं गुण, कर्म एवं स्वभाव वाली संतानों को उत्पन्न करता है। शरीर का वह तंत्र जिसके द्वारा मनुष्य संतानों को उत्पन्न कर अपनी वंश वृद्धि का कार्य करता है, प्रजनन तंत्र कहलाता है। इस तंत्र के अंतर्गत पुरुष एवं महिलाओं के विभिन्न प्रजनन अंगों जैसे– वृषण, गर्भाशय एवं प्रजनन ग्रन्थियों आदि का समावेश होता है। मानव शरीर में एकमात्र प्रजनन तंत्र की संरचना महिलाओं एवं पुरूषों में भिन्न–भिन्न होती है।

उपरोक्त ग्यारह तंत्र मिलकर मानव शरीर का निर्माण करते हैं। अर्थात् आप यह समझ सकते हैं कि मानव शरीर की संरचना एवं क्रियाविधि उपरोक्त ग्यारह तंत्रों पर पूर्ण रूप से निर्भर करती है। शरीर में उपरोक्त ग्यारह तंत्रों का अपने सामान्य कार्यों को सामान्य रूप से करना ही शारीरिक स्वास्थ्य (Physical Health) कहलाता है जबकि इसके विपरीत उपरोक्त तंत्रों का अपने सामान्य कार्यों को सही प्रकार से कर पाने की अवस्था ही रोगावस्था (Disease) कहलाती है।

1.5 कोशिकाओं एवं ऊतकों पर योग का प्रभाव

मानव शरीर की कोशिकाओं पर योग एवं यौगिक क्रियाओं का सीधा एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। योग मात्र शारीरिक अभ्यास नहीं है वरन् योग एक अनुशासन है, धनात्मक सोच–विचार है, सकारात्मक चिन्तन है एवं सुव्यवस्थित जीवन शैली है। जिसका शरीर, मन एवं आत्मा पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। योग का प्रारम्भ अनुशासन से होता है। योग सूत्र के रचयिता महर्षि पतंजलि **'अथ योगानुशास नम्'** नामक योगसूत्र से योग का प्रारम्भ करते हैं। यहाँ पर अनुशासन से अभिप्राय अपने सभी कार्यों को सुव्यवस्थित रुप से करने से होता है। इस प्रकार सुव्यवस्थित दिनचर्या, रात्रिचर्या, आहार–विहार एवं जीवनशैली से शरीर की समस्त कोशिकाएं स्वस्थ एवं सक्रिय बनती हैं। योग मनुष्य को सकारात्मक चिन्तन–मनन एवं दृष्टिकोण प्रदान करता है, जीवन में सकारात्मक दृष्टिकोण का सीधा प्रभाव कोशिका की आयु पर पड़ता है। **योगमय जीवनशैली के अनुसार सुव्यवस्थित एवं अनुशासित जीवनयापन करने से शरीर की समस्त कोशिकाओं की आयु में वृद्धि होती है तथा इनके नष्ट होने की दर कम हो जाती है। जिसके फलस्वरूप शरीर लम्बे समय तक स्वस्थ एवं सक्रिय बना रहता है एवं शरीर में वृद्धावस्था नहीं आती है। उपनिषद् में स्पष्ट किया गया है–**

टिप्पणी

"न तस्य रोगो न जरा न मृत्यु प्राप्तस्य योगाग्निमय् शरीरम् ।"

(श्वेताश्वतरोपनिषद् 2/12)

अर्थात् योगाग्नि में तपा हुआ शरीर न रोगी होता है, न बुढ़ापे को प्राप्त होता है और मृत्यु के भय से भी मुक्त हो जाता है।

महर्षि पतंजलि द्वारा अष्टांग योग का प्रतिपादन किया गया है, जिसमें वर्णित यम नियम आदि योगांगों का मानव शरीर की कोशिकाओं, ऊतकों, अंगों एवं तंत्रों पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

- यम–नियम अर्थात् अहिंसा एवं सत्य आदि का पालन करने से शरीर की कोशिकाओं में किसी भी प्रकार का नकारात्मक तनाव उत्पन्न नहीं होता है, अपितु शरीर की समस्त कोशिकाएँ सकारात्मक रुप से क्रियाशील एवं स्वस्थ होकर दीर्घायु को प्राप्त करती है।

- आसनों का विधिपूर्वक निरन्तर अभ्यास करने से कोशिकाओं में रक्त संचार की क्रिया तीव्र होती है। रक्त संचार के तीव्र होने से अधिक मात्रा में पोषक तत्व एवं ऑक्सीजन कोशिकाओं को प्राप्त होती है, जिसके फलस्वरूप कोशिकाओं की आयु एवं कार्यक्षमता बढ़ती है। योगासनों का अभ्यास शरीर की अस्थियों, पेशियों, कोशिकाओं एवं अन्य सभी अंगों को लचीला एवं सक्रिय बनाए रखता है।

- प्राणायाम का अभ्यास करने से शुद्ध प्राणवायु अर्थात् अधिक मात्रा में ऑक्सीजन शरीर की कोशिकाओं तक पहुंचती है, जिसका सकारात्मक प्रभाव कोशिकाओं पर पड़ता है। इसके साथ–साथ प्राणायाम का अभ्यास करने से कोशिकाओं में उपस्थित विषाक्त द्रव्य (Toxic Matter) प्रश्वास के रूप में बाहर निकलते हैं, जिससे कोशिकाओं की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता में वृद्धि होती है।

- प्रत्याहार के द्वारा इन्द्रियों पर संयम करने से व्यक्ति विकृत आहार–विहार का त्याग करता हुआ संयम को अपने जीवन में स्थान देता है। इन्द्रियों एवं मन में संयम को धारण करने से अच्छी आदतों एवं सद्गुणों का विकास होता है। अच्छी आदतों, शुद्ध सात्विक आहार–विहार एवं सकारात्मक सोच का शरीर की कोशिकाओं पर अनुकूल एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

- ध्यान का अभ्यास संवेगों पर नियन्त्रण (Control on Emotion) प्रदान करता है संवेगों पर नियंत्रण प्राप्त होने से शरीर में अन्तःस्रावी हॉर्मोनस संतुलित बने रहते हैं एवं शरीर की चयापचय दर संतुलित (Balanced Metabolic Rate) बनी रहती है। सन्तुलित चयापचय दर का सकारात्मक प्रभाव शरीर की कोशिकाओं पर पड़ता है।

- अष्टांग योग के उच्चतम सोपान समाधि से अभिप्राय सकारात्मक भावों को धारण करने से है। सकारात्मक भावों को धारण करने एवं अपने चारों ओर सकारात्मक अनुभूति करने से शरीर की कोशिकाएं स्वस्थ एवं सक्रिय बनती हैं। योग में सकारात्मक चिन्तन

टिप्पणी

धारण करने से मन–मस्तिष्क की छिपी आध्यात्मिक शक्तियों का उदय होता है। प्रायः दैनिक जीवन में अनुभव होता है कि सकारात्मक चिन्तन के प्रभाव से हमें सुखद नींद आती है। सुखद नींद का अच्छा प्रभाव शरीर में कोशिकाओं की आयु पर पड़ता है। इससे कोशिकाओं की आयु में वृद्धि होती है एवं कोशिकाओं के नष्ट होने की दर कम होती है अर्थात् उपरोक्त योगांगों का पालन करने से कोशिकाएं स्वस्थ, सक्रिय एवं दीर्घायु बनती हैं।

- यौगिक आहार के अन्तर्गत शुद्ध सात्विक एवं पौष्टिक आहार का वर्णन आता है, जिसका सकारात्मक प्रभाव कोशिकाओं पर पड़ता है। यौगिक आहार, सात्विक आहार एवं मिताहार का पालन करने पर शरीर की कोशिकाओं पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। कोशिकाओं के स्वस्थ बने रहने का सकारात्मक प्रभाव ऊतक एवं अंगों की क्रियाशीलता पर एवं ऊतकों एवं अंगों का सकारात्मक प्रभाव शरीर के तंत्रों पर पड़ता है। शरीर के तंत्र स्वस्थ एवं सक्रिय होने पर शरीर भी स्वस्थ, निरोगी एवं क्रियाशील बना रहता है।

यूनिटगत प्रश्न 1.3

सही विकल्प चुनिए–

1) मानव शरीर को मुख्य रूप से कितने तंत्रों/संस्थानों में विभाजित किया जा सकता है–

   क) आठ ख) ग्यारह ग) पाँच घ) छः

2) शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र, जो जीवाणुओं, विषाणुओं, रागाणुओं से, शरीर की सुरक्षा का कार्य करता है, कहलाता है–

   क) अन्तःस्रावी तंत्र ख) तंत्रिका तंत्र ग) प्रतिरक्षा तंत्र

   घ) इनमें कोई नहीं

3. योगमय जीवनशैली से शरीर लम्बे समय तक स्वस्थ एवं .... बना रहता है।

   क) सक्रिय ख) निष्क्रिय ग) असामान्य घ) इनमें कोई नहीं

आपने क्या सीखा?

इस यूनिट में आपने सीखा कि–

मानव शरीर का निर्माण 206 अस्थियों एवं उपास्थियों से होता है। इसके साथ–साथ स्वस्थ मनुष्य के शरीर में पांच से छः लीटर रक्त पाया जाता है। अस्थियाँ और रक्त दोनों ही संयोजी ऊतक के उदाहरण हैं। इनका कार्य सम्पूर्ण शरीर को संयोजित करना होता है।

इस प्रकार प्रस्तुत यूनिट के अध्ययन से सारांश रूप में यह स्पष्ट होता है कि कोशिका मानव शरीर की सबसे मूलभूत एवं आधारभूत संरचना होती है। इस तथ्य को उदाहरण के साथ समझें तो जो भूमिका किसी मकान के निर्माण में ईंट निभाती है, उसी भूमिका का वहन मानव शरीर के निर्माण में कोशिका द्वारा किया जाता है। यह एक स्पष्ट तथ्य है कि किसी भवन की ईंट जितनी मजबूत होगी वह भवन भी उतना ही मजबूत होगा। शरीर रूपी भवन की ईंट कोशिका होती है, जिस पर यौगिक क्रियाएं बहुत सकारात्मक प्रभाव रखती हैं। यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से एवं योगमय जीवनशैली के अंतर्गत अनुशासन, दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं सद्वृत का पालन करने से कोशिकाएं स्वस्थ, सक्रिय, निरोगी एवं दीर्घायु को प्राप्त होती है जिसके फलस्वरूप मनुष्य का शारीरिक स्वास्थ्य उन्नत अवस्था में बना रहता है।

यूनिटांत प्रश्न

1) कोशिका का सविस्तार वर्णन कीजिये।

2) ऊतक से आप क्या समझते हैं? ऊतक के प्रमुख प्रकार तथा उनके कार्यों का उल्लेख कीजिए।

3) मानव शरीर की कोशिकाओं पर योग के प्रभाव का सविस्तार वर्णन कीजिये।

4) मानव शरीर का परिचय देते हुए, उस पर योग के प्रभावों का उल्लेख कीजिए।

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

1.1

क	ख	ग	घ
i) पादप	i– d	1) सही	1 – b
ii) प्रोटीन व ग्लाइकोजन	ii– b	2) सही	2 – e
iii) एण्डोप्लाजमिक रेटिकुलम	iii– c	3) गलत	3 – a
iv) लाइसोसोम्स	iv– a	4) सही	4 – c
v) तरल संयोजी	v– b	5) गलत	5 – d
vi) ऊतक	vi– a		

टिप्पणी

vii) तंत्रिका vii– b

viii) उपकला viii– d

ix) हृदय ix– a

x) 23 x– v

1.2

1. ग
2 ख
3 ख

1.3

1. ख
2. ग
3. क

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजू तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0)।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ़।

2

मानव अस्थि तंत्र की संरचना–क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, पूर्व की यूनिट में आपने जाना कि, छोटी–छोटी कोशिकाओं के मिलने से मानव शरीर की उत्पत्ति होती है। वास्तव में मानव शरीर की निर्माण करने में अस्थि तंत्र सबसे मूलभूत भूमिका वहन करता है। शरीर का कठोर कोशिकाएं आपस में मिलकर अस्थियों की रचना करती हैं। अस्थियों से मिलकर अस्थि तंत्र का निर्माण होता है। मानव शरीर को आधारभूत संरचना एवं आकृति प्रदान करने का श्रेय अस्थि तंत्र को ही जाता है। अस्थियां और उपास्थियां शरीर को गतिशील बनाने में भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। अस्थियों में किसी भी प्रकार की विकृति उत्पन्न होने पर इसका दुष्प्रभाव शरीर की क्रियाशीलता पर पड़ता है और अस्थियों से सम्बन्धित विकारों के बढ़ने से शरीर गतिहीन एवं क्रियाहीन हो जाता है। यौगिक क्रियाएं जैसे योगासन, प्राणायाम, ध्यान आदि का शरीर की अस्थियों पर सीधा सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। नियमित रूप से योगाभ्यास करने से शरीर का अस्थि तंत्र स्वस्थ एवं क्रियाशील बना रहता है।

अस्थि तंत्र के स्वरुप एवं मानव शरीर में इसके महत्व को जानने के उपरान्त अब आपके मन में अस्थि तंत्र को विस्तार पूर्वक समझने तथा इसके वर्गीकरण (प्रकारों) को जानने की जिज्ञासा उत्पन होनी स्वाभाविक ही है। इसके साथ–साथ कौन– कौन से योगाभ्यास मानव अस्थि तंत्र को प्रभावित करते हैं, यह जानने की उत्सुकता भी आपके मन में अवश्य आयेगी। अतः अब हम अस्थि तंत्र की संरचना, वर्गीकरण, कार्यों एवं मानव अस्थि तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव का सविस्तार अध्ययन करेंगे।

टिप्पणी

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

- अस्थि तंत्र का सामान्य परिचय समझा सकेंगे;
- अस्थि तंत्र के वर्गीकरण पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- अस्थि तंत्र की विवेचना करने में सक्षम हो सकेंगे;
- अस्थि तंत्र के महत्व को समझा सकेंगे;
- अस्थि तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या करने में सक्षम हो पायेगें।

2.1 मानव अस्थि तंत्र का सामान्य परिचय

मानव शरीर का निर्माण अस्थियों एवं उपास्थियों के मिलने से होता है। सामान्य रूप से अस्थियों से हाथ–पैर एवं उपास्थियों से नाक एवं कान आदि अंगों का निर्माण होता है। इनमें अस्थियाँ दृढ़ एवं कठोर जबकि उपास्थियाँ नरम व लचीली होती हैं। अस्थियाँ एवं उपास्थियाँ आपस में मिलकर मानव शरीर के लिए मूल संरचनात्मक ढाँचा (Body frame Structure) तैयार करती हैं। विकिपिडिया के अनुसार बालक में जन्म के समय **300 अस्थियाँ** पायी जाती हैं, इनमें से आगे चलकर बड़ा होने पर कुछ अस्थियाँ आपस में संयुक्त (जुड़) हो जाती हैं तथा वयस्क अवस्था में (21 वर्ष की आयु तक) इन अस्थियों की कुल संख्या 206 रह जाती है। इन अस्थियों के विभिन्न आकार होते हैं इसमें से आकार के दृष्टिकोण से पैर की **फीमर अस्थि** मानव शरीर की सबसे लम्बी एवं मध्य कर्ण में स्थित **स्टैप्स** नामक अस्थि मानव शरीर की सबसे छोटी अस्थि होती है।

> मानव शरीर में फीमर सबसे लम्बी तथा स्टैप्स सबसे छोटी अस्थि होती है।
>
> "Femur (Thigh) is the longest & Stapes (Middle Ear) is the smallest bone of Human Body."

मानव शरीर में अस्थि तंत्र निम्नलिखित महत्वपूर्ण कार्य संपादित करता है–

1. अस्थि तंत्र का सबसे मूलभूत कार्य शरीर को आधारभूत संरचना प्रदान करना होता है। अस्थियाँ और उपास्थियां आपस में मिलकर मानव शरीर को मूल संरचनात्मक ढांचा प्रदान करती हैं।
2. अस्थि तंत्र पेशियों के साथ मिलकर शरीर को गतिशील बनाने का कार्य करता है। अर्थात अस्थियाँ और पेशियां आपस में मिलकर शरीर को गतिशील बनाने का कार्य करती हैं।
3. अस्थियाँ मानव शरीर के कोमल आंतरिक महत्वपूर्ण अंगों जैसे मस्तिष्क, हृदय, फेफड़े,

सुषुम्ना रज्जु आदि को सुरक्षा प्रदान करती हैं। इस प्रकार अस्थि तंत्र शारीरिक अंगों को सुरक्षा प्रदान करने का कार्य करता है।

4. लम्बी अस्थियों के मध्य भाग अर्थात् अस्थिमज्जा में लाल रक्त कणों का निर्माण होता है अर्थात् लम्बी अस्थियाँ रक्त निर्माण की क्रिया में भाग लेती हैं।

5. उपरोक्त चार महत्वपूर्ण कार्य करने के साथ—साथ अस्थियां शरीर में खनिज लवणों के संचय एवं अन्तःस्रावों के प्रभाव से शरीर की क्रियाशीलता को बढ़ाने का कार्य भी करती हैं।

The **Human Skeleton** is the internal framework of the body. It is composed of around 300 bones at birth – this total decreases to around 206 bones by adulthood after some bones get fused together. The bone mass in the skeleton reaches maximum density around age 21. The human skeleton performs six major functions; Support, Movement, Protection, Production of Blood Cells, Storage of Minerals and Endocrine Regulation.

2.2 अस्थि तंत्र का वर्गीकरण (Classification of Skeletal System)

प्रिय शिक्षार्थियों, अध्ययन में सुविधा के दृष्टिकोण से, मानव अस्थि तंत्र को निम्न दो भागों में बांटा जाता है—

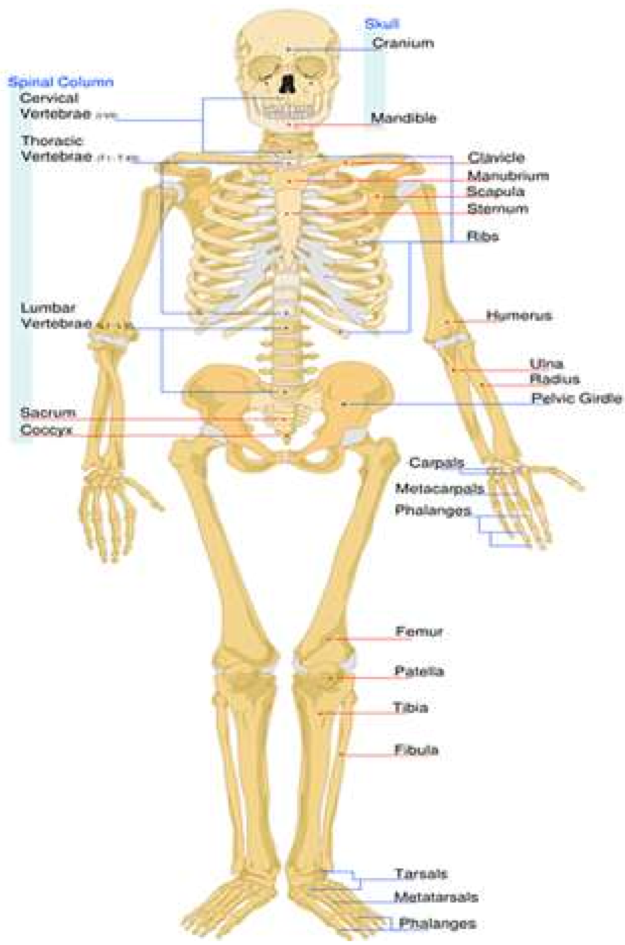

चित्र 2.1: मानव अस्थि तंत्र

टिप्पणी

क) अक्षीय या ऐक्सियल कंकाल **(Axial Skeletal System)**

ख) उपांगीय या एपैण्डिकुलर कंकाल **(Appendicular Skeletal System)**

2.2.1 अक्षीय कंकाल तंत्र (Axial Skeletal System)

इसमें कुल 80 अस्थियों का समावेश होता है जो इस प्रकार हैं—

I) **खोपड़ी (Skull)** — इसमें 22 अस्थियाँ होती है जिसमें कपाल अर्थात् सिर में 8 अस्थियाँ एवं चेहरे में 14 अस्थियाँ होती हैं।

II) **कान की अस्थियाँ (Bones in Ears)** — मनुष्य के प्रत्येक कान में तीन–तीन अर्थात् कुल 6 अस्थियों का समावेश होता है। मानव शरीर की सबसे छोटी अस्थि स्टेप्स (Stapes) यहीं उपस्थित होती है।

III) **गले की अस्थियाँ (Bones in Neck)** — मनुष्य के गले में **हायॉइड** (Hyoid) नामक एक अस्थि उपस्थित होती है। यह मानव शरीर की एक मात्र ऐसी अस्थि होती है, जिसमें कोई संधि नहीं पायी जाती है।

IV) **मेरूदण्ड की अस्थियाँ (Bones in Spinal Cord)-** मनुष्य की मेरूदण्ड में कुल 26 अस्थियाँ होती हैं। (बाल्यावस्था में मेरूदण्ड में अस्थियों की संख्या 33 होती है, जबकि व्यस्क अवस्था में कुछ अस्थियाँ अर्थात् कशेरूकाएँ आपस में जुड़ जाती हैं और पूर्ण व्यस्क होने पर मेरूदण्ड में अस्थियों की कुल संख्या 26 हो जाती है)। इसमें सर्वाइकल भाग में सात, थोरेसिक भाग में बारह, लम्बर भाग में पाँच, सेकरम और कोक्सिक नामक कशेरुकाओं का समावेश होता है।

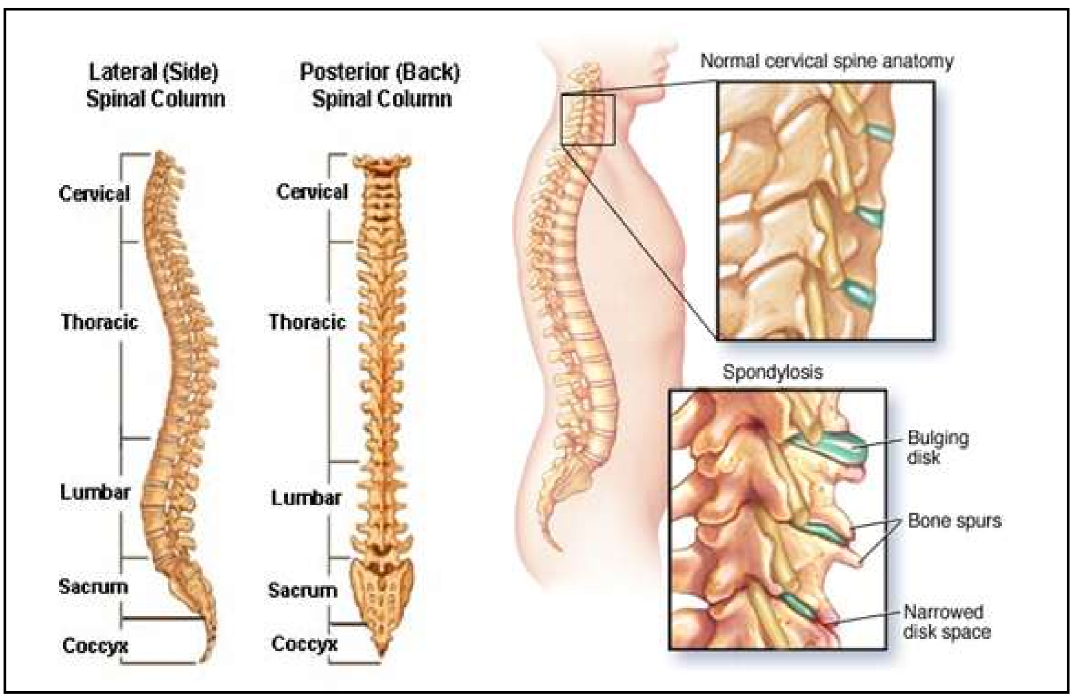

चित्र 2.2: (मानव रीढ़ की संरचना) **(C-07, T-12, L-05, Sacrum & Coccyx)**

V) **वक्ष की अस्थियाँ (Thoracic)-** मनुष्य के वक्ष में कुल 12 जोड़ी अर्थात् 24 पसलियाँ (Ribs) पायी जाती हैं। ये अस्थियाँ वक्ष में स्टरनम नामक अस्थि पर आकर जुड़ती हैं। इस प्रकार मनुष्य के वक्ष में कुल 25 अस्थियाँ पायी जाती हैं।

इस प्रकार मनुष्य की खोपड़ी, कान, गला, मेरूदण्ड एवं वक्ष में क्रमशः 22, 6, 1, 26 व 25 अस्थियाँ होती है। कुल मिलाकर मानव शरीर के अक्षीय कंकाल तंत्र में 80 अस्थियों का समावेश होता है।

2.2.2 उपांगीय कंकाल तंत्र (Appendicular Skeletal System)

आपका यह जानना आवश्यक है कि, मानव शरीर में उपांगीय कंकाल तंत्र के अन्तर्गत हाथों एवं पैरों की अस्थियों का वर्णन आता है। मनुष्य के दोनों हाथों एवं दोनों पैरों में कुल 126 अस्थियों का समावेश होता है इनका सविस्तार वर्णन इस प्रकार है—

I) **हाथों की अस्थियाँ (Bones in Hand)** — मनुष्य के एक हाथ में कुल 32 अस्थियाँ होती हैं। कन्धे के जोड़ (Pectoral Girdle) में दो अस्थियाँ, भुजा में एक ह्यूमरस (Humerus), अग्रबाहु में दो—रेडियस और अल्ना (Radius & Ulna), कलाई में आठ, हथेली में पाँच तथा अंगुलियों में 14 अस्थियाँ पायी जाती हैं। इस प्रकार मनुष्य के एक हाथ में 32 एवं दोनों हाथों में 64 अस्थियाँ होती हैं।

II) **पैरों की अस्थियाँ (Bones in Leg)** — मनुष्य के एक पैर में कुल 31 अस्थियाँ होती हैं। पैर के जोड़ (कुल्हा) में एक अस्थि (Pelvic Girdle), जांघ में एक अस्थि—फीमर (Femur), घुटने में एक अस्थि—पटेला (Patella), टांग में दो अस्थियाँ—टिबिया एवं फिब्यूला (Tibia & Fibula), पैर में बारह अस्थियाँ एवं पैर की अंगुलियों में चौदह अस्थियाँ पायी जाती हैं। इस प्रकार मनुष्य के एक पैर में 31 तथा दोनों पैरों में कुल 62 अस्थियाँ पायी जाती हैं।

> मनुष्य के दोनों हाथों में 64 एवं दोनों पैरों में 62 अस्थियाँ (कुल 126 अस्थियाँ) होती हैं जिनका अध्ययन उपांगीय कंकाल तंत्र के अंतर्गत किया जाता है।

मानव शरीर में अस्थियों का आकार अलग—अलग होता है। आकार के अनुसार प्रमुख अस्थियों की मानव शरीर में स्थिति इस प्रकार है —

क्रमांक	अस्थियों के प्रकार	मानव शरीर में स्थान
1	Long Bones	हाथ एवं पैर
2	Short Bones	कलाई एवं टखना
3	Flat Bone	स्टसम और क्रेनियम
4	Irregular Bone	मेरुदण्ड
5	Sesamoid Bone	पैर का टखना

टिप्पणी

2.3 मानव अस्थि की आन्तरिक संरचना (Structure of Bone)

प्रिय शिक्षार्थियों, आपको यह जानना चाहिए कि एक पूर्ण रूप से विकसित अस्थि में 25 प्रतिशत भाग जल एवं 75 प्रतिशत भाग ठोस होता है। अस्थि के ठोस भाग में कार्बनिक (Organic) एवं अकार्बनिक (Inorganic) पदार्थ होते हैं। कार्बनिक पदार्थ से अभिप्राय उन तत्वों से है, जिनमें कार्बन तत्व विद्यमान होता है। अस्थि के कार्बनिक पदार्थों में **प्रोटीन** प्रमुख रूप से होता है। मानव शरीर की अस्थियों में प्रमुख रूप से ओसीन नामक प्रोटीन (Ossein Protein) पाया जाता है। इसके साथ–साथ म्यूको प्रोटीन तथा कॉलेजन Collegen) प्रोटीन भी अस्थि में विद्यमान होते हैं। प्रोटीन के कारण अस्थि में लचीलापन (Flexibility) पाया जाता है। मनुष्य की अस्थि का 40 प्रतिशत भाग कार्बनिक पदार्थ अर्थात् प्रोटीन होता है जबकि लगभग 60 प्रतिशत भाग अकार्बनिक पदार्थ अर्थात् कैल्शियम और फॉफोरस आदि तत्व होते हैं।

अस्थि

कार्बनिक भाग	अकार्बनिक भाग
(ओसीन प्रोटीन)	(कैल्शियम और फॉस्फोरस)
40–35 प्रतिशत भाग	60–65 प्रतिशत भाग
(लचीलापन)	(दृढ़ता एवं कठोरता)

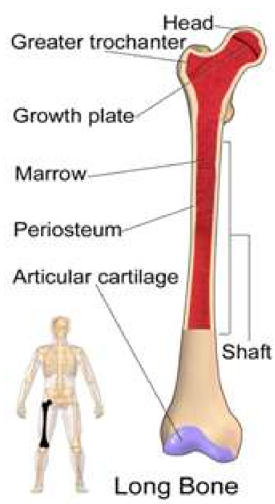

चित्र 2.3 : अस्थि की संरचना

अस्थि का दूसरा महत्वपूर्ण भाग अकार्बनिक पदार्थ (Inorganic Matter) है, जो लगभग 60 प्रतिशत होता है। इन अकार्बनिक पदार्थों में कैल्शियम, फॉस्फोरस तथा मैग्नीशियम प्रमुख तत्व हैं। अस्थि में कैल्शियम, फॉस्फोरस एवं मैग्नीशियम के कार्बोनेट तथा फॉस्फेट पाये

टिप्पणी

जाते हैं तथा इनके साथ—साथ पौटेशियम, सोडियम, क्लोरीन, फ्लोरीन, आयरन आदि तत्व भी अल्प मात्रा में अस्थि में विद्यमान रहते हैं। अकार्बनिक पदार्थ अस्थि को कठोरता एवं दृढ़ता प्रदान करने का कार्य करते हैं।

2.3.1 अस्थि मज्जा (Bone Marrow)

लम्बी अस्थियों के मध्य में कोशिकामय एवं तन्तुमय रिक्त स्थान पाया जाता है। इस स्थान को अस्थि मज्जा (Bone Marrow) कहा जाता है। अस्थि मज्जा दो प्रकार की होती है—

अस्थि मज्जा

↓

लाल अस्थि मज्जा **(Red Bone Marrow)** | पीली अस्थि मज्जा **(Yellow Bone Marrow)**

1. **लाल अस्थि मज्जा—** लाल अस्थि मज्जा लाल रक्त कणों (R.B.Cs) का निर्माण करती है। लाल रक्त कणों की अधिक उपस्थिति के कारण अस्थि का यह भाग लाल रंग का दिखाई देता है।

2. **पीली अस्थि मज्जा—** पीली अस्थि मज्जा में श्वेत रक्त कणों (W.B.Cs) का निर्माण होता है तथा इसमें वसा भी उपस्थित होती है। अस्थि के इस भाग का रंग पीला दिखाई देता है।

अस्थि मज्जा में आर0बी0सी0 व डब्ल्यू0बी0सी0 के साथ—साथ प्लेटलेट्स (Platelets) भी बनते हैं तथा प्लाज्मा प्रोटीन का निर्माण भी इसी स्थान अर्थात् अस्थि मज्जा में होता है।

यूनिटगत प्रश्न 2.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

1) मानव शरीर में अस्थियों की कुल संख्या .... होती है।

2) मनुष्य की रीढ़ में बाल्यावस्था में .... कशेरूकाएं एवं व्यस्क अवस्था में .... कशेरुकाएं होती हैं।

3) मनुष्य के दोनों पैरों में कुल .... अस्थियों का समावेश होता है।

4) मानव कपाल में .... अस्थियों का समावेश होता है।

5) .... अस्थि मानव शरीर की सबसे छोटी अस्थि होती है।

टिप्पणी

ख) सही विकल्प चुनिए—

1) मानव शरीर की सबसे लम्बी अस्थि है—

a)	फीमर	b)	ह्यूमरस
c)	स्टेप्स	d)	रेडियस

2) मानव कंकाल तंत्र का कार्य है—

a)	शरीर का आधारभूत ढांचा	b)	कोमल अंगों को सुरक्षा
c)	रक्त कणों का निर्माण	d)	सभी

3) अस्थियों को पेशियों से जोड़ने वाला तन्तु है—

a)	लिगामेण्ट	b)	टेण्डोन
c)	न्यूरॉन	d)	नेफ्रॉन

4) मानव शरीर में बाहु की अस्थि है—

a)	ह्यूमरस	b)	फीमर
c)	रेडियस	d)	अल्ना

5) श्वेत रक्त कणों का निर्माण कहां होता है—

a)	लाल अस्थि मज्जा	b)	पीत अस्थि मज्जा
c)	श्वेत अस्थि मज्जा	d)	केन्द्रक

ग) सुमेलित करते हुए सही कूट का प्रयोग करें—

1)	ग्रीवा प्रदेश (Cervical)	a)	12
2)	वक्षीय प्रदेश (Thoracic)	b)	05
3)	कटि (Lumber)	c)	01
4)	सैकरम (Sacrum)	d)	07
5)	कॉक्सिक (Coccyx)	e)	01

2.4 संधि या जोड़ (Joints)

मानव शरीर में छोटी—बड़ी, पतली—लम्बी, गोल—चपटी, चौड़ी—मोटी आदि भिन्न—भिन्न आकार की कुल 206 अस्थियाँ बहुत सुव्यवस्थित रूप से आपस में जुड़ी होती हैं। वह स्थान जहां दो या दो से अधिक अस्थियाँ आपस में जुड़ती हैं, संधि या जोड़ (Joints) कहलाता है। संधि या जोड़ मानव शरीर के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि इनके द्वारा ही मानव शरीर में गति संभव हो पाती है। वास्तविक तथ्य यह है कि यदि अस्थियों में जोड़ नहीं हो, तो

मानव शरीर की स्थिति भी एक गतिहीन पुतले के समान हो जायेगी। सम्पूर्ण मानव शरीर में एकमात्र गले में उपस्थित हॉयड नामक अस्थि किसी अन्य अस्थि से नहीं जुड़ी होती है। इसके अतिरिक्त शरीर की अन्य सभी अस्थियों के सिरे एक दूसरे के साथ जुड़े होते हैं अर्थात् अन्य सभी अस्थियों में संधियाँ पायी जाती है।

A **joint** or **articulation** (or **articular surface**) is the connection made between bones in the body which link the skeletal system into a functional whole. They are constructed to allow for different degrees and types of movement. Some joints, such as the knee, elbow, and shoulder, are self-lubricating, almost frictionless, and are able to withstand compression and maintain heavy loads while still executing smooth and precise movements. Other joints such as sutures between the bones of the skull permit very little movement (only during birth) in order to protect the brain and the sense organs. The connection between a tooth and the jawbone is also called a joint, and is described as a fibrous joint known as a gomphosis. Joints are classified both structurally and functionally.

संधियों के संरचना के आधार पर संधियों को निम्नलिखित तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है–

संधि

तन्तुमय संधियाँ **(Fiberous Joints)**	उपास्थिमय संधियाँ **(Cartilaginous)**	सायनोवियल संधियाँ **(Synovial Joints)**

2.4.1 तन्तुमय संधियाँ (Fiberous Joints)

संधियों का वह वर्ग जिसमें संधि गुहा का (Joint Cavity) अभाव होता है तथा तन्तुओं के द्वारा दो अस्थियाँ आपस में कसकर जुड़ी होती हैं, तन्तुमय संधियाँ कहलाती हैं। मनुष्य में अस्थि को अस्थि से जोड़ने वाला तन्तु लिगामेण्ट (Ligament) कहलाता है, जबकि अस्थियों को पेशियों से जोड़ने वाला तन्तु टेण्डोन (Tendon) कहलाता है। लिगामेण्ट अस्थियों के सिरों एवं टेण्डोन अस्थियों को पेशियों से रस्सी की तरह दृढ़तापूर्वक बाँधने का कार्य करता है।

2.4.2 उपास्थिमय संधियाँ (Cartilaginous Joints)

संधियों का वह वर्ग जहां संधिगुहा (Joint Cavity) का अभाव होता है तथा दो अस्थियों के मध्य एक उपास्थि गद्‌दी के रूप में उपस्थित होती है, उपास्थिमय संधियाँ कहलाती हैं।

टिप्पणी

2.4.3 सायनोवियल संधियाँ (Synovial Joints)

संधियों का वह वर्ग जहां अस्थियों के सिरों पर संधिगुहा (Joint Cavity) पायी जाती है तथा इस संधिगुहा में अस्थियों के सिरों को चिकनाहट (Lubrication) प्रदान करने के सायनोवियल फ्लोइड (Synovial Fluid) उपस्थित होता है, सायनोवियल संधियाँ कहलाती हैं।

> मानव शरीर में अधिकांश संधियाँ सायनोवियल संधियाँ होती हैं।
>
> "Maximum Joints in Human body are Synovial Joints."

प्रिय शिक्षार्थियों, संरचना के साथ–साथ गति के आधार पर भी मानव शरीर की संधियों को निम्नलिखित तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है–

संधि
- अचल संधियाँ **(Fixed Joints)**
- अल्पचल संधियाँ **(Immovable or Slightly Movable Joints)**
- सचल संधियाँ **(Movable Joints or Perfect Joints)**

2.4.4 अचल संधियाँ (Fixed Joints)

संधियों का वह वर्ग जिसमें दो अस्थियाँ आपस में इस प्रकार जुड़ी होती हैं कि इनके मध्य किसी प्रकार की गति का होना संभव नहीं होता है, अचल संधियाँ कहलाती हैं। उदाहरण के लिए– मस्तिष्क को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करने वाली खोपड़ी की संधियाँ एवं चेहरे की अस्थियों की संधियाँ।

2.4.5 अल्पचल संधियाँ (Immovable or Slightly Movable Joints)

संधियों का वह वर्ग जिसमें दो अथवा दो से अधिक अस्थियाँ आपस में इस प्रकार जुड़ी होती हैं कि इनके मध्य अल्पमात्रा में ही गति संभव होती है, अल्पचल संधियाँ कहलाती हैं। उदाहरण के लिए– रीड़ की कशेरूकाओं के मध्य की संधियाँ।

2.4.6 सचल संधियाँ (Movable Joints or Perfect Joints)

संधियों का वह वर्ग जिसमें दो अथवा दो से अधिक अस्थियाँ आपस में इस प्रकार जुड़ी होती हैं कि इनके मध्य पूर्ण रूप से गति संभव होती है अर्थात् इन अस्थियों के मध्य पूर्ण रूप से गति करने की स्वतंत्रता (Fredy Movement) होती है। उदाहरण के लिए– कंधे एवं कूल्हे का जोड़।

- कन्धे (Pectoral Girdle) और कूल्हे अर्थात् श्रोणिमेखला में बॉल और सॉकेट संधि (Ball and Socket Joint) होती है।

- कोहनी, घुटनों एवं पैरों पर कब्जा संधि (Hinge Joint) होती है।
- मेरूदण्ड की ऊपरी एटलस कशेरूका एवं खोपड़ी में खूटीदार या धुराग्र संधि (Pivotal Joint) होती है।

यूनिटगत प्रश्न 2.2

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

क) वह स्थान, जहाँ दो या दो से अधिक अस्थियां आपस में आकर जुड़ती हैं .... कहलाता है।

ख) संधियों की संरचना के आधार पर, संधियां तीन प्रकार की होती हैं—

1. तंतुमय संधियां, 2. उपास्थिमय संधियां

3. ....

ग) गति के आधार पर संधियां, तीन प्रकार की होती हैं—

1. अचल संधि, 2. .... 3. सचल संधि।

2.5 अस्थि तंत्र पर योग का प्रभाव

वर्तमान समय विज्ञान का युग है। इस वैज्ञानिक युग में विज्ञान ने आधुनिक मानव जीवन को भौतिक सुख—सुविधाओं (Luxurious Life) से सम्पन्न और परिपूर्ण बना दिया है। आज के वैज्ञानिक मशीनरी युग ने मनुष्य के शारीरिक श्रम को इतना कम कर दिया है कि शरीर की अस्थियों एवं जोडों की क्रियाशीलता अच्छी प्रकार नहीं हो पाती है। मशीनों पर निर्भरता बढ़ने के फलस्वरुप मनुष्य में आलस्य, भारीपन, अस्थियों में कड़ापन एवं अस्थितंत्र व जोड़ों के विकार, बहुत तेजी से फैलते जा रहे हैं। शारीरिक श्रम में कमी के फलस्वरुप शरीर से पसीना नहीं निकल पा रहा है जिस कारण आज के विकसित एवं सभ्य समाज में अनेक प्रकार के नये—नये अस्थियों एवं जोड़ों से सम्बन्धित रोगों की एक बाढ़ सी आयी हुई है। इसके साथ साथ विकृत आहार—विहार, खान—पान, उत्तेजक एवं जहरीली रासायनिक दवाइयों का अधिक सेवन एवं तनाव भागदौड़ भरी स्पर्धायुक्त जीवन शैली आदि कारकों ने मानव शरीर की अस्थियों पर नकारात्मक प्रभाव रखते हुए अस्थि तंत्र के रोगों को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन सभी कारकों के कारण आज समाज के अधिकांश स्त्री एवं पुरुषों का जीवन विभिन्न प्रकार के अस्थि रोगों से जुड़ गया है। रक्त में यूरिक एसिड बढ़ने की मात्रा के साथ जोड़ों का दर्द, सूजन, कमरदर्द, सर्वाइकल, स्लिपडिस्क, गठिया, आर्थराइटिस आदि अस्थि तंत्र के रोग आधुनिक समाज में आम रोग बनते जा रहे हैं।

टिप्पणी

इनसे बचने के लिए अनेक प्रकार की रासायनिक दर्दनिवारक (Pain Killer) दवाइयों का प्रयोग भी समाज में तेजी से बढ़ा है जो अत्यन्त हानिकारक प्रभाव शरीर पर डालता है। कुछ समय के लिए दर्द में आराम देने तो मिल जाता है, किन्तु अधिक समय तक नियमित सेवन करने पर पेन किलर भी असर करना बंद कर देता है। यहाँ पर योगाभ्यास अर्थात यौगिक क्रियाओं का अभ्यास लाभकारी, दुष्प्रभावरहित एवं श्रेष्ठ विकल्प रखता है। विधिपूर्वक यौगिक क्रियाओं का नियमित अभ्यास मानव अस्थि तंत्र एवं सन्धियों पर सीधा एवं सकारात्मक प्रभाव करता है। शुद्ध सात्विक आहार, नियमित परिश्रम, सकारात्मक सोच–विचार के साथ यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से अस्थि तंत्र की क्रियाशीलता उन्नत रहती है एवं शरीर हल्का एवं स्वस्थ रहता है। नियमित यौगिक क्रियाओं का विधिपूर्वक अभ्यास करने से अस्थि तंत्र सभी प्रकार के विकारों एवं रोगों से मुक्त रहता है तथा शरीर स्वस्थ, सुन्दर एवं ऊर्जावान बना रहता है। अस्थि तंत्र पर यौगिक क्रियाओं (हठयोग के सप्त साधनों) के प्रभाव का अध्ययन इस प्रकार किया जा सकता है–

1. **षट्कर्म का प्रभाव**– योग में धौति, बस्ति, नेति, नौली, त्राटक एवं कपालभाति नामक छः शोधन क्रियाओं का वर्णन शरीर की शुद्धि हेतु किया गया है। इन क्रियाओं का अभ्यास करने से शरीर से विषाक्त पदार्थ बाहर निकलते हैं एवं वात पित्त एवं कफ नामक त्रिदोषों मे समता उत्पन्न होती है। इन शोधन क्रियाओं का शरीर की क्षमता एवं आवश्यकतानुसार विधिपूर्वक अभ्यास करने से शरीर, रक्त एवं अस्थियों में उपस्थित विषाक्त तत्व बाहर निकलते हैं एवं त्रिदोषों में संतुलन उत्पन्न होता है।

   शरीर में अनावश्यक चर्बी, मेद एवं श्लेष्मा एकत्र हो जाने पर शरीर का वजन बढ़ जाता है। शरीर का वजन बढ़ने पर अस्थियों पर अनावश्यक भार एवं दबाव बढ़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप अस्थियों एवं संधियों में दर्द, सूजन, जकड़न, भारीपन आदि रोग उत्पन्न होने लगते हैं। ऐसी अवस्था में षट्कर्मों का अभ्यास विशेष रूप से धौति क्रिया करने से अनावश्यक चर्बी नष्ट होती है व विषाक्त तत्व बाहर निकलते हैं, जिससे शरीर का वजन (Body weight) कम होता है तथा अस्थि तंत्र स्वस्थ बनता है।

   अस्थि तंत्र के अनेक रोग जैसे– गठिया, दर्द, जकड़न, सूजन आदि का मूल कारण वात दोष की विकृति होती है। शोधन क्रियाओं में वर्णित बस्ति क्रिया का अभ्यास करने से वात दोष की विकृति दूर होती है और इन रोगों में तुरन्त लाभ प्राप्त होता है। आयुर्वेद शास्त्र में भी स्पष्ट किया गया है कि बस्ति कर्म वात दोष की श्रेष्ठ चिकित्सा होती है। अर्थात् बस्ति कर्म के अभ्यास से अस्थि तंत्र के विभिन्न रोगों में लाभ प्राप्त होता है।

   इसी प्रकार शोधन क्रिया के अन्तर्गत वर्णित कपालभाति क्रिया का अभ्यास अस्थियों पर अच्छा प्रभाव रखता है। कपालभाति का अभ्यास करने से विषाक्त पदार्थ तेजी से शरीर से बाहर निकलते हैं, शरीर की अनावश्यक चर्बी समाप्त होती है एवं अनावश्यक रूप से बढ़ा वजन सन्तुलित होता है। इसके फलस्वरूप शरीर का वजन कम होने से अस्थियों पर कम दबाव पड़ता है और अस्थि तंत्र स्वस्थ व सक्रिय बनता है।

टिप्पणी

2. **आसन का प्रभाव–** अस्थि तंत्र पर योगासन सीधा एवं सकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

योग के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ घेरण्ड संहिता में महर्षि घेरण्ड यौगिक क्रियाओं के प्रभाव पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं–

षट्कर्मणा शोधनं च आसनेन भवेद्दृढम्। मुद्रया स्थिरता चैव प्रत्याहारेण धीरता।।

(घेरण्ड संहिता 1/10)

अर्थात् षट्कर्मों का अभ्यास करने से शरीर की शुद्धि एवं आसनों का अभ्यास करने से शरीर में दृढ़ता उत्पन्न होती है। मुद्राओं के अभ्यास से स्थिरता एवं प्रत्याहार का पालन धैर्य प्रदान करता है।

योग साधना मार्ग में आगे बढ़ने हेतु साधक को जिस दृढ़ता की आवश्यकता होती है, वह आसन प्रदान करते हैं। आसन के लाभों पर प्रकाश डालते हुए योगदर्शनकार महर्षि पतंजलि कहते हैं–

ततो द्वन्द्वानभिघातः।।

(पा0 यो0 सू0 2/48)

अर्थात् आसनों का अभ्यास करने से साधक में द्वन्द्व सहन करने की क्षमता का विकास होता है। इस प्रकार आसनों के अभ्यास से शरीर में सहनशक्ति का विकास होता है।

यहाँ पर अस्थियों को दृढ़ बनाने के उद्देश्य से एवं कंकाल तंत्र को स्वस्थ व मजबूत बनाने के सन्दर्भ में योगासनों का वर्णन किया गया है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी निःसंकोच रूप में स्वीकार करता है कि योगासनों का अस्थियों पर सीधा एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसीलिए अनेक रोगों की अवस्था में आधुनिक चिकित्सक रोगी को योगासन करने की सलाह देते हैं। नियमित योगासन करने से अस्थियों में प्रोटीन की मात्रा सन्तुलित बनी रहती है, जिसके फलस्वरूप अस्थियों में लचीलापन बना रहता है। अस्थियों के लचीला रहने से मुड़ने अथवा चोट लगने पर अस्थियों के टूटने की संभावनाएं कम हो जाती हैं। नियमित योगासन करने से अस्थियों में कैल्शियम आदि अकार्बनिक पदार्थों का अधिक संचय नहीं हो पाता तथा अस्थियाँ कठोर तथा भंगुर नहीं हो पाती हैं जो अच्छे स्वास्थ का परिचायक है।

> नियमित योगासन करने से शरीर की संधियों अर्थात् जोड़ों का लचीलापन बना रहता है, जिसके फलस्वरूप शरीर में जोड़ों से संबंधित दर्द एवं विकार जैसे– गठिया, आर्थराइटिस आदि उत्पन्न नहीं होते हैं।

योगासन करने से अस्थियों का भलीभांति विकास होता है। योगासनों का अभ्यास अस्थियों की निष्क्रियता को दूर करता हुआ सक्रियता को बढ़ाता है। नियमित योगासन करने से शरीर की अस्थियाँ पूर्ण रूप से विकसित होती हैं तथा शरीर की लम्बाई बढ़ाने में भी

योगासन (ताड़ासन, हस्तोत्तानासन, धनुरासन, चक्रासन) बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

आसनों के क्रम में सूर्य नमस्कार, प्रज्ञा योग के साथ–साथ ताड़ासन, त्रिकोणासन, गरूड़ासन, वातायनासन, वृक्षासन, सर्वांगासन, हलासन, चक्रासन, कर्णपीड़ासन, मरकटासन, नौकासन, भुजंगासन एवं धनुरासन का अभ्यास शरीर की अस्थियों पर विशेष लाभकारी प्रभाव रखता है। यहाँ पर यह सावधानी भी ध्यान में रखनी चाहिए कि कमरदर्द व स्लिपडिस्क आदि रोगों में आगे की ओर झुकने वाले आसन जैसे– पश्चिमोत्तान, पादहस्त, जानुशीर्षासन आदि का अभ्यास पूर्ण रूप से वर्जित होता है। आसन करने से शरीर की सन्तुलन शक्ति का विकास होता है। वृक्षासन, मयूरासन, बकासन और टिटिभासन करने से शरीर सन्तुलित एवं सुन्दर बनता है।

3. **मुद्रा एवं बंध का प्रभाव**– हठ योग में मुद्रा एवं बंधों को विशेष स्थान दिया जाता है। मुद्राओं एवं बंधों का अभ्यास आन्तरिक स्तर पर ऊर्जा एवं प्राण के प्रवाह को सुचारू बनाता है। अस्थि तंत्र पर भी मुद्राओं एवं बंधों का अभ्यास लाभकारी प्रभाव रखता है। महाबंध मुद्रा, महावेध मुद्रा, काकी मुद्रा, शक्तिचालनी, तड़ाकी मुद्रा आदि का अभ्यास करने से अस्थियाँ ऊर्जावान, प्राणवान, स्वस्थ एवं सक्रिय बनती हैं। इसी प्रकार त्रिबंधों (मूलबंध, उड्डियान बंध एवं जालंधर बंध) का विधिपूर्वक अभ्यास करने से भी अस्थि तंत्र स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त रहता है।

4. **प्रत्याहार का प्रभाव**– प्रत्याहार का अभिप्राय इन्द्रियों पर संयम से है। इन्द्रियों पर संयम करने से मनुष्य का आहार–विहार संयमित होता है, उसकी दिनचर्या एवं रात्रिचर्या सुव्यवस्थित बनती हैं, जिसका अच्छा प्रभाव अस्थि तंत्र पर पड़ता है। वास्तव में यदि गहराई से अध्ययन किया जाए, तो स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान समय के अधिकांश रोगों की उत्पत्ति मूल रूप से प्रत्याहार के अपालन करने से ही हो रही है। रात्रिकाल देर से सोना, सुबह देर से उठना, खान–पान पर असंयम, विकृत सोच–विचार एवं श्रमहीन जीवनशैली के फलस्वरूप मनुष्य की जीवनी शक्ति एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता दिन–प्रति–दिन क्षीण होती जा रही है और नित्य नये–नये रोग जन्म ले रहे हैं। ऐसी स्थिति में प्रत्याहार का महत्व और भी बढ़ जाता है। प्रत्याहार के अन्तर्गत प्रातः काल निश्चित समय पर उठना, निश्चित समय पर निश्चित मात्र में आहार ग्रहण करना, सुव्यवस्थित रूप से कार्यों को करना एवं रात्रिकाल में निश्चित समय पर सोने से शरीर की चयापचय दर (Balanced Metabolic Rate) संतुलित रहती है। चयापचय दर के संतुलित रहने का शरीर की अस्थियों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है एवं अस्थि तंत्र रोगमुक्त, स्वस्थ एवं सक्रिय बना रहता है।

5. **प्राणायाम का प्रभाव**– प्राणायाम का अर्थ प्राण तत्व का विस्तार करने की क्रिया से होता है। जिसका नियमित विधिपूर्वक अभ्यास करने से अधिक मात्रा में शुद्ध प्राण वायु अर्थात् ऑक्सीजन शरीर की अस्थियों को प्राप्त होती है। अधिक मात्रा में ऑक्सीजन मिलने से

टिप्पणी

अस्थियों की क्रियाशीलता एवं कार्यकुशलता में वृद्धि उत्पन्न होती है, जिसका सकारात्मक प्रभाव सम्पूर्ण अस्थि तंत्र पर पड़ता है। योगाभ्यासों के नियमित अभ्यास का उपदेश करते हुए महर्षि पतंजलि योगसूत्र में स्पष्ट करते हैं—

"स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्काराऽसेवितोदृढभूमिः।।"

(पा0यो0सू0 1/14)

अर्थात् लम्बे समय तक आदर और श्रद्धापूर्वक अभ्यास करने से दृढ़भूमि की अवस्था प्राप्त होती है।

यहां पर प्राणायाम के संदर्भ में यह स्पष्ट रूप से जानना होगा कि प्राणायाम का लम्बे समय तक श्रद्धा एवं विश्वास के साथ अभ्यास करने से लाभ प्राप्त होता है। एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि शरीर की अस्थियों की कोशिकाओं में कम मात्रा में ऑक्सीजन प्राप्त होने पर एवं विषाक्त पदार्थों की मात्रा बढ़ने पर सड़न उत्पन्न हो जाती है। इस सड़न को अस्थि रोग कहा जाता है। इस गंभीर रोग में भी प्राणायाम का अभ्यास अस्थि तंत्र को साफ—स्वच्छ एवं रोगमुक्त बनाने में विशेष लाभकारी एवं महत्वपूर्ण भूमिका वहन करता है।

वैज्ञानिक शोध—अनुसंधान यह सिद्ध करते हैं कि नियमित रूप से विधिपूर्वक अनुलोम—विलोम, नाड़ी शोधन, शीतली, शीतकारी, उज्जायी एवं भ्रामरी आदि प्राणायामों का अभ्यास करने से अस्थि तंत्र स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त रहता है। श्वास के साथ दीर्घ प्रणव जप अर्थात् ओ३म् का उच्चारण करने से भी अस्थियों पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है।

6. **ध्यान का प्रभाव**— ध्यान के द्वारा शरीर की संपूर्ण ऊर्जा को एकाग्रता एवं सकारात्मक दिशा प्रदान की जाती है। ध्यान के अभ्यास से अस्थियों को सकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है। ध्यान के अभ्यास से काम, क्रोध, तनाव, राग—द्वेष आदि संवेगों पर नियन्त्रण प्राप्त किया जाता है, जिसका अच्छा प्रभाव मानव अस्थि तंत्र एवं शरीर के जोड़ों पर पड़ता है। हर समय उत्तेजित रहने पर अथवा संवेगों को धारण करने पर मनुष्य का उसकी शरीर की अस्थियों पर नियंत्रण कम हो जाता है तथा धीर—धीरे अस्थियों में सूक्ष्म कंपन एवं अनियंत्रण की स्थिति उत्पन्न होने लगती है। ध्यान का अभ्यास करने से मनुष्य का स्वयं पर नियंत्रण स्थापित होता है। मनुष्य की सोच—विचार एवं व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन आते हैं। इन सकारात्मक परिवर्तनों के फलस्वरूप अस्थि तंत्र स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त बनता है। योग निद्रा का अभ्यास भी अस्थियों में पेशीय तनाव को कम करता हुआ अस्थि तंत्र पर लाभकारी प्रभाव रखता है।

7. **समाधि का प्रभाव**— यद्यपि समाधि योग साधना का सर्वोच्च सोपान है, जिसके प्राप्त होने पर कुछ भी शेष नहीं रहता है। वास्तव में समाधि की अवस्था में जीवात्मा स्वयं को

टिप्पणी

ब्रह्म के साथ संयुक्त कर लेता है एवं ब्रह्मानंद में लीन हो जाता है किन्तु यहां पर स्थूल रूप में समाधि को लिया गया है, जिससे अभिप्राय सकारात्मक अनुभूतियों को ग्रहण करने से लिया गया है। समाधि का सोपान करने वाला मनुष्य साधक की श्रेणी में आ जाता है। समाधि की अवस्था को प्राप्त साधक अपने चारों ओर सकारात्मक वातावरण की अनुभूति करता है। अपने चारों ओर अच्छी अनुभूति करने से उसके सम्पूर्ण अस्थि तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। सकारात्मक अनुभूति के फलस्वरूप जीवनीशक्ति उन्नत अवस्था को प्राप्त होती है और अस्थि तंत्र रोगमुक्त, स्वस्थ एवं सक्रिय बना रहता है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि योगांगों का पालन, सकारात्मक जीवनशैली एवं विधिपूर्वक यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से मनुष्य का अस्थि तंत्र ऊर्जावान, स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त रहता है। अस्थि तंत्र पर निम्नलिखित पथ्य आहार सकारात्मक एवं अपथ्य आहार नकारात्मक प्रभाव रखता है—

- पथ्य आहार— चोकर युक्त आटे की रोटियाँ एवं शुद्ध सात्विक हल्का सुपाच्य भोजन, हरी पत्तेदार सब्ज़ियाँ, मौसमी फल, दूध एवं दूध से बने पदार्थ जैसे— पनीर, घी, मक्खन आदि, सूखे मेवे जैसे— बादाम, मुनक्का, किशमिश, काजू, अखरोट आदि एवं निश्चित समय पर शुद्ध—सात्विक आहार । कैल्शियम प्रधान खाद्य पदार्थ जैसे— रागी, बादाम, अंजीर, सोयाबीन, आँवला, तिल आदि का सेवन।
- अपथ्य आहार— समुद्री नमक, चाय, कॉफी, चीनी, धूम्रपान, मद्यपान सभी प्रकार के कृत्रिम रासायनिक शीतल पेय (कोल्ड ड्रिंक्स), मैदे से बनी वस्तुएं, ब्रैड, नमकीन, बिस्किट, तला—भुना राजसिक व तामसिक भोजन, चाइनीज भोजन जैसे— चाऊमीन, मोमोज़, पिज्जा, बर्गर, फ्रिज का ठण्डा पानी, आइसक्रीम, डिब्बा बंद आहार (Packed Food), बासी भोजन, मिर्च मसाले युक्त राजसिक एवं तामसिक आहार। समुद्री नमक अस्थियों पर बहुत नकारात्मक प्रभाव डालता है।

यूनिटगत प्रश्न 2.3

सही विकल्प चुनिए—

1. षट्कर्म क्रियाओं के अभ्यास से शरीर में संचित .... पदार्थ बाहर निकलते हैं। (विषाक्त/शुद्ध)
2. षट्कर्म अभ्यास से शरीर शुद्धि और आसनों के अभ्यास से शरीर में .... उत्पन्न होती है। (दृढ़ता/कोमलता)
3. ध्यान के अभ्यास से मनुष्य के सोच विचार एवं व्यवहार में .... परिवर्तन आते हैं। (सकारात्मक/नकारात्मक)

4. कमर दर्द में लाभकारी दो प्रमुख आसन–भुजंगासन और .... आसन हैं–
(मरकट आसन/पश्चिमोत्तान आसन)

आपने क्या सीखा?

इस यूनिट में आपने सीखा कि अस्थि तंत्र मानव शरीर को मूलभूत ढांचा प्रदान करता है, जिसके अंतर्गत **206 अस्थियों** का समावेश होता है। अस्थि तंत्र को अक्षीय कंकाल एवं उपांगीय कंकाल तंत्र के रूप में बांटकर अध्ययन किया जाता है। अक्षीय कंकाल में कुल 80 अस्थियाँ तथा उपांगीय कंकाल में कुल 126 अस्थियों का वर्णन आता है। अस्थियों के आपस में जुड़ने से संधियों का निर्माण होता है। मानव शरीर में तीन प्रकार की संधियाँ पायी जाती हैं। अस्थि तंत्र एवं संधियों पर योग एवं यौगिक क्रियाओं की सविस्तार व्याख्या की गई है। सुव्यवस्थित एवं अनुशासित दिनचर्या, नियमित योगाभ्यास जैसे– योगासन, प्राणायाम व ध्यानादि एवं शुद्ध सात्विक आहार का सेवन करने से अस्थि तंत्र स्वस्थ, सक्रिय, रोगमुक्त एवं ऊर्जावान बना रहता है।

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव अस्थि तंत्र को समझाते हुये, इस पर यौगिक प्रभाव लिखिये।
2. मानव अस्थि तंत्र को प्रभावित करने वाले योगासनों एवं पथ्य–अपथ्य आहार को सविस्तार समझाइये।
3. अस्थि तंत्र के कार्यों का सविस्तार वर्णन कीजिए।
4. मानव शरीर की प्रमुख संधियों को सविस्तार समझाइये।

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

2.1

क		ख		ग	
1.	206	1)	A	1)	d
2.	33, 26	2)	D	2)	a
3.	62	3)	B	3)	b
4.	22	4)	A	4)	c

टिप्पणी

5.	स्टेप्स	5) C	5) e	

2.2

क. संधि ख. साइनोवियल संधियां ग. अल्पचल संधि

2.3

1. विषाक्त 2. दृढ़ता 3. सकारात्मक 4. मरकट आसन

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजू तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0)।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ़।

3

पेशीय तंत्र की संरचना–क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

अभी तक हमने पिछली यूनिट में मानव शरीर के महत्वपूर्ण अस्थि संस्थान के विषय में जाना। और जाना कि, मानव शरीर का निर्माण 206 अस्थियों के मिलने से होता है। 206 अस्थियां आपस में मिलकर शरीर का मूल संरचनात्मक ढांचा (Body Frame Structure) बना देती हैं, किन्तु यह ढांचा तब–तक गतिहीन अथवा क्रियाहीन (Actionless) अर्थात् कार्य करने में असमर्थ रहता है, जब–तक अस्थियों के साथ पेशियां जुड़ नहीं पाती हैं। **पेशियां शरीर की अस्थियों के साथ जुड़कर मानव शरीर को आन्तरिक एवं बाह्य रूप से गतिशील अर्थात् क्रियाशील करने में सक्षम बनाने का महत्वपूर्ण कार्य करती हैं।** मानव शरीर में होने वाली समस्त ऐच्छिक और अनैच्छिक क्रियाओं का आधार पेशियां होती हैं। पेशियों के द्वारा ही मनुष्य एक ओर जहां पैरों से चलना, मुँह के द्वारा बोलना और हाथों के द्वारा विभिन्न सामान उठाना आदि ऐच्छिक कार्यों को पूर्ण करता है तो वहीं दूसरी ओर पलकों का झपकना, श्वास लेना, भोजन का पचना आदि स्वतः होने वाली क्रियाओं अर्थात् अनैच्छिक कार्यों का आधार भी पेशियां ही होती हैं। सरल शब्दों में स्पष्ट करें तो पेशियों की क्रियाशीलता के अभाव में मनुष्य शरीर एक गतिहीन पुतला बन जाता है जिसमें कोई भी बाहरी एवं आन्तरिक गति संभव नहीं होती है। मानव शरीर में विभिन्न पेशियों के मिलने से पेशीय तंत्र की उत्पत्ति होती है।

प्रिय शिक्षार्थियों, पेशीय तंत्र के स्वरुप एवं मानव शरीर में इसके महत्व को जानने के उपरान्त अब आपके मन में पेशीय तंत्र को विस्तार पूर्वक समझने तथा मानव शरीर में विभिन्न प्रकार की पेशियों को जानने की जिज्ञासा उत्पन्न होनी स्वाभाविक है। इसके साथ–साथ कौन–कौन से योगाभ्यास मानव पेशीय तंत्र को प्रभावित करते हैं, यह जानने की उत्सुकता भी आपके

मन में अवश्य ही बढ़ गयी होगी। तो आइये अब हम, पेशीय तंत्र की संरचना, वर्गीकरण कार्यों एवं मानव पेशीय तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव का सविस्तार अध्ययन करें।

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

- पेशीय तंत्र का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगें;
- पेशीय तंत्र की विवेचना करने में सक्षम हो सकेंगे;
- पेशीय तंत्र का वर्गीकरण करने में सक्षम हो सकेंगे;
- पेशीय तंत्र के महत्व को समझा पायेगें;
- पेशीय तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या करने में सक्षम हो पायेगें।

3.1 मानव पेशीय तंत्र का सामान्य परिचय

मानव शरीर में पेशियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। कहने का तात्पर्य यह है कि, शरीर में पेशियों की सहायता से ही विभिन्न ऐच्छिक एवं अनैच्छिक कार्य सम्पन्न होते हैं। पेशीय तंत्र को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है–

> "मानव शरीर का वह तंत्र, जो शरीर को गतिशील बनाने का कार्य करता है, **पेशीय तंत्र** कहलाता है।"
>
> "Muscular system is the system of Human Body that provides the force for movements of all body parts."

मानव शरीर में पेशियों की संख्या के बारे में विद्वानों के अलग–अलग मत हैं। कुछ विद्वान शरीर में पेशियों की संख्या 550 तो कुछ 600 तथा कहीं पर इनकी संख्या 639 कही गयी है। इण्टरनेट पर विकिपीडिया के अनुसार मानव शरीर में लगभग 640 कंकाल पेशियां पाई जाती हैं, जो जोड़े में होती हैं। मनुष्य में लगभग 320 जोड़ी पेशियों के जोड़े उपस्थित होते हैं। इस प्रकार मानव शरीर में पेशियों की संख्या के संदर्भ में विद्वानों के मतों में विभिन्नताएं हैं, किन्तु यह तथ्य सर्वसम्मत है कि मानव शरीर के कुल वजन का 40 से 50 प्रतिशत भाग पुरूषों में एवं 30 से 40 प्रतिशत भाग महिलाओं में मांसपेशियों का बना होता है।

> An average adult male is made up of 42% of skeletal muscle and an average adult female is made up of 36% of Skeletal muscle. (as a percentage of body mass)

मानव शरीर में उपस्थित पेशियां लिगामेन्ट्स, टेण्डोन्स, ऐपोन्यूरोसिस आदि तन्तुओं के द्वारा एक–दूसरे के साथ तथा अस्थियों के साथ जुड़ी होती है। अस्थियों को पेशियों के साथ

जोड़ने वाला तन्तु टेण्डोन (Tendon) कहलाता है। टेण्डोन (Tendon) सघन कॉलेजन तन्तुओं से बने दृढ़ रस्सी के समान रचनाएं होतीं हैं जो रस्सी की भांति पेशियों को अस्थियों के साथ बांधने का कार्य करती हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि मानव शरीर में पेशियां एक दूसरे के साथ भी जुड़ी होती हैं और पेशियाँ अस्थियों के साथ भी जुड़ी रहती हैं।

3.2 पेशियों का वर्गीकरण

अब प्रश्न यह उठता है कि, मानव शरीर में कितने प्रकार की पेशियां पायी जाती हैं। पेशियों के वर्गीकरण पर विचार करें–

मानव शरीर में निम्नलिखित तीन प्रकार की पेशियां पायी जाती हैं–

पेशियां

- ऐच्छिक पेशियां **(Skeletal Muscle)**
- अनैच्छिक पेशियां **(Visceral Muscle)**
- हृद पेशियां **(Cardiac Muscle)**

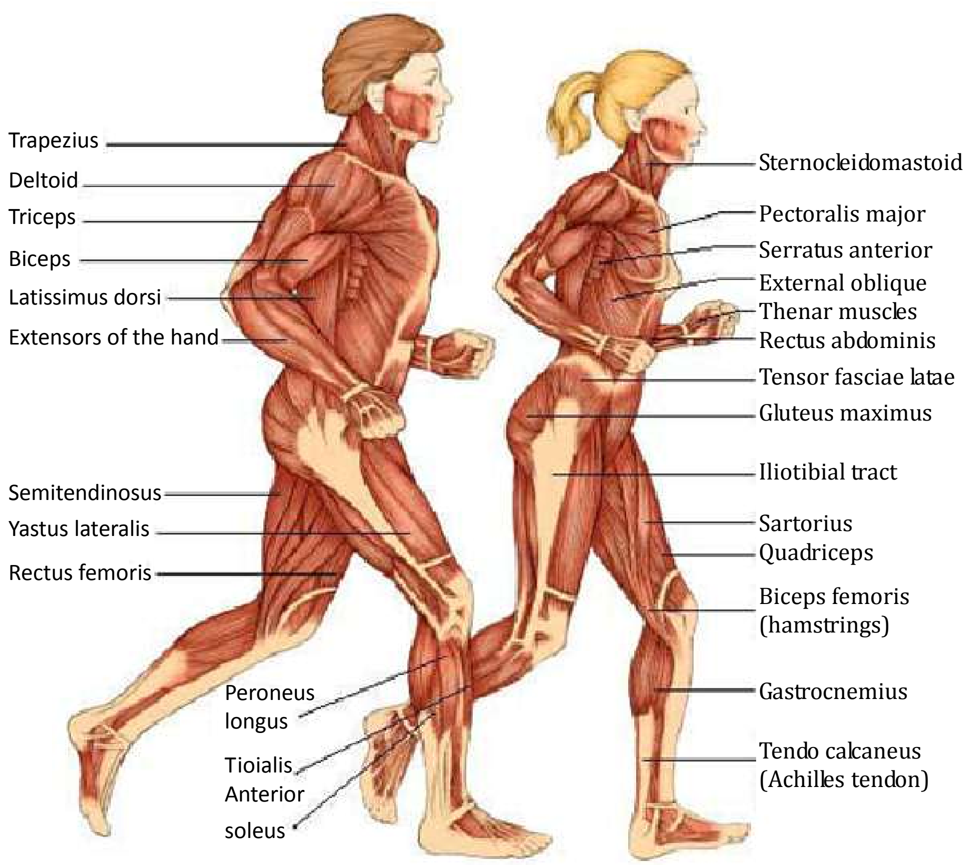

चित्र 3.1: मानव पेशीय तंत्र

टिप्पणी

3.2.1 ऐच्छिक पेशियां (Skeletal Muscle)

पेशियों का वह वर्ग, जिस पर तंत्रिका तंत्र अर्थात् मस्तिष्क का पूर्ण रूप से नियंत्रण पाया जाता है, अर्थात् जो **मस्तिष्क के अधीन होकर समस्त ऐच्छिक कार्यों को सम्पन्न करती हैं, ऐच्छिक पेशियां (Voluntary Muscle) कहलाती हैं।** इन पेशियों में सफेद एवं काली धारीयां पायी जाती है अतः इन्हें धारीधार पेशियाँ (Striated Muscle) भी कहा जाता है, इसके साथ–साथ यह पेशियां शरीर की अस्थियों के साथ अर्थात् कंकाल तंत्र के साथ जुड़कर कार्य करती हैं, अतः इन्हें कंकालीय पेशियां (Skeletal Muscle) भी कहा जाता है। ये पेशियां बीच से मोटी एवं सिरों पर पतली होती हैं तथा इनके सिरे अस्थियों के साथ जुड़े होते हैं। इनके कार्यों में कोई लयबद्धता (Rhythm) नहीं पायी जाती है, बल्कि मस्तिष्क के आदेशानुसार ये मांसपेशियां अपना कार्य करती हैं। इन मांसपेशियों द्वारा अधिक समय तक लगातार कार्य करने से इनमें थकान उत्पन्न होने लगती है।

उदाहरण– हाथों में पाये जाने वाले बाइसेप्स एवं ट्राईसेप्स पेशी तथा पैरों में पायी जाने वाली बाइसेप्स फीमोरिस, सेमीटेन्डिनोसस, गेस्ट्रोनिमीयस आदि ऐच्छिक पेशियों के उदाहरण हैं इनके द्वारा विभिन्न ऐच्छिक क्रियाएं जैसे– लिखना, चलना और दौड़ना आदि ऐच्छिक कार्य सम्पन्न होते हैं।

3.2.2 अनैच्छिक पेशियां (Visceral Muscle)

पेशियों का वह वर्ग, जिस पर ऐच्छिक तंत्रिका तंत्र का कोई नियंत्रण नहीं पाया जाता है, अर्थात् **ऐसी पेशियां जो, शरीर की आवश्यकता एवं वातावरणीय परिस्थितियों से प्रभावित होकर अनैच्छिक तंत्रिका तंत्र के अंतर्गत अपना कार्य करती हैं, अनैच्छिक पेशियां (Involuntary Muscles) कहलाती हैं।** इन पेशियों पर सफेद एवं काली धारियां नहीं पायी जाती हैं, ये चिकनी होती हैं, अतः इन्हें चिकनी पेशियां (Smooth Muscle) भी कहा जाता है। यह पेशियां अस्थियों के साथ नहीं जुड़ी होती हैं, अपितु शरीर के आँतरिक अंगों के साथ जुड़ी होती हैं, अतः इन्हें अंतरांगी पेशियां (Visceral Muscle) भी कहा जाता है। इन पेशियों की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि इनके कार्यों में एक निश्चित लयबद्धता अर्थात् क्रमबद्धता (Rhythm) पायी जाती है तथा ये पेशियां एक विशिष्ट क्रमबद्धता अर्थात् लयबद्ध रुप में अपने कार्यों को सम्पादित करती रहती हैं।

उदाहरण– अनैच्छिक पेशियां श्वसनीय पथ अर्थात् श्वास नलिका, डॉयफ्राम, आहार नलिका, आँतों, मूत्राशय, गर्भाशय एवं नेत्र आदि में पायी जाती हैं। इनके द्वारा विभिन्न अनैच्छिक क्रियाएं जैसे श्वसन, पाचन, उत्सर्जन एवं पलकों का झपकना लयबद्ध रुप से होती रहती हैं।

3.2.3 हृद पेशियां (Cardiac Muscle)

मानव शरीर में स्थित पेशियों का एक ऐसा विशेष वर्ग है जो, उपरोक्त ऐच्छिक एवं अनैच्छिक दोनों प्रकार की पेशियों से, कुछ समानताएं और कुछ विभिन्नताएं रखता है। ये हृद पेशियां

कहलाती है। इन हृद पेशियों में एक ओर जहां ऐच्छिक पेशियों की भांति धारियां (Striae) पायी जाती है, तो वहीं दूसरी ओर अनैच्छिक पेशियों की तरह हृद पेशियां लयबद्ध रूप (Rhythm) में अपना कार्य करती हैं। यहां पर यह महत्वपूर्ण तथ्य भी स्मरण रखना चाहिए कि हृद पेशियां मानव शरीर की सबसे शक्तिशाली पेशियां (Strongest Muscle) होती हैं तथा इन पेशियों में निरन्तर ऊर्जा प्रदान करने के लिए बहुत अधिक संख्या में माइटोकॉन्ड्रिया पाये जाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि हृद पेशियां एक विशेष प्रकार की पेशियां होती है जिनसे हृदय का निर्माण होता है।

> हृद पेशियों की सबसे प्रमुख विशेषता यह होती है कि ये जन्म के साथ ही सक्रिय हो जाती हैं, अर्थात् अपना कार्य करने लगती हैं तथा इसके उपरान्त जीवन भर ये पेशियां निरन्तर अपने कार्यों में लगी रहती हैं। इन पेशियों का सक्रिय होना ही जीवन (Life) एवं निष्क्रिय होना ही मृत्यु (Death) कहलाता है।

उदाहरण– इस वर्ग की पेशियां केवल हृदय में उपस्थित होती हैं तथा ये पेशियां मिलकर मनुष्य के हृदय का निर्माण करती हैं। हृदय को क्रियाशील बनाए रखना इन पेशियों का एकमात्र महत्वपूर्ण कार्य होता है। यह पेशियां प्रतिक्षण अपने इस कार्य में लगी रहती हैं, इनको पेशियों की क्रियाशीलता के कारण हृदय प्रतिक्षण क्रियाशील बने रहते हुए सम्पूर्ण शरीर में रक्त भेजता रहता है।

यूनिटगत प्रश्न 3.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. मानव शरीर में .... प्रकार की पेशियां होती हैं।
2. पेशीय तंत्र मानव शरीर को .... प्रदान करता है।
3. .... पेशियों को धारीदार पेशियां भी कहा जाता है।
4. .... की क्रिया में पेशी फैल जाती है।
5. योग में उदर की मांसपेशियों को चलाने की क्रिया .... कहलाती है।

ख) सही विकल्प चुनिए –

1. मानव शरीर में पेशियों का कार्य नहीं है–

   a) गतिशीलता प्रदान करना b) बल एवं शक्ति प्रदान करना

   c) रक्त कणों का निर्माण करना d) चलना व दौड़ना

2. युवकों के शरीर के भार का कितने प्रतिशत भार पेशियां बनाती हैं–

   a) 40 से 50 प्रतिशत b) 30 से 40 प्रतिशत

   c) 25 से 35 प्रतिशत d) 60 से 70 प्रतिशत

टिप्पणी

3) महर्षि घेरण्ड के अनुसार स्थिरता प्राप्त करने का प्रमुख साधन है—

a) आसन का अभ्यास b) प्राणायाम का अभ्यास

c) ध्यान का अभ्यास d) मुद्राओं का अभ्यास

4) ऐच्छिक पेशियां कहलाती है—

a) धारीदार पेशियां b) कंकालीय पेशियां

c) तंत्रिकीय पेशियां d) सभी

5) पेशियों में थकान एवं भारीपन का कारण होता है—

a) लैक्टिक ऐसिड b) हाइड्रोक्लोरिक ऐसिड

c) सल्फ्यूरिक ऐसिड d) रक्त

3.3 मानव पेशियों की संरचना

मानव शरीर में आकुंचन एवं प्रसार का गुण रखने वाली सूत्रवत रचनाएं होती हैं जो शरीर के विभिन्न अंगों के साथ जुड़कर उस अंग का आकार बदलने की क्षमता रखती हैं। यह रचना पेशी कहलाती है। यह सम्पूर्ण शरीर में फैली होती हैं, जिनका कार्य शरीर को क्रियाशील बनाना होता है। पेशियों के सिरों में फैलने एवं सिकुड़ने का गुण होता है। इस विशेषता के कारण पेशियां एक बार में फैल जाती हैं जबकि इसके बाद पेशियों के सिरों में सिकुड़न उत्पन्न हो जाती है जिस कारण ये छोटी हो जाती हैं।

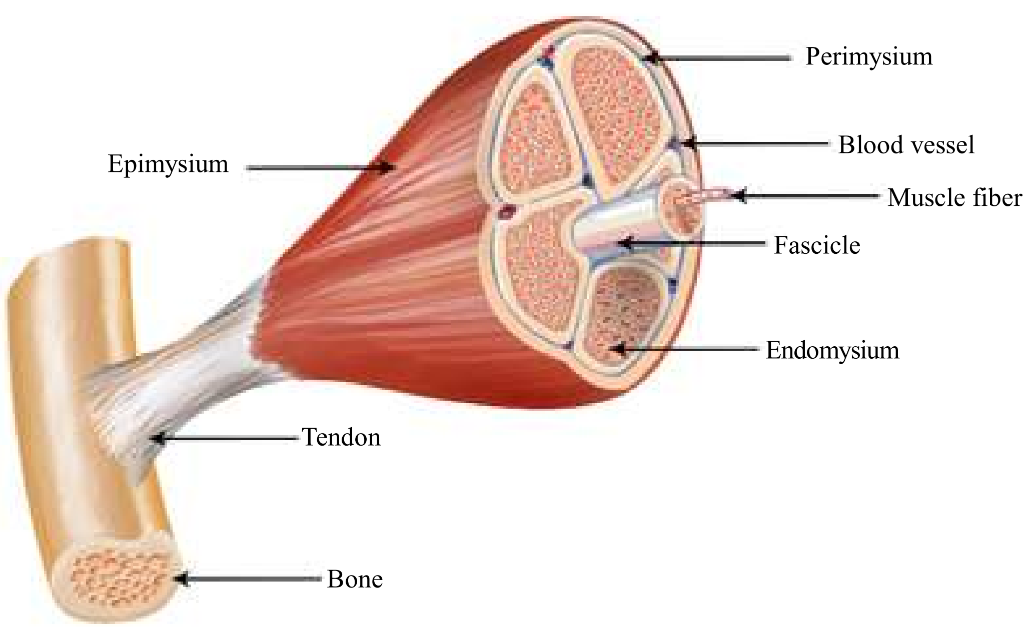

चित्र 3.2: कंकाल पेशी की संरचना

टिप्पणी

3.4 मानव पेशियों की क्रियाविधि (Muscle Physiology)

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर की प्रत्येक पेशी में प्रसार एवं आकुंचन (Extention and Contraction) नामक दो क्रियाएं होती हैं। ये दोनों क्रियाएं एक–दूसरे के पूरक अर्थात् पूर्ण रूप से विपरीत होती हैं। प्रसार की क्रिया में पेशियां फैल जाती हैं। इसके विपरीत आकुंचन के अंतर्गत पेशियां सिकुड़ जाती हैं। शरीर की सभी ऐच्छिक, अनैच्छिक एवं हृद पेशियों में गति का आधार उपरोक्त दोनों क्रियाएं होती हैं। पेशी में प्रसार एवं आकुंचन क्रिया के फलस्वरुप शरीर के आन्तरिक और बाह्य अंग क्रियाशील बनते हैं। यदि हम व्यावहारिक रूप में भी अनुभव करें तो किसी भी कार्य को करने के लिए हम अपने हाथ अथवा पैर की पेशी को पहले फैलाते हैं, तत्पश्चात् उस पेशी को संकुचित करते हुये कार्य को पूर्ण करते हैं।

The main function of the Muscular System is Movement. Muscles are the only tissue in the body that has the ability to contract and therefore move the other parts of the body.

यहां पर आपको यह भी समझ लेना चाहिए कि प्रसार एवं आकुंचन (Extention and Contraction) की इन क्रियाओं के फलस्वरूप पेशियों में लैक्टिक एसिड (Lactic Acid) नामक तत्व की उत्पत्ति होती है। यह तत्व प्रसार एवं आकुंचन की क्रिया में बाधा उत्पन्न करता है, जिसके फलस्वरूप पेशियों में भारीपन एवं थकान की उत्पत्ति होती है। आराम करने पर पेशियों से यह लैक्टिक एसिड नष्ट हो जाता है, जिसके फलस्वरूप पेशियां पुनः कार्य करने के लिए तैयार हो जाती हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि लैक्टिक एसिड पेशियों में थकान का कारण होता है। मानव शरीर में पेशियों की क्रियाविधि का नियंत्रण मस्तिष्क से होता है। मस्तिष्क का सेरेबेलम (Cerebellum) नामक भाग शरीर के सन्तुलन को नियंत्रित करने का कार्य करता है।

आपको यह जानना आवश्यक है कि, मानव शरीर का लगभग 40 प्रतिशत भाग पेशियों से निर्मित होता है। ये पेशियां मानव शरीर में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। पेशियों द्वारा एक ओर जहां विभिन्न आन्तरिक क्रियाएं सम्पन्न होती रहती हैं, वहीं दूसरी ओर, विभिन्न शारीरिक कार्यों का आधार भी पेशियां ही होती हैं। मानव शरीर के सबसे महत्वपूर्ण अंग हृदय को क्रियाशील बनाए रखने का दायित्व भी पेशीय तंत्र वहन करता है। इस प्रकार पेशीय तंत्र के स्वरुप एवं महत्व को जानने के उपरान्त अब आपके मन में इस तंत्र को स्वस्थ और सक्रिय बनाए रखने वाली यौगिक क्रियाओं के विषय में जानने की जिज्ञासा भी बढ़ गयी होगी। आइये, अब पेशीय तंत्र पर योग के प्रभाव पर विचार करें–

3.5 मानव पेशीय तंत्र पर योग का प्रभाव

अब आप यह जान गये होंगे कि, पेशीय तंत्र मानव शरीर का अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है क्योंकि, शरीर में कोई भी गति अर्थात् क्रिया इस तंत्र की क्रियाशीलता के अभाव में संभव नहीं अर्थात् सभी शारीरिक कार्यों को करने के लिए हमें पेशियों का ही सहारा लेना पड़ता है।

टिप्पणी

इसीलिए हम दिनभर में सबसे ज्यादा कार्य पेशियों के द्वारा ही करते हैं। यह तथ्य मानव शरीर में पेशीय तंत्र की महत्वत्ता को स्पष्ट करता है।

हमें यह भी समझना चाहिए कि वर्तमान समय में मनुष्य के विकृत खान—पान, रहन—सहन, दिनचर्या एवं मानसिक तनाव के फलस्वरूप पेशीय तंत्र में अनेक प्रकार की विकृतियां उत्पन्न कर दी हैं, जिसके परिणामस्वरूप कमर—दर्द, सर्वाइकल, गठिया, अर्थराइटिस, पैरालाइसिस, पार्किन्सन आदि रोग बहुत तेजी से समाज में अपनी जड़ें जमा रहे हैं। आधुनिक समाज में मांसपेशीय दुर्विकास (Muscular Dystrophy) नामक रोग बहुत तेजी से फैलता जा रहा है, जिसमें शरीर की मांसपेशियां कमजोर होकर क्षतिग्रस्त हो जाती हैं तथा शरीर क्रिया करने में अर्थात् कार्य करने में असक्षम होने लगता है। इसके साथ—साथ वर्तमान समय में अधिकांश व्यक्ति शरीर के किसी—न—किसी भाग में पेशीय दर्द से ग्रस्त होते जा रहे हैं। शरीर में मस्कुलर पेन (Muscular Pain) से छुटकारा पाने के लिए दर्द निवारक (पेनकिलर) रासायनिक दवाइयों का प्रयोग समाज में दिन—प्रतिदिन बढ़ा है, किन्तु इससे समस्या का समाधान नहीं हो रहा, अपितु समस्या बढ़ती चली जा रही है। मनुष्य इन दवाइयों के सेवन का आदि होने लगता है जबकि अधिक समय सेवन करने पर यह रासायनिक दवाइयाँ असरहीन होने लगती हैं। मानव शरीर में मांसपेशियों को दर्दों एवं जकड़न से बचाए रखने के साथ साथ इन्हें लचीला एवं स्वस्थ बनाए रखने में यौगिक क्रियाओं का अभ्यास बहुत लाभकारी सिद्ध होता है। यौगिक क्रियाओं के अन्तर्गत नियमित रूप से आसन, प्राणायाम एवं ध्यान आदि का अभ्यास पेशीय तंत्र को स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पेशीय तंत्र पर यौगिक प्रभाव का अध्ययन इस प्रकार है—

1. षट्कर्मों का प्रभाव

हठयोग के प्रमुख ग्रन्थ घेरण्ड संहिता में षट्कर्म को प्रथम योगांग के रूप में वर्णित किया गया है। षट्कर्म के अंतर्गत **छः शोधन क्रियाएं** आती हैं जो सम्पूर्ण शरीर के साथ—साथ पेशियों के शोधन में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। नियमित रूप से विधिपूर्वक धौति, नेति आदि शोधन क्रियाएं करने से उदर प्रदेश, गले एवं शीर्ष प्रदेश में स्थित मांसपेशियां स्वस्थ एवं सक्रिय बनती हैं। नौलि क्रिया उदर की मांसपेशियों को सक्रिय एवं स्वस्थ बनाती है। इसके प्रभाव से पाचन तंत्र सक्रिय बनता है और शरीर ऊर्जावान रहता है। नौलि क्रिया के महत्व पर प्रकाश डालते हुए योगी स्वात्माराम कहते हैं—

मन्दाग्निसंदीपनपाचनदिसंधायिकानन्दकरी सदैव।।

अशेषदोषामयषोषणी च हठक्रियामौलिरियं च नौलिः।।

(ह0प्र0 2/34)

अर्थात् सदा—सर्वदा आनन्द को लाने वाली नौलि—क्रिया मन्द जठराग्नि को प्रदीप्त कर पाचन क्रिया आदि को तेज करती है, विविध दोषों तथा रोगों को नष्ट करती है। इसलिए यह हठक्रियाओं में श्रेष्ठ है।

त्राटक क्रिया नेत्र की मांसपेशियों को स्वस्थ, सक्रिय एवं ऊर्जावान बनाने का अभ्यास है। त्राटक क्रिया का विधिपूर्वक अभ्यास करने से नेत्र की मांसपेशियां स्वस्थ एवं रोगमुक्त बनाती हैं। षट्कर्म की क्रिया कपालभाति का अभ्यास करने से मांसपेशियों से अनावश्यक चर्बी एवं अन्य विषाक्त पदार्थ दूर होते हैं, जिससे मांसपेशियों की क्रियाशीलता बढ़ती है। इस प्रकार उपरोक्त शोधन क्रियाएं सम्पूर्ण शरीर की विभिन्न ऐच्छिक, अनैच्छिक एवं हृद पेशियों पर सकारात्मक एवं लाभकारी प्रभाव डालती हैं।

2. आसन का प्रभाव

योगासनों का पेशीय तंत्र पर सीधा एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। नियमित आसनों का अभ्यास करने से शरीर की पेशियों की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है, मांसपेशियों पर जमी अतिरिक्त चर्बी (Extra Fat) पिघल जाती है, जिसके फलस्वरुप शरीर हल्का एवं क्रियाशील बनता है। विशेष रूप से योगासनों का अभ्यास पेट पर मोटापे को नहीं आने देता है।

Yogasana reduces the fat in the abdomen and waist which is common problem in modern society.

योगासनों का अभ्यास करने से मांसपेशियों पर अतिरिक्त चर्बी एकत्र नहीं हो पाती है, जिसके परिणाम स्वरुप शरीर की संरचना एवं बनावट सन्तुलित रहती है। जबकि इसके विपरीत योगासनों के अभाव में शरीर की फिटनेस (Body Fitness) में उम्र के साथ विकृतियां उत्पन्न होने लगती हैं। योगासनों का अभ्यास करने से पेशियों की कार्यकुशलता एवं कार्यक्षमता बढ़ती है। तात्पर्य यह है कि योगासन शरीर की मांसपेशियों पर बहुत अच्छा प्रभाव रखते हैं।

पेशियों की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि जिस पेशी से जितना अधिक कार्य किया जाता है अथवा सक्रिय रखा जाता है, वह उतनी ही अधिक शक्तिशाली एवं कार्यकुशल (Strong & Perfect) हो जाती है। उदाहरण के लिए लगातार कार्य करते रहने से लौहार का हाथ मजबूत हो जाता है और लगातार पेंटिग करने से पेन्टर बहुत जल्दी तस्वीर बना सकता है, जबकि इसके विपरीत यदि किसी मांसपेशी से लम्बे समय तक कार्य नहीं किया जाता तब धीरे–धीरे वह पेशी क्रियाहीन होकर अंत में निष्क्रिय (Inactive) हो जाती है। इसके उपरान्त प्रयास करने पर भी उस पेशी से कोई कार्य नहीं किया जा सकता है। हमारे शरीर में सामान्य दैनिक कार्य करते समय कुछ पेशियों से अधिक कार्य किया जाता है जबकि कुछ पेशियों से कोई भी कार्य नहीं किया जाता है, जिसके फलस्वरूप शरीर की कुछ मांसपेशियां अधिक शक्तिशाली एवं कुछ मांसपेशियां निष्क्रिय हो जाती हैं।

यहाँ पर योगासनों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि योगासन करने से शरीर की अधिक–से–अधिक मांसपेशियां सक्रिय होती हैं तथा मांसपेशियों के निष्क्रिय एवं

टिप्पणी

क्रियाहीन होने की संभावनाएं बहुत कम हो जाती है। शरीर की पेशियां सक्रिय रहने से शरीर की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता उम्र के साथ कम नहीं होती है। इसीलिए नियमित योगासन करने से शरीर पर उम्र का विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है।

आसनों के क्रम में ताड़ासन, त्रिकोणासन, गरूड़ासन, नटराजासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, गोमुखासन, आकर्णधनुरासन, सर्वांगासन, हलासन, कर्णपीड़ासन, मरकटासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, बकासन, टिटिभासन एवं मयूरासन आदि आसनों का नियमित अभ्यास करने से पेशीय तंत्र स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त रहता है। इन आसनों का अभ्यास करने से पूर्व सूर्यनमस्कार एवं प्रज्ञा योग आदि योगाभ्यास करने से भी पेशीय तंत्र स्वस्थ बना रहता है। ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि रोगावस्था के समय कठिन आसनों का अभ्यास रोगी को नहीं कराना चाहिए अपितु रोगावस्था में सूक्ष्म व्यायाम के अभ्यास से शरीर की समस्त मांसपेशियों को सक्रिय बनाना चाहिए।

3. मुद्रा बंध का प्रभाव

हठयोग के प्रमुख ग्रंथ घेरण्ड संहिता में स्पष्ट कहा गया है कि, मुद्राओं का अभ्यास करने से शरीर में स्थिरता आती है–

मुद्राया स्थिरता चैव।।

(घेरण्ड संहिता)

यहां पर शास्त्रकार का संकेत मुद्राओं के अभ्यास द्वारा पेशियों में स्थिरता उत्पन्न करने से है। अर्थात् मुद्राओं का अभ्यास करने से शरीर की पेशियों में संतुलन, नियंत्रण एवं स्थिरता की प्राप्ति होती है। मुद्राओं के क्रम में महा मुद्रा, विपरीतकरणी एवं तड़ाकी आदि मुद्राओं का अभ्यास करने से पेशीय तंत्र स्वस्थ, संतुलित एवं नियन्त्रित बनता है। इसके साथ–साथ मूलबंध, उड्डियानबंध एवं जालन्धरबंध नामक तीन बंध सीधे–सीधे पेशियों को ऊर्जावान एवं सक्रिय बनाते हैं।

4. प्रत्याहार का प्रभाव

प्रत्याहार का अभिप्राय इन्द्रियों पर संयम से है। एक ओर जहाँ इन्द्रियों पर संयम करने से पेशियां स्वस्थ, सक्रिय एवं ऊर्जावान बनती हैं तो वहीं दूसरी ओर इन्द्रियों पर संयम न होने से पेशीय तंत्र के रोगों की उत्पत्ति होती है। योग में वर्णित प्रत्याहार के अनुसार शुद्ध सात्विक आहार, प्रातःकाल सूर्योदय पूर्व उठना, स्फूर्ति से दैनिक एवं नैमेतिक कर्म करना, नियमित योगाभ्यास, दिन भर मेहनत से सुव्यवस्थित दिनचर्या के साथ कार्य करना एवं आत्मविश्वास द्वारा सकारात्मक ऊर्जा को धारण करने से शरीर की पेशियां शक्तिशाली एवं ऊर्जावान बनती हैं। इसके साथ–साथ अपने विचारों को शुद्ध–सात्विक, सकारात्मक एवं पवित्र रखते हुए मानसिक संवेगों पर नियंत्रण रखने से मनुष्य का पेशीय तंत्र सदैव स्वस्थ बना रहता है। आलस्य त्यागकर पर्याप्त शारीरिक श्रम करने से शरीर की मांसपेशियां स्वस्थ एवं मजबूत बनती हैं।

टिप्पणी

5. प्राणायाम का प्रभाव

प्राणायाम करने से शुद्ध प्राणवायु अर्थात् ऑक्सीजन (O_2) शरीर की पेशियों को प्राप्त होती है। नियमित विधिपूर्वक प्राणायाम करने से पेशियों की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता बढ़ती है। प्राणायाम का श्रेष्ठ सकारात्मक प्रभाव ऐच्छिक, अनैच्छिक एवं हृद पेशियों पर पड़ता है। प्राणायाम के अभ्यास से हृदय की पेशियां स्वस्थ बनती हैं।

> प्राणायाम के क्रम में अनुलोम—विलोम, नाड़ी शोधन, सूर्य भेदी, उज्जायी, शीतली, भ्रामरी एवं भस्त्रिका आदि का अभ्यास करने से पेशियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

6. ध्यान का प्रभाव

ध्यान करने से शरीर में अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्राव अर्थात् हॉर्मोन्स संतुलित (Hormonal Balance) होते हैं। हॉर्मोन्स के संतुलित रहने पर शरीर की सभी पेशियां सुव्यवस्थित एवं नियंत्रित रहती हैं, अतः ध्यान करने से शरीर की पेशियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

इसी प्रकार प्रार्थना का भी सकारात्मक प्रभाव शरीर की पेशियों पर पड़ता है। प्रतिदिन नियमित रुप से प्रार्थना और ध्यान (Prayer & Meditation) करने से शरीर की पेशियों पर मस्तिष्क का नियंत्रण बढ़ता है। मानव शरीर में मस्तिष्क का **सेरिबैलम** (Cerebellum) नामक भाग शारीरिक संतुलन बनाये रखने का कार्य करता है। प्रार्थना और ध्यान का अभ्यास इस केन्द्र की क्रियाशीलता को बढ़ाता है, जिसके फलस्वरूप अभ्यासी मनुष्य शरीर की सभी पेशियों को अपने नियंत्रण में करने में सक्षम होता हैं। शरीर में अनावश्यक कंपन नहीं होते हैं और अंगों में स्थिरता एवं नियंत्रण बना रहता है।

7. समाधि का प्रभाव

समाधि अर्थात् सकारात्मक भाव तथा अपने चारों ओर अच्छे वातावरण की अनुभूति करने से शरीर की सभी पेशियां भलिभांति विकसित होती हैं। मन में नकारात्मक भावों की प्रधानता रहने से शरीर की पेशियों पर नियंत्रण कम हो जाता है, शरीर की पेशियों का विकास रूक जाता है और नाना प्रकार के दर्द पेशियों में शुरू हो जाते हैं। अधिक समय तक नकारात्मक भावों में रहने से शरीर की पेशियों में सूक्ष्म कंपन होने लगता है। ये सभी परिस्थितियां आगे चलकर गंभीर रोग के रूप में प्रकट होती हैं। इन सभी परिस्थितियों को सकारात्मक भावों से बड़ी आसानी से दूर किया जा सकता है। यहां पर सकारात्मक भावों को समाधि के रूप में लिया गया है। व्यावहारिक रूप में भी यह प्रायः अनुभव होता है कि मानसिक तनाव की अवस्था में शरीर में पेशियों का दर्द उत्पन्न होने लगता है जो धीरे—धीरे बढ़ता चला जाता है। सिरदर्द इसका एक सामान्य उदाहरण

टिप्पणी

है जबकि इसके विपरीत मन में सकारात्मक व सन्तुष्टि के भाव एवं प्रसन्नता रखने से पेशियों का तनाव सामान्य होता है और पेशियों से संबंधित दर्द दूर एवं अन्य विकार दूर होते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि यौगिक जीवनशैली अपनाने एवं यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से मनुष्य का पेशीय तंत्र स्वस्थ एवं सक्रिय रहता है।

पेशीय तंत्र पर पथ्य आहार सकारात्मक एवं अपथ्य आहार नकारात्मक प्रभाव रखता है—

पथ्य आहार	अपथ्य आहार
पर्याप्त मात्रा में साफ—स्वच्छ जल का सेवन, हरी पत्तेदार सब्जियां, अंकुरित अन्न, चना, मूँगफली, पालक, मैथी, अलसी, फली (बीन्स), शकरकंदी, मौसमी फल, दूध एवं दूध से बने पदार्थ जैसे— पनीर, घी, मक्खन आदि, सूखे मेवे जैसे— बादाम, मुनक्का, किशमिश, काजू, अखरोट आदि।	समुद्री नमक, चीनी, चाय, कॉफी, तम्बाकू, एल्कोहल सभी प्रकार के रासायनिक शीतल पेय (कोल्ड ड्रिंक्स), ठंडे वातवर्धक बासी खाद्य पदार्थ, चाइनीज भोजन जैसे— चाऊमीन, मोमोज, पिज्जा, बर्गर, फ्रिज का ठण्डा पानी आदि का सेवन शरीर की मांसपेशियों पर नकारात्मक प्रभाव रखता है और इसके साथ—साथ इन पदार्थों का सेवन करने से विभिन्न प्रकार के रोग शरीर में उत्पन्न होते हैं।

यूनिटगत प्रश्न 2.3

क) सही अथवा गलत बताइए—

1) पेशियों में पहले विस्तार तथा फिर संकुचन की क्रिया होती है। ( )

2) पेशियों में लैक्टिक ऐसिड की उत्पत्ति से थकान एवं भारीपन उत्पन्न होता है। ( )

3) कठिन शारीरिक श्रम करने से मानव शरीर की मांसपेशियां कमजोर एवं रोगग्रस्त हो जाती हैं। ( )

4) कम शारीरिक श्रम एवं भोगमय विलासतापूर्ण जीवनशैली शरीर की पेशियों पर सकारात्मक प्रभाव रखती है। ( )

5) पेशीय विकारों में अलसी, पालक, मैथी, बीन्स, बादाम एवं अखरोट आदि का सेवन नहीं करना चाहिए। ( )

टिप्पणी

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए –

1) पेशीय तंत्र का मूल कार्य क्या है?

2) मानव शरीर में कितने जोड़ी पेशियां होती हैं?

3) मानव शरीर में किस वर्ग की पेशियों के कार्यों में लयबद्धता पाई जाती है?

4) मानव शरीर की पेशियों में कौन सी दो क्रियाएं होती हैं?

5) मोटापा दूर करने वाले किन्हीं दो यौगिक अभ्यासों के नाम लिखिए?

आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने सीखा कि,

- मानव शरीर को गतिशील बनाने में पेशीय तंत्र अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पेशीय तंत्र के अंतर्गत ऐच्छिक, अनैच्छिक एवं हृद नामक तीन प्रकार की पेशियों का समावेश होता है।
- ये तीन प्रकार की पेशियां प्रसारण एवं आकुंचन नामक क्रियाओं द्वारा मानव शरीर के समस्त आन्तरिक एवं बाह्य कार्यों को प्रतिक्षण पूर्ण करती रहती हैं।
- लगातार कार्य करने से इन पेशियों में लैक्टिक अम्ल की उत्पत्ति होती है, जिस कारण पेशियों में भारीपन और थकान उत्पन्न होती है। विश्राम की अवस्था में पेशियों में स्थित यह लेक्टिक अम्ल नष्ट होता है जिससे पेशियां पुनः कार्य करने हेतु तैयार हो जाती हैं।
- विकृत आहार–विहार, अनियमित दिनचर्या एवं श्रमहीन विलासितापूर्ण भोगमय जीवनशैली, शरीर की पेशियों पर नकारात्मक प्रभाव रखती हैं। इन कारकों के परिणामस्वरुप शरीर की मांसपेशियों में निष्क्रियता एवं शिथिलता उत्पन्न होती है। यह परिस्थिति आगे चलकर विभिन्न शारीरिक रोगों को जन्म देती है, जबकि इसके विपरीत शुद्ध सात्विक आहार –विहार, सुव्यवस्थित दिनचर्या एवं अनुशासन पूर्ण योगमय जीवनशैली, शरीर की पेशियों पर बहुत सकारात्मक एवं उन्नत प्रभाव रखती है। इन कारकों के प्रभाव से शरीर की सभी मांसपेशियां जीवन पर्यन्त स्वस्थ, सक्रिय, रोगमुक्त एवं ऊर्जावान बनी रहती हैं।

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव पेशीय तंत्र को समझाते हुये, इस पर यौगिक प्रभाव की विवेचना कीजिए।
2. मानव शरीर में पेशियों के प्रकारों को उदाहरण सहित समझाइये।
3. मानव शरीर में पेशियों के कार्यों एवं महत्व का सविस्तार वर्णन कीजिए।

टिप्पणी

4. मानव शरीर में पेशीय विकारों का यौगिक प्रबन्धन लिखिये।

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

3.1

क	ख
1. तीन	1. c
2. गतिशीलता	2. a
3. ऐच्छिक	3. d
4. प्रसार	4. d
5. नौलि	5. a

3.2

क.	ख.
1. सही	1. गतिशीलता
2. सही	2. 320 जोड़ी
3. गलत	3. अनैच्छिक
4. गलत	4. विस्तार एवं आकुंचन
5. गलत	5. षट्कर्म एवं योगासन

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।
2 मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजू तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5 स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0) ।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ़।

टिप्पणी

4

ज्ञानेन्द्रिय तंत्र की संरचना–क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछली यूनिट में आपने मानव शरीर को गतिशील करने वाली पेशियों के विषय में जाना। आपने जाना कि, मानव शरीर में तीन प्रकार की पेशियां– ऐच्छिक, अनैच्छिक और हृद पेशियां, सम्पूर्ण मानव शरीर को गतिशील और क्रियाशील बनाने का कार्य करती हैं। यदि हम मानव शरीर के विषय में चिन्तन करें तो अस्थियां शरीर के लिए मूलभूत संरचनात्मक ढांचा तैयार करती हैं और पेशियां शरीर को गतिशील बनाने का कार्य करती हैं। आपको यह ज्ञान होगा कि, बाह्य वातावरण में असंख्य जीवाणु और रोगाणु रहते हैं। अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि, मानव शरीर को बाहरी वातावरण में उपस्थित इन जीवाणुओं और रोगाणुओं से किस प्रकार सुरक्षा प्राप्त होती है और बाहरी वातावरण की संवेदनाओं को किस प्रकार प्राप्त करता है। अर्थात् वह देखता कैसे है, उसे सुनाई कैसे देता है, भोजन का स्वाद किस प्रकार महसूस करता है आदि। इसके लिए मानव शरीर में ज्ञानेन्द्रिय तंत्र उपस्थित होता है जिसका महत्वपूर्ण कार्य ज्ञान प्राप्त करना होता है।

ज्ञानेन्द्रिय तंत्र के स्वरुप को समझने एवं मानव शरीर में इसके महत्व को जानने के उपरान्त आपके मन में ज्ञानेन्द्रिय तंत्र को विस्तार पूर्वक समझने जिज्ञासा उत्पन होनी स्वाभाविक ही है। इसके साथ–साथ मानव शरीर में ज्ञान को ग्रहण करने वाली कौन–कौन सी इन्द्रियां होती हैं। इन ज्ञानेन्द्रियों को कौन–कौन से योगाभ्यास प्रभावित करते हैं। तो आइये इस यूनिट में हम ज्ञानेन्द्रिय तंत्र, पांच ज्ञानेन्द्रियों की संरचना एवं कार्य तथा ज्ञानेन्द्रिय तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभावों का सविस्तार अध्ययन करते हैं।

टिप्पणी

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

- ज्ञानेन्द्रिय तंत्र का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे;
- ज्ञानेन्द्रिय तंत्र की विवेचना करने में सक्षम हो सकेंगे;
- पांचों ज्ञानेन्द्रियों की संरचना एवं कार्यों को समझाने में सक्षम हो सकेंगे;
- ज्ञानेन्द्रिय तंत्र के महत्व को समझा सकेंगे;
- ज्ञानेन्द्रिय तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।

4.1 मानव ज्ञानेन्द्रिय तंत्र का सामान्य परिचय

प्रिय शिक्षार्थियों, बाह्य वातावरण से ज्ञान को ग्रहण (Reciving Information from External Environment) करने वाले अंग, ज्ञानेन्द्रियां (Sensory Organs) कहलाते हैं। **ज्ञान को ग्रहण करने से अभिप्राय स्पर्श, स्वाद, गंध, ध्वनि एवं देखने से होता है।** इन ज्ञानेन्द्रियों के मिलने से ज्ञानेन्द्रिय तंत्र की उत्पत्ति होती है। सरल शब्दों में, मानव शरीर में उपस्थित ऐसे अंग, जो वातावरण में होने वाले परिवर्तन को स्पर्श, स्वाद, सूंघने एवं देखने के द्वारा ग्रहण करने का कार्य करते हैं, ज्ञानेन्द्रियाँ कहलाते हैं। इन ज्ञान ग्रहण करने वाले महत्वपूर्ण अंगों को संवेदी अंग भी कहा जाता है क्योंकि ये संवेदनाओं को ग्रहण करते हुए मस्तिष्क तक पहुंचाने का कार्य भी करते हैं।

हमें यह समझना आवश्यक है कि, मानव शरीर में निम्नलिखित पाँच महत्वपूर्ण संवेदी अंग होते हैं, जिन्हें सम्मिलित रुप से पंच ज्ञानेन्द्रियां कहा जाता है। इनका वर्णन इस प्रकार है–

पंच ज्ञानेन्द्रियां	**स्पर्शनेन्द्रिय या त्वचा (Skin)**	यह स्पर्श के द्वारा ताप, दबाव एवं पीड़ा आदि संवेदनाओं को ग्रहण करने का कार्य करती है।
	स्वादेन्द्रिय या जीभ (Tongue)	यह स्वाद के द्वारा खट्टा, मीठा एवं नमकीन आदि संवेदनाओं को ग्रहण करने का कार्य करती है।
	घ्राणेन्द्रिय या नाक (Nose)	यह गंध के द्वारा सूंघकर अनुकूल एवं प्रतिकूल वायु की संवेदनाओं को ग्रहण करने का कार्य करता है।
	श्रवणेन्द्रिय या कान (Ears)	यह ध्वनि को सुनकर विभिन्न प्रकार के संदेशों की संवेदनाओं को ग्रहण करने का कार्य करते हैं।
	चक्षु इन्द्रिय या आँख (Eyes)	यह विभिन्न दृश्यों को देखकर संवेदनाओं को ग्रहण करने का कार्य करती है।

टिप्पणी

इस प्रकार उपरोक्त संवेदी अंगों के द्वारा बाह्य वातावरण से संवेदनाओं को ग्रहण किया जाता है। इन संवेदनाओं को तंत्रिकाओं के द्वारा मस्तिष्क तक पहुँचाया जाता है। इस प्रकार संवेदी अंगों की सहायता से मानव शरीर बाह्य वातावरण से समायोजन (Coordination) बनाने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। इन संवेदी अंगों की संरचना एवं क्रियाविधि का वर्णन इस प्रकार है –

4.2 स्पर्शनेन्द्रिय या त्वचा (Skin)

मानव शरीर का वह अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग जो सम्पूर्ण शरीर को एक सुरक्षात्मक आवरण (The Outermost Protective Layer) प्रदान करता है, त्वचा (Skin) कहलाता है। बाह्य वातावरण से लाखों–करोड़ों सूक्ष्म जीवाणु (Microbes), विषाणु रोगाणु (Pathogens) उपस्थित होते हैं जो विभिन्न पदार्थों के साथ मनुष्य पर संक्रमण (Infection) करते रहते हैं। त्वचा ईश्वर एवं प्रकृति द्वारा मानव शरीर को दिया ऐसा सुरक्षित आवरण है जो इन सभी सूक्ष्म जीवों से जीवन की रक्षा का महत्वपूर्ण कार्य करता है, इसीलिए कहीं से भी त्वचा के कट जाने पर अथवा जल जाने पर सबसे अधिक भय बाह्य सूक्ष्म जीवों के संक्रमण का रहता है। आग में त्वचा के जल जाने पर सबसे ज्यादा खतरा बाह्य विषाणुओं के शरीर पर संक्रमण होने का रहता है। त्वचा के इसी विशिष्ट कार्य के आधार पर इसे त्वचीय तंत्र (Integumentary System) के अन्तर्गत रखा जाता है, जिसमें त्वचा की संरचना एवं कार्यों का अध्ययन किया जाता है।

त्वचीय तंत्र को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है–

शरीर का वह तंत्र जो त्वचा के रूप में शरीर को सुन्दर आकृति एवं सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करता है, त्वचीय तंत्र (Integumentary System) कहलाता है। इसके अंतर्गत त्वचा, बाल, नाखून, स्वेद एवं तेलीय ग्रन्थियों का समावेश होता है।

4.2.1 मानव त्वचा की संरचना (Structure of Skin)

जैसा कि आप जान चुके हैं कि, मानव शरीर का सबसे बाहरी आवरण त्वचा कहलाती है। त्वचा मानव शरीर का सबसे बड़ा अंग होता है, जिसका सामान्य क्षेत्रफल लगभग 1.8 वर्ग मीटर होता है। अध्ययन के दृष्टिकोण से त्वचा को निम्न दो भागों में बांटा जाता है–

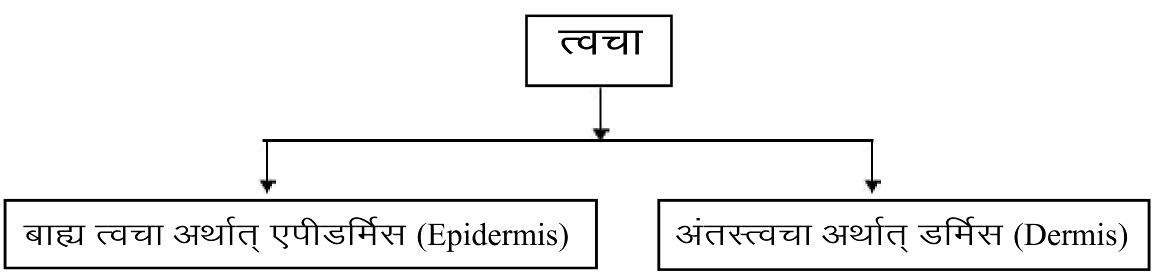

चित्र 4.1: मानव त्वचा

टिप्पणी

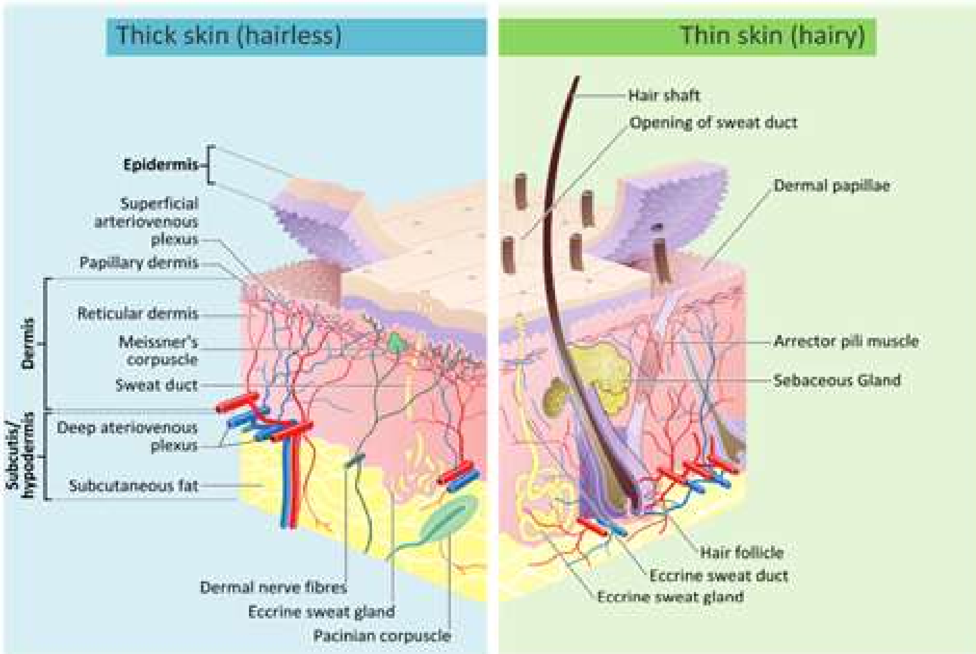

चित्र 4.2 : मानव त्वचा की संरचना

क) बाह्य त्वचा (Epidermis)

यह त्वचा का सबसे बाहरी आवरण होता है जो कई परतों से मिलकर बनता है, इसकी बाहरी परत कुछ स्थानों (पैर के तलवे एवं हाथ की हथेली) पर मोटी तथा कुछ स्थानों (पलकों, होठों, चेहरे आदि) पर पतली एवं कोमल होती है।

त्वचा की बाहरी परत (Epidermis) का निर्माण निर्जीव कोशिकाओं (Dead Cells) से होता है, जिस पर बाह्य जीवाणु–विषाणु एवं रोगाणु आदि कोई प्रभाव नहीं डाल पाते हैं। यह शरीर के लिए एक प्रकार से वाटरप्रूफ (Water Proof) आवरण का कार्य करती है, जिसके माध्यम से अधिकांश द्रवीय पदार्थ शरीर के अन्दर प्रवेश नहीं कर पाते अथवा बहुत कम मात्रा में अन्दर प्रवेश कर पाते हैं। त्वचा के इस ऊपरी भाग में तंत्रिकाएं एवं रक्त वाहिनियां भी अनुपस्थित होती हैं। इसी भाग के कट जाने अथवा जल जाने पर अन्तःत्वचा में संक्रमण (Infection) उत्पन्न हो जाता है।

इस भाग में मैलेनिन (Melanin) नामक वर्णक उपस्थित होता है जो त्वचा के रंग को निर्धारित करता है। इस वर्णक की अधिक मात्रा होने पर त्वचा का रंग उतना ही श्याम (Dark) हो जाता है। यह वर्णक एक ओर जहां सूर्य की तेज किरणों से त्वचा की रक्षा करता है, तो वहीं दूसरी ओर अधिक गर्मी एवं ताप सहने की क्षमता भी प्रदान करता है।

In the Human Skin, Melanogenesis is initiated by exposure to UV radiation, causing the skin to darken. Melanin is an effective absorbent of light; the pigment is able to dissipate over 99.9% of absorbed UV radiation. Because of this property, Melanin is thought to protect skin cells from UVB radiation damage, reducing the risk of Cancer.

टिप्पणी

ख) अन्तस्त्वचा (Dermis)

अन्तस्त्वचा को वास्तविक त्वचा भी कहा जाता है क्योंकि इसका निर्माण सजीव कोशिकाओं एवं तन्तुओं के मिलने से होता है। त्वचा के इस भाग में प्रोटीन से बने तन्तु, वसा, कोशिकाएं, तंत्रिकाएं, रक्त वाहिनियां, लसीका वाहिनियां, स्वेद ग्रन्थियां उपस्थित होती हैं।

त्वचा के इस भाग में रोमकूप (Hair Follicle) पाये जाते हैं, जिनके माध्यम से स्वेद एवं अन्य अनुपयोगी पदार्थ बाहर निकलते हैं एवं इन्हीं रोमकूपों के माध्यम से शरीरोपयोगी पोषक पदार्थ जैसे— तेल आदि अन्दर प्रवेश करते हैं। इसी भाग में स्वेद ग्रन्थियाँ (Sweat Glands) पायी जाती हैं, जो सामान्यतः 24 घण्टों में औसतन 500 से 600 मिलीलीटर पसीने का उत्सर्जन करती हैं। स्वेद की मात्रा गर्मी—सर्दी के मौसम एवं कार्यों पर भी निर्भर करती है, इसके साथ—साथ शरीर के तंत्रिका तंत्र का प्रभाव भी इन ग्रन्थियों पर पड़ता है तथा इससे भी पसीना उत्पन्न होता है। यह पसीना शरीर में ताप नियंत्रण एवं जल संतुलन बनाने का महत्वपूर्ण कार्य करता है।

4.2.2 त्वचा के उपांग (Appendages of Skin)

त्वचा के उपांग में बाल एवं नाखून का समावेश होता है। बाल एवं नाखून संरचना एवं कार्य का वर्णन इस प्रकार है—

1. **बाल या केश (Hair)**— बाल बाह्य त्वचा के कठोर भाग का ही परिवर्तित रूप (Modified form of Epidermis) होता है। प्रत्येक बाल रोमकूप में स्थित रहता है। बाल की जड़ अन्तस्त्वचा (Dermis) के साथ जुड़ी होती है, जहां से बाल को पोषण प्राप्त होता है। यहीं से रक्त वाहिनियों द्वारा पोषक पदार्थ बालों तक पहुंचते हैं तथा इसी कारण बाल के उखड़ने पर पीड़ा की अनुभूति होती है।

   बाल का त्वचा से बाहर रहने वाला भाग शल्कों के समान कोशिकाओं से बना होता है तथा इसके अन्दर नलिका पायी जाती है। प्रत्येक बाल त्वचा में स्थित तेलीय ग्रन्थि (Sebaceous Gland) से जुड़ा होता है। तेलीय ग्रन्थि से उत्पन्न स्राव बाल को चमकीलापन प्रदान करता है। बाल में उपस्थित मैलेनिन नामक रंजक पदार्थ इसे काला बनाए रखता है।

2. **नाखून** (Nails)— मनुष्य के हाथ एवं पैर की अंगुलियों के अग्र छोर पर कठोर रचनाएं पायी जाती हैं, जिन्हें नाखून (Nails) कहा जाता है। इनका कार्य अंगुलियों को सुरक्षा प्रदान करना होता है। नाखून का निर्माण केराटिन युक्त कोशिकाओं से होता है।

   नाखून का अंतःभाग त्वचा के साथ जुड़ा होता है एवं त्वचा से पोषण प्राप्त करता है, जबकि इसका बाहरी भाग मृत कोशिकाओं से बना होता है, जिसे काटने पर दर्द आदि की अनुभूति नहीं होती है।

टिप्पणी

4.2.3 त्वचा के कार्य (Functions of Skin)

प्रिय शिक्षार्थियों, यद्यपि सामान्य रुप से देखने पर प्रतीत होता है कि त्वचा मानव शरीर को ढकने का कार्य करती है किन्तु सूक्ष्म रुप से अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि त्वचा केवल शरीर को ढकने का कार्य ही नहीं करती है अपितु इसके साथ-साथ अनेक महत्वपूर्ण शरीरोपयोगी क्रियाओं को भी प्रतिक्षण सम्पादित करती रहती है। त्वचा के महत्वपूर्ण कार्यों का वर्णन इस प्रकार है–

1. त्वचा का सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण कार्य शरीर को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करना होता है। यह बाह्य रोगाणुओं से शरीर की सुरक्षा (Protection form Germs) करती है।
2. त्वचा का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य पसीने के माध्यम से शरीर से अनुपयोगी पदार्थों को बाहर निकालना (Excretion) होता है।
3. त्वचा पसीने के रूप में जल को शरीर से बाहर निकालती है। शरीर से बाहर निकलने पर इस जल का वाष्पीकरण होता है। वाष्पीकरण की क्रिया में शरीर का तापक्रम कम होता है। व्यावहारिक रूप में हम अनुभव करते हैं कि गर्मी के दिनों में पसीना सूखने पर ठंड की अनुभूति होती है अर्थात् त्वचा शरीर का ताप नियंत्रित (Thermo regulation) करने का कार्य भी करती है।
4. त्वचा को एक प्रमुख संवेदी अंग माना जाता है। मनुष्य त्वचा के माध्यम से बाह्य वातावरण से विभिन्न संवेदनाओं (Sensation) को ग्रहण करता है।
5. त्वचा शरीर में जल संतुलन (Water Balance) को बनाये रखने में भी मदद करती है।
6. त्वचा शरीर में अम्ल–क्षार संतुलन (Acid-Base Balance) को बनाये रखने में अपना योगदान देती है।
7. त्वचा में सूर्य की अल्ट्रावॉयलेट किरणों को अवशोषित कर विटामिन 'डी' का निर्माण करने की क्षमता होती है। अर्थात् त्वचा विटामिन डी का संश्लेषण (Synthesis of vitamin D) करने का कार्य करती है।
8. त्वचा वसा, लवण, ग्लूकोज आदि शरीरोपयोगी पदार्थों को अपने अन्दर संचित (Storage) करने का महत्वपूर्ण कार्य करती है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि त्वचा मानव शरीर की अनेक महत्वपूर्ण क्रियाओं में भाग लेती है और प्रतिक्षण क्रियाशील बनी रहती है।

4.3 स्वादेन्द्रिय या जीभ (Tongue)

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य के मुख में भोजन के स्वाद को ग्रहण करने वाला एक अत्यंत संवेदनशील अंग उपस्थित होता है, जिसे जीभ कहते हैं। जीभ संवेदनशील होने के साथ

साथ गतिशील अंग है जो भोजन के स्वाद को ग्रहण करने के साथ–साथ भोजन को चबाने, निगलने तथा बोलने जैसे महत्वपूर्ण कार्यों में भाग लेता है। जीभ आन्तरिक ऐच्छिक पेशियों के साथ जुड़ी होती है, जिस कारण यह तीव्र से तीव्र गति करने में सक्षम होती है। मानव जीभ की संरचना इस प्रकार होती है–

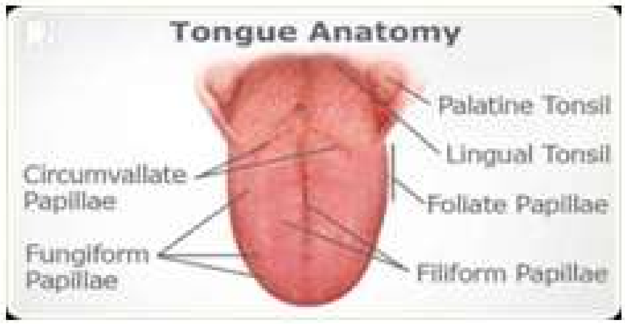

चित्र 4.3: जीभ की संरचना

मनुष्य की जीभ म्यूकस मेम्ब्रेन से आच्छादित होती है। यह मेम्ब्रेन गुलाबी रंग की मखमल की तरह दिखलाई पड़ती है। इस पर बहुत सारी संवेदी कोशिकाएं उपस्थित होती हैं। इन संवेदी रचनाओं को रसांकुर या अंकुरक या पैपिली (Papillae) कहा जाता है। यह रसांकुर रसायनग्राही (Chemoreceptor) होते हैं अर्थात् स्वाद को ग्रहण करने में सक्षम होते हैं। किन्तु ये उद्दीपनों को केवल घुलित अवस्था में ही ग्रहण पर पाते हैं, इसीलिए लार मिश्रित भोजन जब इन रसाकुंरों के ऊपर आता है तब ये कोशिकाएं उत्तेजित होकर स्वाद का बोध कराती हैं। स्वाद का बोध कराने के कारण इन्हें स्वाद कलिकाएं (Taste Buds) भी कहा जाता है। जीभ में रसांकुर केवल ऊपरी सतह पर ही पाये जाते हैं। मनुष्य की जीभ में लगभग 10,000 स्वाद कलिकाएं उपस्थित होती हैं जिनके माध्यम से भोजन का स्वाद ग्रहण किया जाता है। मनुष्य की जीभ के अलग–अलग भाग अलग–अलग स्वादों के प्रति संवेदनशील होते हैं–

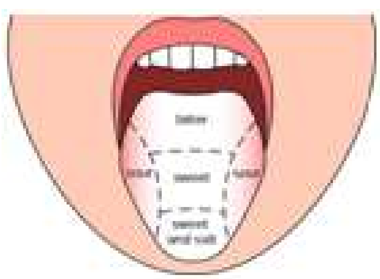

चित्र 4.4: जीभ के स्वाद केन्द्र

मनुष्य की जीभ का अगला भाग नमकीन के प्रति, पार्श्व का भाग खट्टे के प्रति, मध्य भाग मीठे के प्रति एवं पिछला भाग कड़वे स्वाद के प्रति संवेदनशील होता है। इस स्वादों को ग्रहण कर तंत्रिकाओं के माध्यम से मस्तिष्क तक पहुँचाया जाता है। मस्तिष्क का गस्टेटरी कॉटेक्स

टिप्पणी

(Gustatory Cortex) नामक भाग स्वाद की अनुभूति करता है और स्वाद केन्द्र कहलाता है। बहुत अधिक गर्म—ठंडे खाद्य पदार्थ को खाने, अत्यधिक तीखा—चटपटा एवं मिर्च—मसाले युक्त आहार का सेवन करने से जीभ के रसांकुरकों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा ये नष्ट हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप मस्तिष्क को भोजन के स्वाद का पता नहीं चल पाता है। सामान्यतः पचास वर्ष की आयु के उपरान्त जीभ के रसांकुरकों की संख्या प्रतिवर्ष स्वतः ही घटने लगती है।

4.4 घ्राणेन्द्रिय या नाक (Nose)

जिस प्रकार जीभ भोजन का स्वाद ग्रहण करने का कार्य करती है, ठीक उसी प्रकार चेहरे पर उपस्थित नासिका नामक अंग, किसी वस्तु या पदार्थ की गंध का ज्ञान करता है। नासिका में उपस्थित विशेष प्रकार की कोशिकाएं, गंध के ज्ञान को ग्रहण कर मस्तिष्क तक पहुँचाने का कार्य करती हैं। नासिका की इन कोशिकाओं को घ्राण कोशिकाएं (Olfactory Cells) कहा जाता है। मनुष्य के नासिका की संरचना इस प्रकार है—

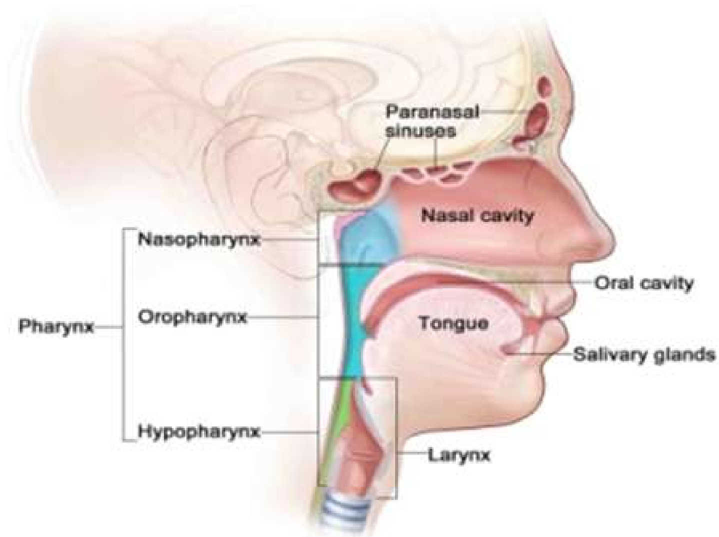

चित्र 4.5: नाक की संरचना

मनुष्य की नासिका का निर्माण तीन छोटी अस्थियों द्वारा होता है, जो नासिका गुहा का निर्माण करते हैं। नासिका गुहा में म्यूकस मेम्ब्रेन पाई जाती है जो नासिका को नम, तर, चिकनी एवं चिपचिपी बनाए रखती है। नासिका गुहा में द्विध्रुवीय तंत्रिका कोशिकाएं (Bipolar Nerve Cells) उपस्थित होती हैं, जिनकी संख्या पच्चीस लाख से भी अधिक होती है। इन कोशिकाओं में घ्राण अर्थात् गंध ग्रहण करने की क्षमता पाई जाती है। यह कोशिकाएं केवल वाष्प अवस्था में ही गंध को ग्रहण करने में सक्षम होती हैं। गंध को ग्रहण करने के उपरान्त ये कोशिकाएं घ्राण पथ (Olfactory Track) से होती हुई इसका ज्ञान मस्तिष्क को कराती हैं।

यहाँ यह जानना आवश्यक है कि, जुकाम के समय नासिका पथ की एपिथीलियम में सूजन उत्पन्न होने पर गंध की संवेदना भी काफी कम हो जाती है। इसके साथ साथ वातावरण में प्रदूषण, अत्यधिक तीव्र गंध एवं रासायनिक पदार्थों के प्रभाव से नासिका की घ्राण कोशिकाओं को हानि पहुँचती है तथा ये कोशिकाएं नष्ट होने लगती है। इन कोशिकाओं के नष्ट होने पर मनुष्य को गंध का ज्ञान कम होने लगता है। कुछ अन्य प्राणियों जैसे—कुत्ता, बिल्ली एवं चूहे आदि में घ्राण कोशिकाओं की संख्या अधिक होने के कारण सूघंने की क्षमता मनुष्य की तुलना में अधिक विकसित होती है।

4.5 श्रवणेन्द्रिय या कान (Ears)

कान मनुष्य के साथ—साथ सभी स्तनधारियों की प्रमुख एवं जटिल इन्द्रिय है, जो शीर्ष भाग में दोनों ओर अर्थात् संख्या में दो होते हैं। यह बाह्य वातावरण से ध्वनि तरंगों को ग्रहण कर इसका ज्ञान मस्तिष्क को कराता है। यद्यपि सामान्य रूप से देखने पर कान का कार्य ध्वनि को सुनना ही प्रतीक होता है जबकि कान ध्वनि सुनने के साथ—साथ शरीर—संतुलन (Equilibrium) को बनाए रखने का भी महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करता है। मनुष्य के कान की संरचना निम्न तीन भागों में विभाजित होती है—

क) बाह्य कर्ण (External Ear)

ख) मध्य कर्ण (Middle Ear)

ग) अन्तः कर्ण (Internal Ear)

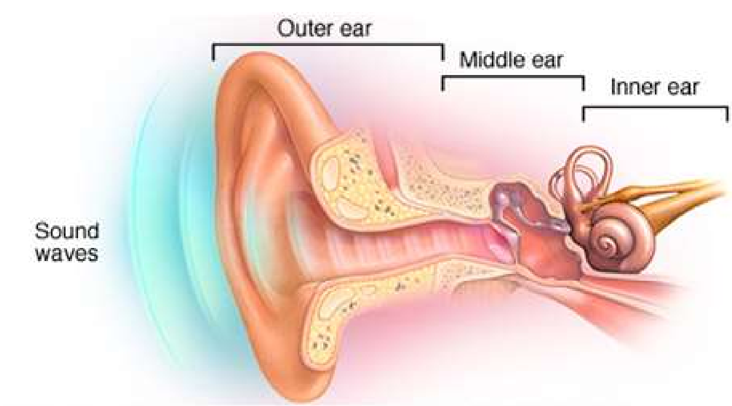

चित्र 4.6: कान की संरचना

क) बाह्य कर्ण (External Ear)

कान का सबसे बाहरी भाग जो लचीली कार्टिलेज एवं अस्थियों से मिलकर बनता है, बाह्य कर्ण कहलाता है। इस भाग में रक्तवाहिनियां बहुत तेजी से रक्त की आपूर्ति करती रहती हैं और यह भाग ध्वनि से उत्पन्न तरंगों को एकत्र कर कान के भीतर भेजने का

टिप्पणी

कार्य करता है। बाह्य कर्ण में अंग्रेजी भाषा के S अक्षर के समान घुमावदार नलिका होती है, जिसका सम्बन्ध मध्य कर्ण से होता है। इसी नलिका में कर्णपटह या कान का पर्दा (Tympanic membrane) पाया जाता है। इस कान के पर्दे को इयर ड्रम भी कहा जाता है। यह बाह्यकर्ण एवं मध्यकर्ण के बीच एक पतले आवरण के रुप में उपस्थित होता है। जब बाहरी वातावरण से ध्वनि तंरगें इस कर्णपटह से टकराती हैं, तब इसमें कम्पन उत्पन्न होते हैं। ध्वनि तरगों से उत्पन्न इन कम्पनों को मध्य कर्ण एवं अन्तः कर्ण तक भेजा जाता है।

ख) मध्य कर्ण (**Middle Ear**)

मध्य कर्ण, कर्णपटह एवं अन्तःकर्ण के बीच का भाग होता है जो एक गुहा (Cavity) होती है, जिसमें सुनने की क्रिया में भाग लेने वाली तीन प्रमुख अस्थियां— मेलीयस, इन्कस तथा स्टैप्स उपस्थित होती हैं। मानव शरीर की सबसे छोटी अस्थि स्टैप्स मध्य कर्ण में ही उपस्थित होती है।

ग) अन्तः कर्ण (**Internal Ear**)

अन्तःकर्ण सबसे भीतरी भाग है, जिसकी संरचना घेंघे (Snail) के समान होती है। इसमें टेढ़ी—मेढ़ी अनियमित आकार की नलिकाएं होती हैं, जिसमें परिलसिका (Perilymph) नामक तरल पदार्थ भरा होता है। यह भाग सुनने की क्रिया में भाग लेने के साथ—साथ शारीरिक संतुलन बनाने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। इस भाग में संतुलन बनाने वाली संवेदी नाड़ियां पाई जाती हैं, जो शरीर की विभिन्न मुद्राओं एवं खड़े होकर चलने पर नियंत्रण करती हुई शारीरिक संतुलन (Equilibrium) बनाने का कार्य करती हैं।

बाह्य वातावरण में ध्वनि के फलस्वरूप वायु में कम्पन उत्पन्न होते हैं। ये कम्पन तरंगों के रूप में मनुष्य के कानों तक पहुँचते हैं। कान में उत्पन्न तन्त्रिका आवेग आठवीं कपालीय तन्त्रिका के द्वारा प्रमस्तिष्क (Cerebral) के टेम्पोरल लोब में स्थित श्रवण केन्द्र में पहुंचती है। यहां पर ध्वनि का विश्लेषण एवं बोध किया जाता है। वातावरण में 332 मीटर प्रति/से0 की गति से ध्वनि तरंगें गति करती हैं। मनुष्य के कर्ण 20 हर्ट्ज से लकर 20 किलोहर्ट्ज (20,000 हर्ट्ज) आवृत्ति की ध्वनि तरंगों को सुनने की क्षमता रखता है। ध्वनि प्रदूषण अर्थात् सामान्य से अधिक आवृत्ति की ध्वनि में अधिक समय तक रहने से कर्ण की सुनने की क्षमता कम होने लगती है।

4.6 दृश्येन्द्रिय या आँख (Eyes)

पाँच ज्ञानेन्द्रियों में आंखों का अपना विशिष्ट महत्व है। मनुष्य सबसे अधिक ज्ञान देखकर प्राप्त करता है। देखने की क्रिया में आंख ही महत्वपूर्ण अंग होता है। आंखों के द्वारा दृष्टि ज्ञान अत्यंत जटिल प्रक्रिया है, जिसके द्वारा वस्तु का रंग, रूप, दूरी, स्थान आदि विषयों का ज्ञान होता है। मनुष्य में दो आंखे होती हैं जो जन्म से मृत्यु पर्यन्त लगभग एक समान आकार की बनी रहती हैं अर्थात् मानव शरीर में आंखें एक ऐसा अंग होती हैं, जिनका आकार जीवन पर्यन्त एक—समान बना रहता है। मनुष्य की आंखों की संरचना इस प्रकार होती है—

टिप्पणी

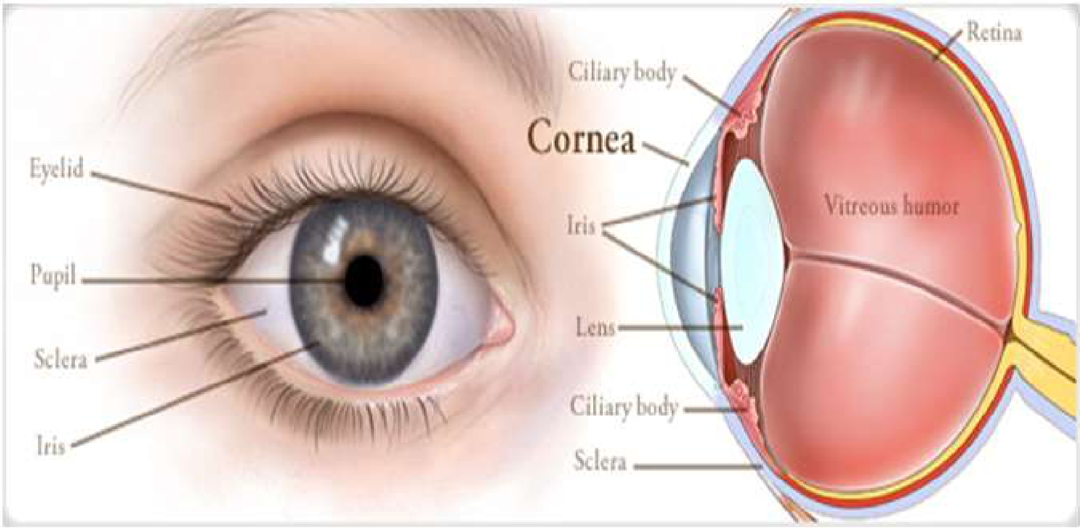

चित्र 4.7: आंख की संरचना

मनुष्य की आंख का सबसे बाहरी भाग दृढ़, तन्तुमय संयोजी ऊतक (Outer Fibrous Layer) से बनी मेम्ब्रेन से बनता है, जिसमें श्वेत पटल (Sclera) एवं कॉर्निया (Cornea) उपस्थित होते हैं। इसी भाग में नेत्र को घुमाने वाली पेशियां उपस्थित होती हैं, जिसके द्वारा नेत्र चारों ओर घूमकर अलग–अलग वस्तुओं को देखने में सक्षम होते हैं। यहीं पर कॉर्निया नामक भाग उपस्थित होता है, जिसके माध्यम से प्रकाश किरणें रेटिना तक पहुंचती हैं।

नेत्र के मध्य भाग में अनेकों रक्तवाहिकाओं का जाल रहता है। यहां पर उपस्थित सिलीयरी पेशियां (Ciliary Muscle) दूर एवं पास की प्रकाश किरणों को केन्द्रित करने का कार्य करती हैं। यहीं पर सिलीयरी ग्रन्थियां (Ciliary Gland) उपस्थित होती हैं जो जल के समान द्रवीय पदार्थ को स्रावित करती रहती हैं। यहां पर एक पतली पेशीय परत के रुप में उपतारा अथवा आइरिस (Iris) नामक रचना उपस्थित होती है, जिसके मध्यभाग में उपस्थित गोलाकार छिद्र पुतली या प्यूपिल (Pupil) कहलाता है।

नेत्र का सबसे आन्तरिक भाग दृष्टिपटल या रेटिना कहलाता है। यह ओप्टिक तंत्रिका से जुड़ा होता है, जो नेत्र से प्राप्त ज्ञान को मस्तिष्क तक पहुंचाने का कार्य करता है। इस भाग में छड़ के आकार की रचनाएं रोड्स (Rods) एवं शंकु के आकार की रचनाएं कोन्स (Cones) उपस्थित होती हैं। रोड्स एवं कोन्स की महत्वपूर्ण विशेषता होती है कि ये प्रकाश के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं। इनके द्वारा मस्तिष्क अलग–अलग रंगों की पहचान कर पाता है। रोड्स काली और सफेद छायाओं का बोध कराती हैं तो कोन्स रंग बोध (Colour Perception) का महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करते हैं।

टिप्पणी

4.7 अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर योग का प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, त्वचा मनुष्य को ईश्वर द्वारा प्रदत्त वह सर्वश्रेष्ठ सुरक्षात्मक आवरण होता है, जिस पर न धूप कोई विशेष प्रभाव डालती है, न ही सर्दी तथा बारिश से भीगने पर भी यह आवरण ज्यों का त्यों बना रहता है। मनुष्य की सौ वर्ष की आयु (जीवेम् शरदः शतम्) तक यह आवरण मानव शरीर को गर्मी, सर्दी, बरसात से बचाता हुआ उसका साथ निभाता रहता है। सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करने के साथ–साथ यह आवरण मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास में भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका वहन करता है। मनुष्य के आंतरिक भावों की बाह्य अभिव्यक्ति भी इसी आवरण से होती है। त्वचा के साथ साथ अन्य ज्ञानेन्द्रियों का भी मानव जीवन में महत्व सर्वविदित एवं सर्वमान्य है। आंखों के बिना संसार अर्थहीन एवं कान के अभाव में सब शून्य अर्थात् शब्दहीन हैं।

उपरोक्त तथ्य मानव जीवन में अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों के महत्व को सिद्ध करते हैं, किन्तु यहां पर ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि विकृत आहार–विहार, भोगमय जीवनशैली, प्रदूषित वातावरण, धूल–धुंआ, मानसिक तनाव एवं नकारात्मक मनोवृत्ति इस तंत्र पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव रखते हैं। इन कारकों के परिणामस्वरूप इस तंत्र में नाना प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। वर्तमान काल में ए0सी0, शीतल गृहों एवं रेफ्रिजरेटरों का प्रयोग बहुत तेजी से बढ़ा है। इन उपकरणों में फ्रियोन नामक गैस का प्रयोग होता है। फ्रियोन गैस के वायुमण्डल में उत्सर्जन से सी0एफ0 सी0 के प्रभाव से पृथ्वी के चारों ओर उपस्थित ओजोन परत में छेद (Ozone Hole) हो रहे हैं। इस कारण सूर्य से खतरनाक पराबैंगनी किरणें (Ultra Violot Rays) पृथ्वी पर पहुंच रही हैं। धूप में पराबैंगनी किरणों (Ultra Violet Rays) की अधिकता के प्रभाव से त्वचा का कैन्सर, समाज में बहुत तेजी से फैल रहा है। इस प्रकार उपरोक्त कारकों के कारण फुंसी, फोड़े, खाज–खुजली, दर्द, एलर्जी एवं कैन्सर जैसे अनेक रोग समाज में बहुत तेजी से फैल रहे हैं। इन रोगों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है तथा इन रोगों की भयानकता को देखते हुए त्वचा रोग विशेषज्ञ बहुत चिन्तित हैं। आधुनिक समाज में इन रोगों से बचने के लिए अनेकों एलोपेथी दवाइयों, स्प्रे और लोशन आदि का प्रचलन काफी बढ़ा है, किन्तु रासायनिक पदार्थों के प्रभाव से रोगों पर नियंत्रण नहीं हो पा रहा है अपितु रोगियों की संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यहां पर यौगिक क्रियाओं का अभ्यास इस तंत्र को संजीवनी बूटी के रूप में प्रभावित करता है। यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से मनुष्य के अध्यावरणीय तंत्र पर सीधा और सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यौगिक क्रियाओं का अध्यावरणीय तंत्र पर प्रभाव इस प्रकार है–

योग का प्रारम्भ अनुशासन से होता है। अनुशासन के अन्तर्गत प्रातःकाल समय से उठना, नित्य कर्मों से विधि पूर्वक निवृत्त होना, प्रातःकालीन भ्रमण, सूर्य को अर्ध्य देना (प्रातःकालीन सूर्य रश्मियों को त्वचा पर ग्रहण करना), अनुशासनपूर्वक दिनभर के कार्य करना एवं रात्रि काल में विश्राम करना आदि बिन्दुओं का समावेश होता है। उपरोक्त सभी कारक

मनुष्य के अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों को सीधा और सकारात्मक रूप में प्रभावित करते हैं। इन कारकों के प्रभावों से अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता जीवन पर्यन्त उन्नत बनी रहती है। योग सुव्यवस्थित रुप में अनुशासित एवं सकारात्मक जीवन जीने की कला है। यह स्पष्ट तथ्य है कि विकृत आहार, नकारात्मक चिन्तन, चिन्ता, अवसाद, उग्रता आदि मनोवेगों को धारण करने से अध्यावरणीय तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जबकि इसके विपरीत शुद्ध सात्विक आहार, सकारात्मक विचार, प्रसन्नता, उत्साह एवं सकारात्मक व्यवहार से अध्यावरणीय तंत्र एवं शरीर की सभी ज्ञानेन्द्रियां दीर्घकाल तक स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त बनी रहती हैं। सकारात्मक विचारों एवं व्यवहार से शरीर की त्वचा का आभामण्डल तेजस्वी उन्नत अवस्था में बना रहता है। इसके साथ–साथ मानव अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर यौगिक क्रियाओं का प्रभाव इस प्रकार है–

1. षट्कर्म का प्रभाव

धौति, बस्ति आदि छह शोधन क्रियाएं अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों के शोधन में भी अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इन क्रियाओं के अभ्यास से अध्यावरणीय तंत्र विकारमुक्त, साफ–स्वच्छ एवं क्रियाशील बनता है। धौति क्रिया के अन्तर्गत वर्णित वमन क्रिया का अभ्यास पित्त दोष से उत्पन्न विकारों को नष्ट करता है। इसीलिए वमन क्रिया के अभ्यास से चेहरे पर फुन्सियां, त्वचा की खुजली, त्वचा पर पित्त के कारण लाल दानें आदि विकार ठीक होते हैं। नेति क्रिया नासिका का शोधन करने के साथ–साथ शरीर में एलर्जी रोग को दूर करती है। पाचन तंत्र के प्रमुख रोग कब्ज का मनुष्य के अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर बहुत नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। बस्ति, नौलि नामक शोधन क्रिया कब्ज रोग को समूल नष्ट करती है जिसका अच्छा प्रभाव अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर पड़ता है। इसी प्रकार षट्कर्म की शोधन क्रिया कपालभाति के लाभों पर प्रकाश डालते हुए महर्षि घेरण्ड कहते हैं–

शीतकृत्य पीत्वा वक्त्रेण नासानालैर्विरेचयेत। एवमभ्यासयोगेन कामदेव समो भवेत्।।

न जायते वार्द्धकं च ज्वरो नैव प्रजायते। भवेत्स्वच्छन्द देहश्च कफ दोषं निवारयेत्।।

(घेरण्ड संहिता 1/59–60)

अर्थात् शीतकार करता हुआ साधक मुख के द्वारा जल ग्रहण कर नासिका के द्वारा निकाल दे। यह क्रिया शीतक्रम कपालभाति कहलाती है। इसके द्वारा साधक का शरीर कामदेव के समान सुन्दर हो जाता है और वार्धक्य अर्थात् बुढ़ापा नहीं आता है, शरीर में स्वच्छता उत्पन्न होती है और कफदोष का निवारण होता है।

यहां पर महर्षि घेरण्ड का उपदेश अध्यावरणीय तंत्र को विकारमुक्त बनाने का संकेत करता है। इसी प्रकार कर्णरन्ध्र धौति का अभ्यास कानों की सफाई करता है और नाद की अनुभूति कराता है। त्राटक क्रिया का अभ्यास नेत्र की मांसपेशियों को स्वस्थ एवं

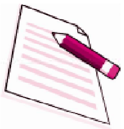

टिप्पणी

शक्तिशाली बनाता है। नेति क्रिया का अभ्यास नासिका, आंख और कान अर्थात् सभी इन्द्रियों पर बहुत लाभकारी प्रभाव रखता है। नियमित नेति क्रिया के अभ्यास से आंखों के नेत्र विकारों में विशेष लाभ की प्राप्ति होती है। इस विषय पर प्रकाश डालते हुए स्वामी चरणदास कहते हैं –

नाक, कान अरु दाँत को रोग न व्यायें कोइ।

निर्मल होवे नैन ही नेति करे सोइ।।

(भक्ति सागर)

2. आसन का प्रभाव

योगासनों का अध्यावरणीय तंत्र पर सीधा एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। नियमित आसनों का अभ्यास करने से शरीर की त्वचा की क्रियाशीलता, कान्ति एवं ओज–तेज में वृद्धि होती है। योगासनों का अभ्यास करने से त्वचा में झुर्रियां उत्पन्न नहीं होती हैं और दीर्घकाल तक यौवनावस्था बनी रहती है। योगासनों का अभ्यास करने से त्वचा में रक्त संचार भली–भांति होता रहता है जिसके फलस्वरुप त्वचा की क्रियाशीलता लम्बे समय तक बनी रहती है।

आसनों के क्रम में ताड़ासन, त्रिकोणासन, गरूड़ासन, नटराजासन, गोमुखासन, आकर्णधनुरासन, मण्डूकासन, कूर्मासन, सर्वांगासन, हलासन, कर्णपीड़ासन, मरकटासन, चक्रासन, भुजंगासन, धनुरासन, बकासन, टिटिभासन एवं मयूरासन आदि आसनों का नियमित अभ्यास करने से अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियां स्वस्थ–सक्रिय एवं रोगमुक्त बनी रहती हैं। इन आसनों के साथ–साथ सूर्य नमस्कार एवं प्रज्ञा योग आदि योगाभ्यास भी अध्यावरणीय तंत्र को स्वस्थ बनाते हैं। आसनों के प्रारम्भ में सूक्ष्म अभ्यास, सन्धि संचालन एवं वार्मअप अभ्यासों से शरीर से पसीना बाहर निकलता है जिससे अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है।

3. मुद्रा बंध का प्रभाव

मूलबंध, उड्डियानबंध एवं जालंधरबंध का अभ्यास मानव शरीर में ऊर्जा के स्तर को आन्तरिक रूप से सन्तुलन प्रदान करते हैं। इन यौगिक बन्धों का विधिपूर्वक नियमित अभ्यास करने से त्वचा एवं शरीर की इन्द्रियां स्वस्थ, क्रियाशील एवं ऊर्जावान बनती हैं। इसी प्रकार विपरीतकरणी, खेचरी आदि यौगिक मुद्राओं का अभ्यास करने से मनुष्य का अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियां रोगों से मुक्त एवं ऊर्जावान बनी रहती हैं।

4. प्रत्याहार का प्रभाव

आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार गलत आदतों के प्रभाव से त्रिदोषों में असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है। शरीर में त्रिदोषों के असन्तुलन में प्रज्ञापराध एक महत्वपूर्ण कारण है।

प्रज्ञापराध से अभिप्राय ज्ञान होने के उपरान्त भी गलत क्रियाओं को करने अथवा सरल शब्दों में जानबूझकर प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने से होता है। वर्तमान काल की भौतिकवादी जीवनशैली जिसमें दिनभर कम्प्यूटर–लैपटॉप, मोबाइल फोन का प्रयोग दिनचर्या का अंग बन गये हैं। इसी प्रकार रात्रिकाल में देर तक जागना, सुबह देरी तक सोना, गलत मुद्राओं में कार्य करना, गलत खान–पान, फ्रिज–कूलर, ए.सी. का अत्यधिक प्रयोग जैसी गलत आदतें, इन्द्रियों पर असंयम और इलैक्ट्रोनिक उपकरणों से निकलने वाली खतरनाक विकिरणों (रेडियेशनों) ने शरीर की त्वचा एवं शरीर की सभी ज्ञानेन्द्रियों जैसे आंख, नाक, कान आदि पर बहुत नकारात्मक प्रभाव डाला है और साथ ही साथ मनुष्य की इन्द्रियों की शक्ति भी बहुत क्षीण बना दी है। इसके परिणाम–स्वरूप नाना प्रकार की आधि (मानसिक रोग) एवं व्याधि (शारीरिक रोग) समाज में बहुत तेजी से पनपती जा रही हैं। इस विषय पर प्रकाश डालते हुए भर्तृहरि ऋषि कहते हैं–

भोगों न भुक्ता वयमेव भुक्तास्तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः।

कालो न यातो वयमेव याताः तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः।।

(वैराग्यशतक)

अर्थात् भोग को हम नहीं भोगते अपितु भोग ही हमें भोग लेते हैं। तप नहीं तपा जाता, हम स्वयं तप जाते हैं। काल का अन्त नहीं होता है, हम ही काल में समा जाते हैं और जीवन में तृष्णाएं जीर्ण नहीं होती अपितु हम जीर्ण हो जाते हैं।

यहाँ पर प्रत्याहार के पालन अर्थात् इन्द्रियों पर संयम का अपना अत्यन्त विशिष्ट महत्व है। प्रत्याहार का पालन करने से मनुष्य का स्वयं पर नियंत्रण एवं संयम रहता है। स्वयं पर संयम के फलस्वरूप वह सांसारिक विषयभोगों में लिप्त होने के स्थान पर त्यागपूर्वक भोग की भारतीय वैदिक परम्परा का अनुसरण करता है। इसके फलस्वरुप मनुष्य भौतिकता एवं आध्यात्मिकता में संतुलन उत्पन्न होता है और मनुष्य अपने जीवन के मूल लक्ष्य की ओर अग्रसर होता हुआ ईश्वरीय आनन्द में लीन रहता है।

5. प्राणायाम का प्रभाव

अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों को स्वस्थ्य एवं रोगमुक्त बनाने में प्राणायाम बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नियमित प्राणायाम करने से शरीर की त्वचा को शुद्ध प्राणवायु अर्थात् ऑक्सीजन (O_2) प्राप्त होती है। इसीलिए त्वचा रोगों में नियमित रुप से एवं विधिपूर्वक प्राणायाम करने से बहुत लाभ प्राप्त होता है। प्राणायाम के अभ्यास से प्राणायाम के क्रम में अनुलोम–विलोम, नाड़ी शोधन, सीत्कारी, शीतली, भ्रामरी एवं भस्त्रिका आदि का अभ्यास करने से अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

टिप्पणी

6. ध्यान का प्रभाव

तनाव एवं उत्तेजित अवस्था में रहने से शरीर के अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर बहुत नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मानसिक आवेगों–संवेगों से ग्रस्त रहने पर विभिन्न त्वचा रोग उत्पन्न होते हैं तथा असमय त्वचा में झुर्रियां उत्पन्न हो जाती हैं। ज्ञानेन्द्रियों की कार्यक्षमता भी क्षीण हो जाती है। जबकि इसके विपरीत नियमित रूप से ध्यान, स्थिरता एवं एकाग्रता का अभ्यास करने से शरीर में अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्राव अर्थात् हार्मोन्स संतुलित (Hormonal Balance) होते हैं। हार्मोन्स के संतुलित रहने पर शरीर की चयापचय दर (Metabolism) सन्तुलित होती है और शरीर में समस्थिति उत्पन्न होती है, जिससे परिणाम स्वरुप अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियां स्वस्थ–सक्रिय एवं रोगमुक्त रहती हैं।

7. समाधि का प्रभाव

समाधि अर्थात् सकारात्मक भावों का अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मन में सकारात्मक भाव एवं सकारात्मक विचारों के प्रभाव से त्वचामण्डल में विशेष आभा एवं कान्ति का निर्माण होता है। स्वार्थ की संकीर्णता का त्याग करते हुए मन में सकारात्मक भावना, प्रसन्नता, सन्तुष्टि, सहयोग एवं परोपकार के भाव रखने से अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियां जीवन पर्यन्त रोगमुक्त एवं स्वस्थ–सक्रिय बनी रहती हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि यौगिक जीवनशैली एवं यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से मनुष्य का अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियां स्वस्थ–सक्रिय एवं रोगमुक्त बनते हैं। अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों पर निम्नलिखित पथ्य आहार सकारात्मक एवं अपथ्य आहार नकारात्मक प्रभाव रखता है–

पथ्य आहार– हरी पत्तेदार सब्जियां जैसे पालक, मैथी, चौलाई, चना, सहजन, गाजर, चकुन्दर, टमाटर, आँवला, सोयाबीन, खीरा, अंकुरित अन्न, मौसमी फल जैसे आम, पपीता, सेब, सन्तरा, मौसमी, नींबू, दूध–दही, पनीर, घी, सूखे मेवे जैसे– बादाम, मुनक्का, किशमिश, काजू, अखरोट, हल्दी का सेवन, ऐलोविरा का लेप एवं नारियल तेल अथवा सरसों के तेल की मालिश त्वचा एवं ज्ञानेन्द्रियों पर सकारात्मक प्रभाव रखती है।

अपथ्य आहार– समुद्री नमक, चीनी, चाय, कॉफी, तम्बाकू, रासायनिक शीतल पेय (कोल्ड ड्रिंक्स), तला–भुना, बासी खाद्य पदार्थ, चाइनीज फूड जैसे– चाऊमीन, मोमोज, पिज्जा, बर्गर, फास्ट फूड, फ्रिज का ठण्डा पानी आदि।

यूनिटगत प्रश्न 4.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. त्वचा में उपस्थित ....नामक तत्व शरीर की अल्ट्रा वायलेट किरणों से रक्षा करता है।
2. मानव नेत्र का सबसे आन्तरिक भाग.................................... कहलाता है।
3. मध्यकर्ण में सुनने की क्रिया में भाग लेने वाली .... प्रमुख अस्थियां उपस्थित रहती हैं।
4. मनुष्य में त्वचा के वर्ण का निर्धारण .... नामक रंजक पदार्थ से होता है।
5. भक्तिसागर नामक ग्रन्थ के रचयिता स्वामी .... हैं।

ख) सही विकल्प चुनें–

1. अध्यावरणीय तंत्र का कार्य है–
   - a) शरीर को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करना
   - (b) शरीर को सुन्दर आकृति प्रदान करना
   - c) बाह्य वातावरण से संवेदनाओं को ग्रहण करना
   - d) उपरोक्त सभी।
2. त्वचा किस वर्ग का ऊतक है–
   - a) संयोजी ऊतक
   - b) पेशीय ऊतक
   - c) उपकला ऊतक
   - d) तंत्रिकीय ऊतक
3. मनुष्य का कर्ण कितनी डेसीबल की ध्वनि को सुनने में सक्ष्म होता है–
   - a) 2 से 20 हर्टज
   - b) 5 से 50 हर्टज
   - c) 20 से 20,000 हर्टज
   - d) 50 से 50,000 हर्टज
4. मानव शरीर के किस अंग का आकार जीवन पर्यन्त एकसमान बना रहता है –
   - a) मुँह
   - b) आंख
   - c) कान
   - d) त्वचा

टिप्पणी

5. वर्तमान काल में बढ़ते त्वचा कैन्सर का प्रमुख कारण है—

a) ग्रीन हाऊस इफैक्ट b) ओजोन हॉल

c) ग्लोबल वार्मिंग d) कोहरा

ग) सही अथवा गलत बताइए—

1) मानव शरीर में त्वचा का क्षेत्रफल 1.8 वर्ग मीटर होता है। ( )

2) त्वचा की बाहरी परत एपीडरमिस का निर्माण निर्जीव कोशिकाओं से होता है। ( )

3) अन्तःत्वचा को वास्तविक त्वचा नहीं कहा जा सकता है। ( )

4) जीभ में स्थित रसांकुर केवल ठोस अवस्था में ही उद्दीपन ग्रहण करते हैं। ( )

5) मध्य कर्ण के अन्दर एवं बाह्य दबाव में अधिक अन्तर होने पर कान का परदा फट सकता है। ( )

घ) एक शब्द में उत्तर दीजिए —

1) मानव शरीर का कौन सा अंग सम्पूर्ण शरीर को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करता है?

2) मनुष्य में नाखून का निर्माण करने वाली कोशिकाओं का नाम लिखिए।

3) मानव शरीर में बालों को काला रंग प्रदान करने वाले रंजक पदार्थ का नाम लिखिए।

4) आँखों द्वारा रंग की पहचान करने वाली कोशिकाओं के नाम लिखिए।

5) वातावरण में ध्वनि की गति कितनी होती है?

आपने क्या सीखा?

इस यूनिट में आपने सीखा कि —

- मानव शरीर को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करने में एवं बाह्य वातावरण से संवेदनाओं को ग्रहण करने में अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों की अत्यन्त विशिष्ट भूमिका होती है।
- अध्यावरणीय तंत्र एवं ज्ञानेन्द्रियों के अभाव में मानव जीवन अर्थहीन सा प्रतीत होता है जिसकी पूर्णता की कल्पना भी अधूरी हो जाती हैं।

- मानव शरीर में ज्ञानेन्द्रियां एक ओर जहां ज्ञान को ग्रहण करती हैं वहीं दूसरी ओर मुक्ति प्राप्त करने का सबसे महत्वपूर्ण साधन होती है।

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव ज्ञानेन्द्रिय तंत्र को समझाते हुये इस पर यौगिक प्रभाव की विवेचना कीजिए।
2. मानव शरीर में ज्ञानेन्द्रियों के प्रकारों को उदाहरण सहित समझाइये।
3. मानव शरीर में पेशियों के कार्यों एवं महत्व का सविस्तार वर्णन कीजिए।
4. मानव शरीर में निम्न ज्ञानेन्द्रिय की संरचना एवं क्रियाविधि पर टिप्पणी लिखिये–

   क) आँख   ख) कान

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

4.1

क	ख	ग	घ
1– मैलेनिन	1– d	1– सही	1– त्वचा
2– रेटिना	2– c	2– सही	2– कैरोटिन
3– तीन	3– c	3– गलत	3– मैलेनिन
4– मैलेनिन	4– b	4– गलत	4– रोड्स तथा कोन्स
5– चरणदास	5– b	5– सही	5– 332 मीटर प्रति सेकण्ड

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजू तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।

टिप्पणी

6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0)।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ।

5

पाचन तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, पूर्व की यूनिटों में आपने मानव शरीर को आधारभूत संरचना प्रदान करने वाले तीन महत्वपूर्ण तंत्रों के विषय में जाना। आपने जाना कि अस्थियां मानव शरीर के लिए आधारभूत संरचना का निर्माण करती है। पेशियां मानव शरीर रुपी संरचना को गतिशील बनाने का कार्य करती हैं और त्वचा इस शरीर को सुरक्षात्मक आवरण प्रदान करते हुए बाहरी संवेदनाओं को ग्रहण करने का कार्य करती हैं। अब यहां पर यह प्रश्न उत्पन्न होना स्वाभाविक है कि इस शरीर को कार्य करने के लिए ऊर्जा कहां से प्राप्त होती है? हम स्थूल रुप से यह मान भी लें कि शरीर को ऊर्जा आहार से प्राप्त होती है, तब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि आहार से किस प्रकार शरीर ऊर्जा प्राप्त करता है, कौन—कौन से अंग आहार के पाचन की क्रिया में भाग लेते हैं तथा पाचन तंत्र में कौन— कौन सी क्रियाएं होती हैं?

प्रिय शिक्षार्थियों, आपको यह भी समझना आवश्यक है कि, मानव शरीर में प्रत्येक अंग एवं तंत्र का अपना विशेष महत्व एवं उपयोगिता होती है परन्तु मानव शरीर के सभी तंत्रों में पाचन तंत्र विशेष महत्वपूर्ण इसलिए होता है क्योंकि सभी तंत्रों को कार्य करने के लिए ऊर्जा पाचन तंत्र से ही प्राप्त होती है। पाचन तंत्र के स्वस्थ एवं सक्रिय रहने पर शरीर के अन्य सभी तंत्र भी ऊर्जावान बने रहते हुए अपने—अपने कार्यों को भलीभांति संपादित करते रहते हैं, जबकि पाचन तंत्र में विकार उत्पन्न होने पर शीघ्र ही शरीर के दूसरे अन्य तंत्र भी रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं। इस संदर्भ में 'पेट स्वस्थ—शरीर स्वस्थ' एवं 'सभी रोग पेट से जन्म लेते हैं' आदि लोकोक्तियाँ पाचन तंत्र के महत्व को स्पष्ट करती हैं।

यहां पर विषय को सरल भाषा में उदाहरण के माध्यम से समझें तो जिस प्रकार एक गाड़ी को चलने के लिए पेट्रोल की आवश्यकता पड़ती है, ठीक उसी प्रकार मानव शरीररुपी गाड़ी को

टिप्पणी

गतिमान रहने के लिए ग्लूकोजरुपी ईधन की आवश्यक्ता पड़ती है। शरीर को यह ग्लूकोजरुपी ईंधन भोजन से प्राप्त होता है। मानव शरीर में पाचन तंत्र भोजन के पाचन के फलस्वरुप ग्लूकोज को ग्रहण कर शरीर को प्रदान कर देता है एवं शेष अनुपयोगी पदार्थ को मल के रुप में बाहर उत्सर्जित करने का कार्य करता है।

इस यूनिट में हम, पाचन तंत्र के स्वरुप को समझने, इसके महत्व को जानने और योगाभ्यास के प्रभाव का सविस्तार अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस यूनटि के अध्ययन के बाद आप –

- पाचन तंत्र का सामान्य परिचय समझा सकेगें;
- पाचन तंत्र की व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे;
- पाचन तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि का वर्णन कर सकेंगे;
- पाचन तंत्र के महत्व को समझा पायेगें;
- पाचन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या करने में सक्षम हो पायेंगे।

5.1 मानव पाचन तंत्र का सामान्य परिचय एवं परिभाषा

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर को प्रतिक्षण आन्तरिक एवं बाह्य कार्यों को करने के लिए निरन्तर ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इस ऊर्जा को मनुष्य आहार से प्राप्त करता है, किन्तु जिस रूप में मनुष्य आहार या भोजन ग्रहण करता है वह उसकी जटिल अवस्था (Complicated Form) होती है। जटिल अवस्था में आहार शरीर के लिए अनुपयोगी होता है। अतः सर्वप्रथम आहार को शरीरोपयोगी बनाने हेतु उसे सरल रूप (Simple Form) में परिवर्तित करना होता है। भोजन को जटिल से सरल रूप में परिवर्तित करने की क्रिया पाचन (Digestion) कहलाती है।

''वे सभी भौतिक एवं रासायनिक परिवर्तन (क्रियाएं), जिनके फलस्वरूप आहार शरीरोपयोगी अर्थात् शरीर द्वारा ग्रहण करने योग्य बनाया जाता है, पाचन (Digestion) कहलाती है। जो–जो अंग इन पाचन क्रियाओं में भाग लेते हैं, पाचन अंग (Digestive Organ) तथा जिस तंत्र के अर्न्तगत पाचन क्रिया पूर्ण होती है, पाचन तंत्र (Digestive System) कहलाता है।''

पाचन तंत्र को हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं–

" मानव शरीर के अन्दर भोजन के जटिल पोषक पदार्थों एवं बड़े अणुओं को विभिन्न रासायनिक क्रियाओं तथा एंजाइम्स की सहायता से सरल, छोटे एवं घुलनशील अणुओं में परिवर्तित करने की क्रिया **पाचन** (Digestion) कहलाती है। मानव शरीर का वह तंत्र जो पाचन क्रिया को पूर्ण करता है, पाचन तंत्र (Digestive System) कहलाता है।"

"The Digestive System consists of the parts of the body that work together to turn food and liquids into the building blocks and fuel that the Body needs." It is uniquely designed to turn the food into Nutrients which the Body uses for Energy, Growth and Cell repair.

अब मानव पाचन तंत्र के अर्थ को समझने के उपरान्त, इसकी संरचना को जानने की जिज्ञासा उत्पन्न होती है। अतः अब पाचन तंत्र की संरचना पर विचार करते हैं–

5.2 मानव पाचन तंत्र की संरचना (Structure of Human Digestive System)

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य का पाचन तंत्र 28 से 32 फीट (लगभग 9 मीटर) लम्बी और अनैच्छिक पेशियों से निर्मित एक जटिल संरचना (Complicated Structure) होती है, जो मुख से प्रारम्भ होकर गुदा (Mouth to Anus) तक फैली होती है। यह संरचना पाचन पथ (Gastro Intestinal Track) कहलाती है।

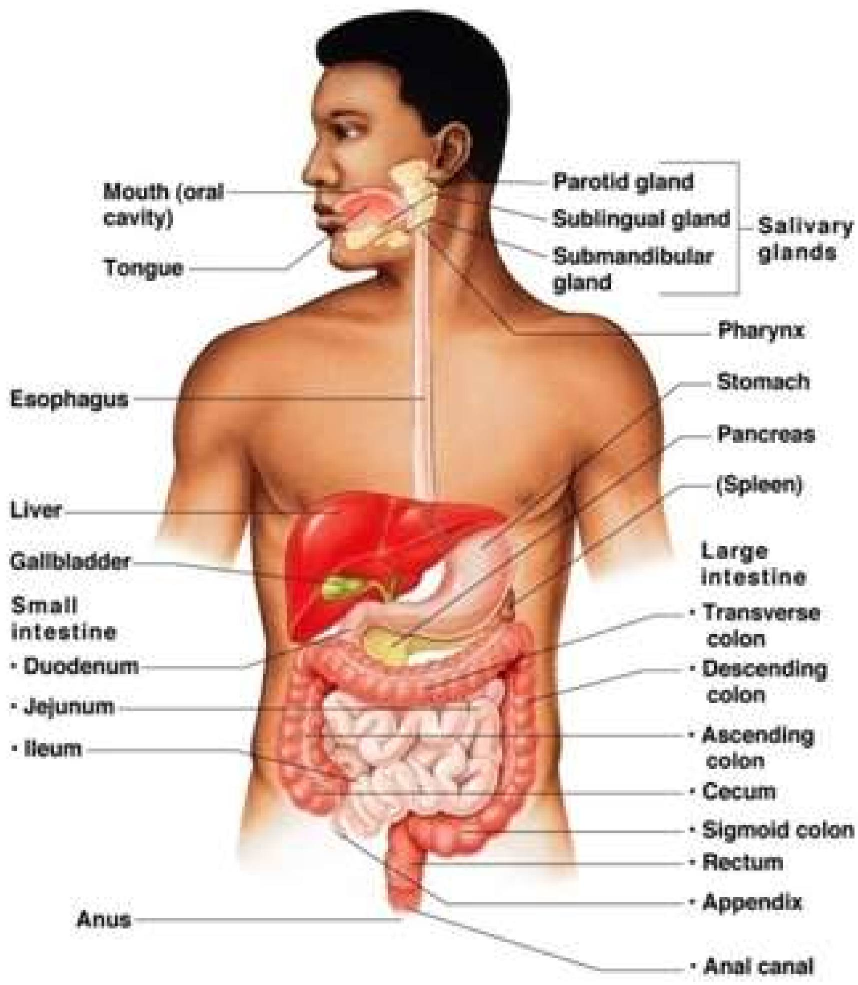

चित्र 5.1: मानव पाचन तंत्र

टिप्पणी

मनुष्य के पाचन तंत्र के अन्तर्गत कौन–कौन से पाचन अंगों का समावेश होता है– आइये जानें:

- मुखीय गुहा (Oral cavity)
- ग्रसनी (Pharynx)
- ग्रासनलिका (Esophagus)
- आमाशय (Stomach)
- क्षुद्रान्त्र अथवा छोटी आंत (Small Intestine)
- बृहदान्त्र अथवा बडी आंत (Large Intestine)
- मलाशय (Rectum)
- गुदीय नलिका (Anal Canal)
- गुदा अथवा मलद्वार (Anus).

यहां पर यह भी समझना चाहिए कि उपरोक्त अंग पाचन क्रिया में प्रधान अथवा प्राथमिक अंग के रुप में क्रियाशील रहते हैं जबकि इनके साथ–साथ निम्न सहायक अंग भी पाचन क्रिया में सक्रिय रुप से भाग लेते हैं –

- दाँत (Teeth)
- जिह्वा (Tongue)
- तीन जोड़ी लार ग्रन्थियां (Salivary Glands)
- अग्नाशय या पैन्क्रियाज (Pancreas)
- यकृत (Liver)

इन पाचन अंगों की संरचना एवं क्रियाविधि का वर्णन इस प्रकार है –

5.2.1 मानव मुखीय गुहा की संरचना (Structure of Oral Cavity or Buccal Cavity)

मनुष्य में पाचन तंत्र का प्रारम्भ मुखीय गुहा से होता है। मुखीय गुहा में दाँत, जिह्वा एवं तीन जोड़ी लार ग्रन्थियां उपस्थित होती हैं।

दाँत, जीभ एवं लार ग्रन्थियाँ (Teeth, Tongue & Salivary Glands)

दाँत मनुष्य के पाचन तंत्र में भाग लेने वाले महत्वपूर्ण सहायक अंग हैं, जिनका निर्माण कैल्शियम तत्व से होने के कारण इन्हें कैल्शिभूत इकाई (Calcified structure) कहा जाता है। मुख से ग्रहण किया भोजन सर्वप्रथम दाँतों द्वारा काटा–चबाया एवं पीसा जाता है। शरीर में

उत्पत्ति के आधार पर दाँतों के दो प्रकार होते हैं, प्रथम अस्थाई दाँत (Temporary Teeth) और दूसरे स्थाई दाँत (Permanent Teeth)। अस्थाई दाँत मुख में आने के कुछ समय बाद टूट जाते हैं और फिर पुनः दूसरी बार आते हैं। इन्हें दूध के दाँत (Milk Teeth) भी कहा जाता है और इनकी संख्या 20 होती है जबकि दूसरे स्थाई दाँत (Permanent Teeth) होते हैं, जो जीवन में एक बार ही आते हैं और इनकी संख्या 12 होती है। इस प्रकार मनुष्य के मुख में कुल 32 दाँत होते हैं। संरचना के अनुसार मनुष्य के मुख में इनसाईजर, केनायन, प्रीमोलर और मोलर (Incisors, Canines, Premolars & Molars) नामक चार प्रकार के दाँत होते हैं।

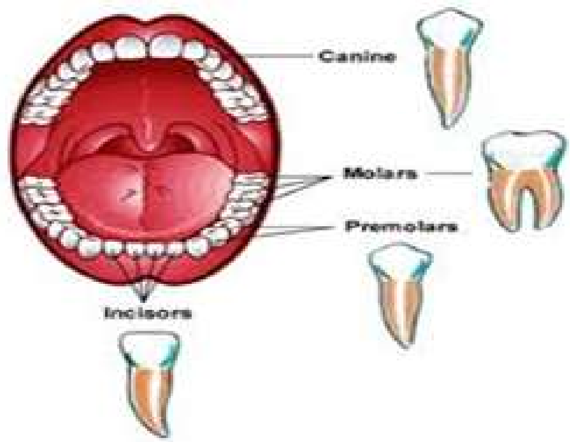

चित्र 5.2: दाँत की संरचना

मनुष्य के दाँतों का निर्माण कैल्शियम नामक तत्व से होता है, तथा दाँतों के ऊपर मानव शरीर का सबसे कठोरतम पदार्थ इनेमल (Enamel) का लेप चढ़ा होता है। यह इनेमल (Enamel) दाँतों को कठोरता प्रदान करने के साथ—साथ दाँतों की सुरक्षा करने का कार्य करता है। भोजन में अधिक गर्म और अधिक ठण्डे पदार्थों का प्रयोग करने से दाँतों पर इनेमल (Enamel) की परत को हानि पहुँचती है, इसके साथ—साथ दाँतों की नियमित रुप से सही प्रकार सफाई नहीं करने अथवा नुकीले—तेज पदार्थों को दाँतों पर प्रयोग करने से इनेमल का स्तर दाँतों से हट जाता है। इनेमल का स्तर दाँतों से हटने पर दाँत बहुत कमजोर हो जाते हैं और दाँतों में ठण्डा—गर्म पानी लगना, दाँतों में दर्द—सूजन एवं मुह में संक्रमण आदि जटिलताएं (रोग) प्रारम्भ हो जाती हैं। मनुष्य के मुंह का निचले दाँतों वाला जबड़ा (Lower Jaw) ही इधर—उधर गति कर सकता है, जबकि ऊपरी जबड़ा (Upper Jaw) एक स्थान पर स्थिर रहता है।

पाचन तंत्र के प्रमुख सहायक अंग के रुप में जीभ (Tongue) पाचन क्रिया में महत्वपूर्ण भाग निभाती है। मुख में उपस्थित जीभ भोजन के स्वाद का पता लगाने के साथ—साथ भोजन को चबाने हेतु दाँतों के मध्य लाना, भोजन के बारीक होने पर निगलने में सहायता करना एवं मुख में दाँतों की सफाई, जैसे महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करती रहती है।

मानव मुखीय गुहा में तीन जोड़ी लार ग्रन्थियाँ (Three Pairs of Salivary Glands) उपस्थित होती हैं। इन लार ग्रन्थियों को पेरोटिड ग्लैण्ड (Parotid Glands), अधिजिह्वीय (Sublingual

टिप्पणी

gland) व अधिहन्वीय (Submandibular gland) कहा जाता है। लार ग्रथियाँ प्रतिक्षण मुख में लार का स्रावण करती रहती हैं जिसके फलस्वरुप मुख का भीतरी भाग सदैव गीला बना रहता है। इसके साथ–साथ भोजन करते समय यह लार अधिक मात्रा में स्रावित होकर भोजन में मिलकर उसे गीला कर निगलने योग्य बनाती है। मनुष्य में लार ग्रन्थियाँ प्रतिदिन 1 से 1.5 लीटर लार का स्रावण करती है। लार ग्रन्थियों पर मस्तिष्क का नियंत्रण होता है, इसीलिए ध्यानपूर्वक भोजन ग्रहण करने की अवस्था में लार का स्रावण पर्याप्त मात्रा में होता है, जिससे भोजन का पाचन सही प्रकार होता है।

5.2.2 ग्रसनी (Pharynx)

मुखीय गुहा के पीछे वाला भाग कीप के समान रचना के साथ जुड़ा होता है। यह रचना ग्रसनी **(Pharynx)** कहलाती है। इसका कार्य मुखीय गुहा से भोजन को ग्रासनली (Esophagus) तक पहुंचाना होता है। ग्रसनी मुख का वह भाग होता है, जहाँ से मुख में चबाया हुआ भोजन एवं नासिका से ग्रहण किया श्वास अर्थात भोजन एवं श्वास दोनों एक–समान रूप से गुजरते हैं। यहाँ से आगे बढ़ता हुआ भोजन ग्रासनली (Esophagus) में चला जाता है।

5.2.3 ग्रासनली या भोजन नलिका (Esophagus)

ग्रसनी से होता हुआ भोजन ग्रासनली में पहुंच जाता है। ग्रासनली के मुख पर एक पत्ती के समान रचना कण्ठच्छद (Epiglottis) ढक्कन के रूप में उपस्थित होता है। यह एपिग्लोटिस भोजन निगलते समय वायुनलिका को तथा श्वास लेते समय ग्रासनलिका को बन्द कर देता है, जिस कारण भोजन ग्रासनली में एवं श्वास वायुनलिका में ही प्रवेश करता है। ग्रासनली मुख से आमाशय तक दस इंच लम्बी एवं एक इंच व्यास वाली रचना होती है, जिसका निर्माण लचीली माँसपेशियों से होता है।

5.2.4 आमाशय (Stomach)

मानव शरीर में वक्षीय गुहा (Thoracic Cavity) के नीचे उदरीय गुहा (Abdominal Cavity) स्थित होती है। उदरीय गुहा मानव शरीर की सबसे बड़ी गुहा होती है। इस गुहा में आमाशय, छोटी आंत, बड़ी आंत, यकृत, पित्ताशय एवं अग्नाशय आदि अंग स्थित होते हैं। **उदरीय गुहा में बाई पसलियों के नीचे नौ इंच लम्बी एक थैले के आकार की रचना होती है। यह रचना आमाशय (Stomach) कहलाती है।** आमाशय का आकार एवं आकृति मनुष्य द्वारा ग्रहण किए भोजन के अनुसार बदलती रहती है। आमाशय की सामान्य क्षमता एक से दो लीटर तक भोज्य सामग्री ग्रहण (Stomach have one to two litre Capacity) करने की होती है। इसके अन्दर वास्तविक खाली स्थान नहीं होता है अपितु भोजन से खाली होने पर इसकी दोनों दीवारें आपस में मिली रहती हैं, जो आहार के आने पर फैल जाती है। आमाशय में भोजन आने पर तालबद्ध गति (Rhythmic Movement) से संकुचन उत्पन्न होते हैं, जिनके फलस्वरूप भोजन में पाचक रस मिलाया जाता है। यहीं पर भोजन में हाईड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) मिलाया

टिप्पणी

जाता है, जिससे भोजन की कठोरता नष्ट हो जाती है और भोजन नरम तथा सरल हो जाता है। आमाशय में भोजन का रूकना भोजन की प्रकृति (Nature Like Heavy or Light Diet) पर निर्भर करता है। हल्का सुपाच्य भोजन जल्दी (दो से तीन घंटे) आगे छोटी आंत में चला जाता है, जबकि गरिष्ठ एवं भारी भोजन आमाशय में देर तक रूकता है। यही कारण होता है कि मनुष्य को भोजन ग्रहण करने के कम से कम चार से छः घंटे बाद यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने का निर्देश दिया जाता है। आमाशय में भोजन का आंशिक पाचन (Partially Digestion) हो जाता है। इसके पश्चात् पचा हुआ भोजन लुगदी के रूप में छोटी आंत में पहुंच जाता है और आमाशय पुनः खाली हो जाता है। आमाशय के खाली होने पर उसमें पैदा होने वाले संकोचों से हमें भूख की अनुभूति (Feeling of Hunger) होने लगती है।

5.2.5 क्षुद्रान्त्र अथवा छोटी आंत (Small Intestine)

मनुष्य में छोटी आंत कुण्डली के रूप में (Coiled Form) फैली होती है। इसकी लम्बाई लगभग 22 फीट (6.5 मीटर) होती है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि आकार के दृष्टिकोण में छोटी आंत बड़ी आंत से लम्बी होती है किन्तु परिधि में छोटी होने के कारण इसे छोटी आंत की संज्ञा दी जाती है। छोटी आंत की संरचना का अध्ययन इसे निम्न तीन भागों में बांटकर किया जाता है–

क) ग्रहणी (Duodenum)

ख) मध्यान्त्र या जेजुनम (Jejunum)

ग) शेषान्त्र या इलियम (Ileum)

प्रिय शिक्षार्थियों, छोटी आंत का प्रारम्भिक भाग अंग्रेजी भाषा के अक्षर 'C' के आकार का होता है जो ग्रहणी (Duodenum) कहलाता है। ग्रहणी भोजन के पाचन की दृष्टि से पाचन तंत्र का बहुत महत्वपूर्ण भाग होता है। छोटी आंत के इस ग्रहणी नामक भाग में यकृत (Liver) से आने वाला पित्त (Bile) तथा पेन्क्रियाज से आने वाला पेन्क्रियेटिक स्राव (Pancreatic Secretion) आकर भोजन में मिल जाता है। भोजन में इन स्रावों के मिलने से प्रोटीन, स्निग्ध पदार्थों एवं कार्बोज का पाचन होने लगता है अर्थात् भोजन के यह तत्व जटिल से सरल रुप में परिवर्तित होने लगते हैं। प्रोटीन की कमी से क्वाशियोरकर नाम रोग हो जाता है। भोजन में उपस्थित इन शरीरोपयोगी तत्वों का पाचन इसी भाग की क्रियाशीलता पर निर्भर करता है। यहां पर महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि पित्त में कोई भी पाचक रस अर्थात् एन्जाईम उपस्थित नहीं होता है अपितु पित्त का सबसे महत्वपूर्ण कार्य भोजन के अम्लीय स्वभाव को क्षारीय अथवा उदासीन बनाना होता है। परन्तु भोजन में गरिष्ठ, तैलीय, अत्यन्त तीक्ष्ण एवं अम्लीय स्वभाव के पदार्थों का अधिक सेवन करने से यकृत से उत्पन्न पित्त रस भी इन्हें उदासीन प्रकृति में परिवर्तित नहीं कर पाता है। ऐसी अवस्था में अम्लीय पदार्थ पक्वाशय की झिल्लियों पर नकारात्मक प्रभाव डालते हुए आंत के इस भाग में, घाव पैदा कर देते हैं जिसे, अल्सर रोग (Ulcer) कहा जाता है। यह अत्यन्त गंभीर रोग है जिसका सम्बन्ध आंत से होता है।

छोटी आंत का अगला भाग मध्यान्त्र या जेजुनम (Jejunum) एवं अन्तिम भाग शेषान्त्र या इलियम (Ileum) कहलाता है।

छोटी आंत पाचन और अवशोषण (Digestion & Absorption) के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण है। छोटी आंत के जेजुनम और इलियम भाग में तौलिए के रोए के समान उभारनुमा रचनाएं पाई जाती है, इन रचनाओं को आन्त्रंकुर या रसांकुर या विलाई (Villi) कहते हैं। इनकी संख्या लाखों में होती है। विलाई आंतों के अन्दर की सतह को कई गुणा बढ़ाते हुए भोजन से सारतत्व को अवशोषित करने का कार्य करती है। यहां महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि छोटी आंत में स्थित विलाई के द्वारा शरीर में भोजन का अवशोषण होता है। विलाई नामक चूषक कोशिकाएं भोजन से पोषक तत्वों को अवशोषित करते हुए इन्हें रक्त में मिलाने का कार्य करती है। छोटी आंत में लहरदार क्रमानुकुंचन गतियां (Peristalsis Movement) पाई जाती हैं, जिसके कारण भोजन धीरे–धीरे आंतों में आगे बढ़ता रहता है।

5.2.6 बृहदान्त्र अथवा बड़ी आंत (Large Intestine)

शिक्षार्थियों, बड़ी आंत को चिकित्सकीय भाषा में कोलोन (Colon) कहा जाता है। यह लगभग दो मीटर लम्बी रचना होती है, जिसका कार्य भोजन में उपस्थित जल, लवण एवं विटामिन्स का अवशोषण करना होता है। बड़ी आंत पहले ऊपर की ओर आरोही कोलन (Ascending Colon) तत्पश्चात् क्षैतिज के समानान्तर अनुप्रस्थ कोलन (Transverse Colon) और अंत में नीचे की ओर अवरोही कोलन (Descending Colon) में होती है।

बड़ी आंत का पहला भाग सीकम (Caecum) कहलाता है। यह छोटी आंत से जुड़ा होता है। जिसके नीचे की ओर अंगुली के समान आकार की एक रचना होती है जिसे आंतपुच्छ (Appendix) कहा जाता है। कुछ वैज्ञानिक सीकम को एक अवशेषी अंग (Vestigial Organ) के रुप में स्वीकार करते हैं। यह आंतों में होने वाले संक्रमण को रोकने का कार्य करता है किन्तु कई बार इसमें भी संक्रमण हो जाता है जिसके कारण बहुत तीव्र वेदना होती है, जिसे अपैंडिसाइटिस (Appendix Pain) कहा जाता है। इस अवस्था में अपैंडिक्स का ऑपरेशन करके इसे काटकर निकाल दिया जाता है।

बड़ी आंत के क्षैतिज के समानान्तर अनुप्रस्थ भाग (Transverse Colon) के ऊपर ही आमाशय टिका होता है। यही कारण होता है कि अधिक भोजन कर लेने पर अथवा कुछ लोगों को भोजन करने के एकदम बाद मल त्याग की इच्छा होती है क्योंकि आहार लेने पर आमाशय का आकार बढ़ता है, जिससे बड़ी आंत पर दबाव पर पड़ता है और इसके परिणामस्वरूप बड़ी आंत के क्रियाशील होने पर मल त्याग की इच्छा होती है।

बड़ी आंत का अगला भाग क्रमशः **मलाशय (Rectum), गुदनलिका (Anal Canal), गुदा (Anus)** कहलाता है जिसमें आहार का अनुपयोगी शेष भाग पहले मल रूप में एकत्र होता रहता है तथा अंत में शरीर से बाहर उत्सर्जित कर दिया जाता है।

बड़ी आंत की लम्बाई लगभग 1.5 मीटर (1.5 से 1.8 मीटर) होती है। बड़ी आंत पाचन के दृष्टिकोण से विशेष महत्वपूर्ण नहीं होती है क्योंकि इसमें भोजन के जटिल अंश को सरल

टिप्पणी

रूप में परिवर्तित होने की कोई क्रिया नहीं होती है, अपितु यहां पर भोजन के अनुपयोगी अंश अर्थात् मल भाग से जल के पुनः अवशोषण (Water Reabsorption) की क्रिया होती है। जिसके परिणाम स्वरूप भोजन से उत्पन्न मल पदार्थ द्रवीय से ठोस आकार ग्रहण करने लगता है। यहां पर मल पदार्थ काफी समय तक रहता है। इस स्थान पर कुछ सूक्ष्म जीवाणु (Micro Bactria) उपस्थित रहते हैं जो आहार के अपचित अंशों पर किण्वन क्रिया (Fermentation) करते हैं। इस किण्वन क्रिया के द्वारा ये जीवाणु भोजन के अनुपयोगी अंश से विटामिन 'K' तथा विटामिन बी$_{12}$ ('B_{12}') का संशलेषण (Synthesis of Vit. K & Vit. B_{12}) करते हैं। इसके साथ—साथ किण्वन क्रिया के परिणाम स्वरूप अनेक विषैली गैसे जैसे कार्बन डाई ऑक्साइड (CO_2), अमोनिया (NH_3) तथा सल्फर डाई ऑक्साइड (SO_2) आदि भी उत्पन्न होती हैं। ये गैसें आँत से रक्त में अवशोषित (Gases Absorbed in Blood) हो जाती हैं। जिससे रक्त विकार एवं विभिन्न त्वचा रोग उत्पन्न होते हैं। यही कारण होता है कि भली—भाँति आंतों के साफ—स्वच्छ नहीं होने पर अर्थात् आंतों में मल पदार्थ भरे होने पर पेट में गैस अधिक बनती है तथा शरीर में रक्त विकार और त्वचा रोग उत्पन्न होते हैं।

यूनिटगत प्रश्न 5.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. भोजन को जटिल से सरल रूप में परिवर्तित करने की क्रिया................................ कहलाती है।
2. मनुष्य का पाचन तंत्र .... मीटर लम्बी रचना होती है।
3. मनुष्य के मुख में .... जोड़ी लार ग्रन्थियां होती है।
4. छोटी आंत का प्रारम्भिक भाग .... कहलाता है।
5. मनुष्य में भोजन का पाचन .... से प्रारम्भ होता है।

ख) बहुविकल्पीय प्रश्न—

1. मानव पाचन तंत्र का कार्य है—

   a) भोजन का पाचन करना   b) पोषक तत्वों को अवशोषित करना

   c) मल पदार्थों का शरीर से उत्सर्जन करना   d) उपर्युक्त सभी

2. मनुष्य में प्रोटीन का पाचन कहां से प्रारम्भ होता है—

   a) मुख से   b) आमाशय से

   c) छोटी आंत से   d) बड़ी आंत से

टिप्पणी

3. मनुष्य में प्रोटीन की कमी से कौन सा रोग होता है—

a)	रतोंधी	b)	एनीमिया
c)	स्कर्वी	d)	क्वाशियोकर

4. जल में घुलनशील विटामिन है—

a)	विटामिन 'A' और 'B'	b)	विटामिन 'B' और 'C'
c)	विटामिन 'C' और 'D'	d)	विटामिन 'A' और 'D'

5. बड़ी आंत का प्रथम भाग क्या कहलाता है—

a)	सीकम	b)	विलाई
c)	मलाशय	d)	गुदा

5.3 भोजन के पाचन की क्रियाविधि (Physiology of Food Digestion)

भोजन के पाचन का अर्थ इसके सरल बनने से होता है।

(Digestion is a process to break down food and nutrients into simple form).

मनुष्य के पाचन तंत्र में भोजन को सरल बनने की क्रिया, निम्न तीन स्थानों पर होती है अर्थात् आहार का पाचन निम्न तीन स्थानों पर होता है—

क) मुख में पाचन (Digestion in Mouth)

ख) आमाशय में पाचन (Digestion in Stomach)

ग) छोटी आंत में पाचन (Digestion in Small Intestine)

इन स्थानों पर आहार के भिन्न–भिन्न अंशों को सरलतम रुप में परिवर्तित कर दिया जाता है। इनका सविस्तार अध्ययन इस प्रकार है —

5.3.1 मुख में पाचन (Digestion in Mouth)

मनुष्य में भोजन का पाचन मुख से ही प्रारम्भ हो जाता है। भोजन सबसे पहले मुख में दाँतों द्वारा चबाया एवं पीसा जाता है अतः दाँत भोजन के भौतिक पाचन में भाग लेते हैं। इसके साथ–साथ मुख में उपस्थित लार ग्रन्थियों (Salivary Glands) से पैदा होने वाली लार भोजन में मिलाई जाती है। इसी समय जिह्वा में स्थित स्वाद कलिकाएं (Taste Buds) स्वाद का ग्रहण करती है। इसके साथ–साथ आहार का ठोस रूप भी यही पर नष्ट हो जाता है और आहार निगलने योग्य हो जाता है। लार में पाये जाने वाला सलिवेरी एमाइलेज (Salivary Amylase) नामक एन्जाइम स्टार्च (कार्बोहाइड्रेट) पर क्रिया करके उसे सरल रूप में बदल देता है। यही

टिप्पणी

कारण होता है कि यदि आहार को कुछ अधिक देर तक चबाया जाये तो कार्बोहाइड्रेट का पाचन होने के कारण वह मीठा लगने लगता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि मुख में कार्बोहाइड्रेट का आंशिक पाचन होता है।

5.3.2 आमाशय में पाचन (Digestion in Stomach)

आमाशय में आहार का पाचन आमाशयिक रस (Gastric Juice) द्वारा होता है। यह रस अनेक पदार्थों का मिला जुला रूप है, इसमें आमाशय में स्थित आक्सेन्टिक सैल्स (Oxyntic Cells) से पैदा होना वाला हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl) तथा कुछ एन्जाइम्स उपस्थित होते हैं। एसिड की उपस्थिति के कारण यहां पर आकर आहार अम्लीय स्वभाव (Acidic Nature) वाला हो जाता है। आमाशय में स्थित म्यूकस ,आमाशय की दीवारों पर एक पतला आवरण बनाकर रखती है, जिसके कारण आमाशय में उपस्थित एसिड आमाशय की दीवारों पर नकारात्मक प्रभाव अथवा दीवारों को हानि नहीं पहुंचा पाता है।

आमाशय में उत्पन्न अम्ल के प्रभाव से भोजन के साथ आने वाले जीवाणु भी नष्ट हो जाते हैं। आमाशय में प्रोटीन को पचाने वाला एन्जाइम, पेप्सिन पाया जाता है। यह पेप्सिन एन्जाइम (Pepsin Enzyme) हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के साथ मिलकर, एक तेज मिश्रण बनाता है, जो कि प्रोटीन पर क्रिया करके उन्हें पेप्टोन्स (Peptones) में बदल देता है। इस प्रकार यहां आमाशय में प्रोटीन का आंशिक पाचन होता है। यहीं पर एक दूसरा एन्जाइम रेनिन मिल्क प्रोटीन को पचाता है और कैल्शियम में मिलकर कैशिनेट बनाता हैं। यहीं पर स्थित लाइपेज नामक एन्जाइम वसा को थोड़ी सी मात्रा में पचाता है। यह वसा (फैट) को फैटी एसिड में बदल देता है। इसके बाद यहां से अर्द्ध पचित आहार छोटी आंत में भेज दिया जाता है। आहार का पूर्ण पाचन एवं अवशोषण छोटी आंत (Complete Digestion & Absorption in Small Intestine) में होता है।

5.3.3 छोटी आंत में पाचन (Digestion in Small Intestine)

मनुष्य की छोटी आंत में कार्बोहाइड्रेड, प्रोटीन एवं वसा का पूर्ण पाचन होता है। छोटी आंत के प्रारम्भिक भाग ड्योडिनम में यकृत (Liver) और पेन्क्रियाज (Pancrease) नामक ग्रन्थियों से उत्पन्न स्राव भोजन में मिला दिए जाते हैं, जिससे पाचन प्रक्रिया आगे बढ़ती है।

मनुष्य के उदरीय गुहा में दाहिनी ओर (Right side in Abdominal Cavity) शरीर की सबसे बड़ी ग्रन्थि यकृत उपस्थित होती है। इस ग्रन्थि से हरे–पीले रंग का पाचक द्रव्य पित्त उत्पन्न होता है, जो यकृत में बनने के बाद पित्ताशय (Gall Bladder) में एकत्र होता है और पित्त नलिका द्वारा छोटी आंत में मिलाया जाता है। पित्त क्षारीय स्वभाव (Basic Nature) का पाचक द्रव्य है, जो आमाशय से आने वाले अम्लीय प्रकृति के आहार को उदासीन (Neutral) बनाने का कार्य करता है। आहार के उदासीन होने पर ही अग्नाशय से उत्पन्न होने वाला अग्नाशयिक रस (Pancreatic Juice) भोजन पर कार्य करता है। यही कारण है कि यकृत में विकार उत्पन्न होने पर भोजन का पाचन भली–भांति नहीं हो पाता है।

अग्नाशय या क्लोम ग्रन्थि (Pancreas) पत्ती के समान आकार वाली रचना होती है, जो आमाशय के सामानान्तर नीचे की ओर स्थित होती है तथा अग्नाशयिक रस (Pancreatic Juice) का स्रावण करती है। इस अग्नाशयिक रस में एमिलेज, ट्रिप्सिन और लाइपेज नामक एन्जाइम्स उपस्थित होते हैं। एमिलेज स्टार्च को सरल रूप में परिवर्तित करता है, ट्रिप्सिन एन्जाइम प्रोटीन पर क्रिया करता है तथा लाइपेज वसा को सरल रूप में परिवर्तित करने का कार्य करता है।

छोटी आंत की दीवारें तीसरे महत्वपूर्ण आंत्रीय रस (Intestinal Juice) का स्रावण करती हैं। आंत्रीय रस में कई एन्जाइम्स उपस्थित होते हैं, जो कार्बोहाइड्रेट को उसके सरलतम रूप ग्लूकोज में, प्रोटीन को एमिनो अम्ल (Amino Acid) में तथा वसा को फेटी एसिड व ग्लिसरॉल में परिवर्तित कर देते हैं। इस प्रकार ग्रहण किया भोजन पूर्ण रूप से सरल रूप में परिवर्तित हो जाता है अर्थात् आहार का पूर्ण पाचन हो जाता है।

5.4 छोटी आंत में अवशोषण (Absorption in Small Intestine)

पाचन क्रिया पूर्ण होने पर ग्रहण आहार, छोटे कणों एवं सरल रूप (Break Down into Small Particles & Simple Form) में परिवर्तित हो जाता है। आहार का यह सरलतम रूप जब छोटी आंत से होकर गुजरता है, तो छोटी आंत की भीतरी सतह पर लाखों की संख्या में स्थित अंगुली के समान सूक्ष्म रचनाएं विलाई (Villi) इस पोषक अंश को अवशोषित करते हुए रक्त में मिलाने का कार्य करती है। छोटी आंत के इलियम भाग में चूसक कोशिकाओं—विलाई के द्वारा आहार से पोषक तत्व अवशोषित कर लिए जाते हैं और शेष अनुपयोगी अंश मल रूप में बड़ी आंत को भेज दिया जाता है। इस प्रकार छोटी आंत में भोजन के अवशोषण की क्रिया पूर्ण हो जाती है। छोटी आंत में अवशोषण की क्रिया पूर्ण होने में दो से चार घण्टे का समय लगता है।

5.5 बड़ी आंत द्वारा मलभाग का उत्सर्जन (Excretion by Large Intestine)

प्रिय शिक्षार्थियों, पोषक तत्व निकलने के पश्चात आहार का मलभाग बड़ी आंत में आ जाता है। यहां इसमें से जल की मात्रा का पुनःअवशोषण किया जाता है। अब यह शरीर के लिये अनुपयोगी मलभाग मलाशय (Rectum) नामक स्थान में आकर इकठ्ठा होने लगता है जो बड़ी आंत के अन्तिम भाग गुदा (Anus) के द्वारा शरीर से बाहर उत्सर्जित कर दिया जाता है।

भूख (Hunger)

भूख, भोजन लेने के प्रति शरीर का एक उद्दीपन (Stimulus) होता है। जब आमाशय खाली हो जाता है तो वहां पर उपस्थित ज्ञान तन्तु (Receptors) इसकी सूचना मस्तिष्क में स्थित केन्द्र हाइपोथेलमस (Hypothalamus) को देते हैं। शरीर में ग्लूकोज का स्तर कम होने पर भी शरीर को भोजन की आवश्यकता महसूस होती है।

टिप्पणी

5.6 मानव पाचन तंत्र पर योग का प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य का आहार (पाचन तंत्र) उसके जीवन में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है क्योंकि सभी कार्य करने के लिए ऊर्जा की प्राप्ति आहार से ही होती है। इसके साथ—साथ आहार का संबंध केवल स्थूल शरीर से नहीं होता है अपितु आहार का मनुष्य के मानसिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक स्तर पर भी सीधा प्रभाव पड़ता है। मनुष्य द्वारा ग्रहण आहार का स्थूल भाग अर्थात ठोस अंश शरीर के लिए अनुपयोगी होता है और मल के रूप में उत्सर्जित हो जाता है। आहार का मध्यम भाग अर्थात द्रवीय अंश शरीर के लिए बहुत उपयोगी होता है क्योंकि आहार के द्रवीय अंश को छोटी आंत के द्वारा शरीर में अवशोषित किया जाता है और यह भाग शरीर की कोशिकाओं, धातुओं, रस, रक्त आदि को पोषण तथा ऊर्जा प्रदान करता है। इसके साथ—साथ आहार के सूक्ष्म अंश से मन को पोषण प्राप्त होता है। इसीलिए मनुष्य जैसे अन्न का सेवन करता है, वैसा ही उसका मन बनता है। यही कारण है कि सात्विक आहार से सात्विक मन और सात्विक विचार जबकि तामसिक आहार के सेवन से तामसिक वृत्तियां उत्पन्न होती हैं। यौगिक ग्रंथों एवं भगवद्गीता में योग साधना करने वाले योगी पुरुष को सदैव सात्विक आहार का उपदेश दिया गया है। सात्विक आहार का सेवन करने से मनुष्य के शरीर, मन एवं आत्मा पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस तथ्य को उपनिषद् में स्पष्ट करते हुए कहा गया है—

आहारशुद्धौ सत्वशुद्धौ, सत्वशुद्धौ ध्रुवास्मृति।।

(छान्दोग्य उपनिषद्)

योग साधना का प्रारम्भ ही शुद्ध सात्विक आहार से होता है क्योंकि सात्विक आहार का सेवन करने से मन शांत रहता है और चित्त—वृत्तियाँ स्थिर होती हैं। मिताहार का पालन करते हुए शरीर के लिए हितकारी आहार का सेवन करने वाले योगाभ्यासी साधक के महत्व पर प्रकाश डालते हुए योगीराज श्रीकृष्ण कहते हैं—

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

(गीता 6/17)

अर्थात जिस पुरुष के आहार—विहार सही एवं संयमित है, जिसके कार्यो की निश्चित दिनचर्या है। जिसका सोना और जागना निश्चित है, ऐसे योगी पुरुष को किसी प्रकार का दुःख नहीं होता। तात्पर्य है कि जो व्यक्ति अपने आहार और विहार पर संयम रखता है वह सभी प्रकार के दुःखो, कष्टों और बीमारियों से मुक्त जीवन व्यतीत करता है।

योग के ग्रन्थों में आहार के महत्व को विशेष रुप से वर्णित किया गया है। योग साधना में अत्याहार (अधिक आहार का सेवन करना) को साधना का प्रथम बाधक तत्व माना गया है तथा इसके स्थान पर मिताहार के पालन का उपदेश दिया जाता है। मिताहार की व्याख्या

टिप्पणी

करते हुए महर्षि घेरण्ड कहते हैं—

शुद्धं सुमधुरं स्निग्धमुद्‌राार्धविवर्जितम् । भुज्यते सुरसंप्रीत्या मिताहारमिमं विदुः ।।
अन्नेन पूरयेदर्धं तोयेन तु तृतीयकम् । अद्‌रस्य तृतीयांशं संरक्षेद्वायुचारणे ।।

(घेरण्ड संहिता 5/21—22)

अर्थात्— स्वच्छ, सुमधुर और सुरस द्रव्य से संतोषपूर्वक आधा पेट भरना और आधा खाली रखना चाहिए। विद्वानों ने इसे मिताहार कहा है। पेट के आधे भाग को अन्न से, तीसरे भाग को जल से भरना और चौथे भाग को वायु—संचलानार्थ खाली रखना चाहिए।

इस प्रकार योगसाधना में सफलता प्राप्त करने हेतु भरपेट भोजन के स्थान पर केवल आधे पेट भोजन सेवन को निर्देशित किया गया है। विभिन्न चिकित्सकीय शोध अनुसंधान से प्राप्त साक्ष्य भी यह स्पष्ट करते हैं कि बहुत अधिक मात्रा में आहार लेने से अपच, कब्ज, गैस, एसिडिटी, अम्लपित्त तथा अल्सर जैसे रोग उत्पन्न होते हैं जबकि अल्प मात्रा में भोजन लेने से पाचन तंत्र भली—भाँति सक्रिय, स्वस्थ और क्रियाशील रहता है।

वर्तमान समय में भोग—विलासिता से पूर्ण जीवनशैली, कृत्रिम रंगों से युक्त रासायनिक आहार का सेवन, अनियमित दिनचर्या एवं प्रतिस्पर्धायुक्त मानसिक तनाव आदि कारकों के फलस्वरूप पाचन तंत्र के रोगों से ग्रस्त रोगियों की संख्या समाज में दिन—प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। कब्ज, अपच, गैस, एसीडिटी, पेट का मोटापा, अजीर्ण तथा अल्सर आदि रोग समाज में बहुत तेजी से फैलते जा रहे हैं। यहां पर यौगिक क्रियाओं का अभ्यास पाचन तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव रखता है। पाचन तंत्र पर योगमय जीवन शैली एवं यौगिक क्रियाओं के प्रभावों का अवलोकन इस प्रकार है—

1. षटकर्मों का प्रभाव

षटकर्म के अन्तर्गत धौति, बस्ति, नेति, नौलि, त्राटक और कपालभाति, नामक छः शोधन क्रियाओं का वर्णन आता है। ये शोधक क्रियायें पाचन तंत्र की सफाई करती हैं। धौति क्रिया के अन्तर्गत वर्णित वमनधौति, दण्डधौति और वस्त्रधौति नामक तीन अभ्यास पाचन अंगों का शोधन करते हुए पाचन तंत्र के रोगों को दूर करते हैं। वमन एवं दण्ड धौति करने से अम्लपित्त, एसीडिटी, पेट में गैस बनना, पेट में जलन, पेट में भारीपन आदि रोगों में विशेष लाभ प्राप्त होता है।

वस्त्रधौति के अभ्यास से मुखीय गुहा, ग्रसनी, ग्रासनली एवं आमाशय की सफाई होती है तथा आमाशय में पाचक रसों के स्राव की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे भूख भली—भाँति लगती है तथा भोजन का पाचन भी अच्छी प्रकार होने लगता है। घेरण्ड संहिता में वर्णित धौति क्रिया के प्रकारों में वारिसार अन्तर्धौति (शंखप्रक्षालन) क्रिया का वर्णन किया गया है। वारिसार अन्तर्धौति अर्थात् शंखप्रक्षालन के अन्तर्गत पन्द्रह से बीस गिलास गुनगुना नमकीन पानी पीने के उपरान्त पाँच आसन किये जाते हैं। आसनों के अभ्यास करने से

गुनगुना नमकीन जल पूरे पाचन तंत्र की सफाई करता हुआ अधोमार्ग से बाहर निकल जाता है। इस क्रिया के अभ्यास से पूरे पाचन तंत्र की सफाई होती है और कब्ज जैसा गंभीर रोग दूर होता है।

षट्कर्म की दूसरी बस्ति क्रिया का मानव पाचन तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। आयुर्वेद शास्त्र में वातदोष का मूलस्थान बड़ी आँत माना गया है यहाँ पर स्थित वायु यदि कुपित हो जाती है तो सम्पूर्ण शरीर में भिन्न—भिन्न प्रकार के वातरोग उत्पन्न होते हैं। वातदोष को वस्ति कर्म के अभ्यास से बड़ी आसानी से शान्त किया जा सकता है। अतः पेट में गैस बनना, डकारे आना, पेट में दर्द, अफारा तथा कब्ज आदि वात दोष की विकृति से उत्पन्न रोगों में भी वस्ति क्रिया लाभ पहुँचाती है। उदर की विकृतवायु मस्तिष्क में जाकर तीव्र सिरदर्द का कारण बनती है। वस्ति क्रिया के अभ्यास से तीव्र दर्द में भी लाभ मिलता है तथा अल्सर, बवासीर और आँतों का कैन्सर आदि गंभीर रोग शरीर में उत्पन्न नहीं होते हैं।

नेति क्रिया और त्राटक कर्म का पाचन तंत्र पर सीधा—सीधा प्रभाव नहीं पड़ता है जबकि नौलि क्रिया का पाचनतंत्र पर सीधे—सीधे प्रत्यक्ष रुप में बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। नौलि क्रिया के नियमित अभ्यास से पाचन अंग दृष्ट—पुष्ट, स्वस्थ तथा मजबूत बनते हैं। नौलि क्रिया में पेट की मांसपेशियों का संचालन किया जाता है जिससे पेट की अच्छी तरह मालिश होती है परिणामस्वरुप भोजन का पाचन करने वाली जठराग्नि प्रदिप्त होती है और पेट के ऊपर स्थित अनावश्यक चर्बी नष्ट होती है। कपालभाति का अभ्यास प्रश्वास के साथ शरीर के हानिकारक विजातीय पदार्थों को बाहर निकालता है जिससे सभी पाचन अंग क्रियाशील बनते हैं और भोजन के पाचन, अवशोषण तथा उत्सर्जन की क्रिया में सुधार होता है।

2. आसन का प्रभाव

योगासनों का अभ्यास पाचन तंत्र पर सीधा एवं प्रत्यक्ष प्रभाव डालता है। यद्यपि आसन करने का प्रथम और मूल सिद्धान्त होता है कि योगाासनों का अभ्यास सदैव खाली पेट ही किया जाना चाहिए। परन्तु योगासनों में वज्रासन एकमात्र ऐसा आसन है जिसका अभ्यास भोजन करने के तुरन्त बाद किया जा सकता है। नियमित रुप से भोजन ग्रहण करने के बाद पाँच से दस मिनट वज्रासन में बैठने पर ग्रहण किए भोजन का पाचन अच्छी प्रकार होता है।

वैज्ञानिक शोध—अनुसंधान से स्पष्ट होता है कि श्वसन क्रिया को ध्यान में रखते हुए योगासन करने पर उदर प्रदेश में स्थित पाचन अंगों में पोजेटिव और निगेटिव प्रेशर (दबाव और खिंचाव) उत्पन्न होता है। आसन करते समय जब सामने की ओर झुका जाता है तब पाचन अंगों पर दबाव पड़ता है, तब इन अंगों की ओर रक्त संचार बन्द हो जाता है तथा जैसे ही यह दबाव हटता है उस समय बहुत तेजी के साथ रक्त उस अंग में भर जाता है, जिससे उस अंग की गन्दगियाँ हटती है तथा उसे ज्यादा मात्रा में शुद्ध

टिप्पणी

ऑक्सीजन एवं पोषक पदार्थों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार योगासनों का अभ्यास करने से पाचन तंत्र स्वस्थ सक्रिय एवं मजबूत होता है।

आसनों के क्रम में पवनमुक्तासन, उत्तानपादासन, सर्वांगासन, धनुरासन, हलासन, योग मुद्रासन, मण्डूकासन, शशांकासन, उष्ट्रासन, अर्द्धमत्स्येन्द्रासन, वज्रासन, सुप्त वज्रासन तथा मयूरासन ऐसे आसन हैं, जिनका नियमित अभ्यास करने से पाचन तंत्र स्वस्थ, सक्रिय एवं ऊर्जावान बना रहता है। इन आसनों का अभ्यास करने से अपच, गैस, भूख ना लगना, कब्ज, अल्सर, एसिडिटी, मधुमेह आदि रोग नहीं होते हैं तथा पाचन तंत्र वज्र के समान मजबूत बन जाता है। मयूरासन का अभ्यास विष को पचाने की क्षमता प्रदान करने वाला होता है। इस प्रकार आसनों का अभ्यास पेट की मांसपेशियों को मजबूती प्रदान करते हुए पाचन तंत्र को स्वस्थ, सक्रिय एवं मजबूत बनाता है।

आसनों के क्रम में बारह (12) आसनों का सम्मिलित अभ्यास **'सूर्य नमस्कार'** कहलाता है। सूर्य नमस्कार का अभ्यास पाचन तंत्र को स्वस्थ और सक्रिय बनाता है। नियमित प्रातःकाल सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने से कब्ज, मोटापा, मधुमेह, गैस, पेट दर्द, भूख न लगना आदि पाचन सम्बन्धित रोग मनुष्य के जीवन में नहीं आते हैं। इन विकारों से ग्रस्त मनुष्य सूर्य नमस्कार का अभ्यास करता है, तो ये विकार दूर होते हैं और उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।

3. मुद्राओं व बन्धों का प्रभाव

पाचन तंत्र पर विभिन्न मुद्राओं एवं बन्धों का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मुद्राओं में मुख्य रूप से भुजंगनी, अश्विनी मुद्रा, विपरीतकरणी तथा महामुद्रा पाचन तंत्र को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं। बन्धों का भी पाचन तंत्र पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। मूल बन्ध का अभ्यास बड़ी आंत को विशेष रूप से सक्रिय एवं क्रियाशील बनाता है तथा पाचन तंत्र के रोगों को भी दूर करता है। उड्डियानबंध उदर प्रदेश में विपरीत दबाव पैदा करता है। उड्डियानबंध का अभ्यास पेट की मांसपेशियों को लचीली तथा क्रियाशील बनाता है। यह लीवर, आमाशय तथा आंतों को क्रियाशील बनाता है। उड्डियान बंध के अभ्यास से विभिन्न पाचक रस अधिक मात्रा में स्रावित होते हैं, जिससे भोजन का पाचन भली—भाँति होता है।

यौगिक बन्धों के साथ अग्निसार क्रिया का अभ्यास पेट के आन्तरिक पाचन अंगों की मालिश करता है। इसका अभ्यास करने से सम्पूर्ण पाचन तंत्र स्वस्थ, सक्रिय एवं विकारों से मुक्त बनाता है।

4. प्राणायाम का प्रभाव

प्राणायाम से तात्पर्य प्राण तत्व का विस्तार करने से है। प्राणायाम का अभ्यास करने से शुद्ध प्राण वायु (ऑक्सीजन) अधिक मात्रा में पाचन तंत्र को प्राप्त होती है, जिससे पाचन

क्रिया बढ़ती है। नियमित रूप से नाड़ी शोधन, अनुलोम—विलोम, सूर्य—भेदी, उज्जायी, भस्त्रिका एवं भ्रामरी प्राणायामों का विधिपूर्वक अभ्यास करने से पाचन तंत्र की क्रियाशीलता बढ़ती है और पाचन अंग स्वस्थ बना रहता है।

5. प्रत्याहार का प्रभाव

प्रत्याहार से तात्पर्य अपनी इंद्रियो पर संयम करने से होता है। इंद्रियों पर असंयम भिन्न—2 प्रकार के पाचन रोगों एवं व्याधियों को जन्म देता है जबकि इंद्रियों पर संयम रोगों को शरीर से दूर करता है। प्रत्याहार के पालन से प्रज्ञापराध पर नियंत्रण होता है और मनुष्य राजसिक एवं तामसिक आहार का त्याग करता हुआ शुद्ध और सात्विक आहार ही ग्रहण करता है। साथ ही साथ अत्यधिक मिर्च—मसाले एवं नमक आदि से मन को हटाता हुआ, प्राकृतिक आहार का सेवन करने लगता है, जिसका सकारात्मक प्रभाव सम्पूर्ण पाचन तंत्र पर पड़ता है। इस प्रकार निश्चित समय पर हित्भुक—मित्भुक—ऋत्भुक (हित्भुक अर्थात् शरीर की प्रकृति के अनुसार हितकारी, मित्भुक अर्थात कम मात्रा में और ऋत्भुक अर्थात् वर्ष की अलग—अलग ऋतुओं के अनुसार) आहार का सेवन करने से पेटदर्द, भूख नहीं लगना, भोजन नहीं पचना, पेटगैस, एसीडिटी, अल्सर तथा कब्ज, आदि रोग समूल नष्ट हो जाते हैं।

6. ध्यान का प्रभाव

ध्यान से तात्पर्य शरीर एवं मन की एकरूपता से होता है। ध्यान का अभ्यास शारीरिक स्थिरता और मानसिक एकाग्रता को उत्पन्न करता है जिससे पाचक रस एवं अन्तःस्रावी हार्मोन्स सन्तुलित होते हैं। ध्यान के अभ्यास से यकृत, पेन्क्रियाज और पिटयूटरी ग्रन्थि आदि ग्रन्थियों से उत्पन्न स्राव सन्तुलित होते हैं, जिसका पाचन तन्त्र पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। नियमित ध्यान का अभ्यास करने के फलस्वरूप आमाशय का आकार, आंतो का आकार, यकृत तथा पैन्क्रियाज आदि अंगों की क्रियाशीलता पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत क्रोध, आवेश, भय, चिन्ता एवं अवसाद आदि विकृत मनोदशाओं का पाचन अंगों की क्रियाशीलता पर बहुत नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। अस्थिर मानसिक संवेगों—आवेगों की अवस्था में भोजन करने पर पाचक रसों अर्थात् लार एवं एन्जाईम्स का स्रावण सही प्रकार नहीं हो पाता है, जिससे पाचन क्रिया में बाधा उत्पन्न होती है और अपच, भूख नहीं लगना, कब्ज, अर्जीण, पेट दर्द—गैस, मधुमेह जैसे पाचन रोगों की उत्पत्ति होती है। इस अवस्था में ध्यान करने से पाचन तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

7. समाधि का प्रभाव

यहां समाधि का अर्थ सकारात्मक भावों की अनुभूति करने से है। नकारात्मक अनुभूति रखते हुए अच्छा एवं पौष्टिक आहार भी शरीर में नकारात्मक प्रभाव देता है। जबकि इसके विपरीत सकारात्मक भाव से विष भी अमृत के समान गुणकारी प्रभाव देने में

टिप्पणी

समर्थ होता है। तात्पर्य यह है कि सकारात्मक भाव से भोजन ग्रहण करने पर भोजन के पाचन, अवशोषण और उत्सर्जन की क्रिया सुव्यवस्थित बनती है और पाचन तंत्र स्वस्थ, सक्रिय, ऊर्जावान एवं रोगमुक्त रहता है।

उपरोक्त योगांगों के साथ–साथ पथ्य एवं अपथ्य आहार भी पाचन तंत्र को स्वस्थ, सक्रिय, ऊर्जावान और विकारमुक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पाचन तंत्र को स्वस्थ–सक्रिय बनाने हेतु पथ्य आहार के अन्तर्गत गेहूँ–जौ एवं चने का चौकर युक्त आटा, कीटनाशक दवाईयों के प्रभाव से मुक्त मौसमी फल–सब्जियां, अंकुरित अन्न, पौष्टिक खाद्य पदार्थ जैसे बादाम, मुनक्का, किशमिश, खजूर आदि सुपाच्य आहार एवं पर्याप्त मात्रा में जल के सेवन आदि का समावेश होता है। जबकि इसके विपरीत अपथ्य आहार के अन्तर्गत मैदा, नमक, चीनी, रासायनिक खाद्य पदार्थ, तैलीय पदार्थ, राजसिक एवं तामसिक आहार का वर्णन आता है, जिनका सेवन करने से पाचन तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और पाचन तंत्र रोगों से ग्रस्त हो जाता है।

यूनिगत प्रश्न 5.2

क) सत्य अथवा असत्य कथन का चयन कीजिए –

1) मानव पाचन तंत्र 28 से 32 फीट लम्बी एक सरल रचना होती है। ( )

2) महर्षि घेरण्ड पेट के आधे भाग को अन्न, तीसरे भाग को जल और ( )
चौथे भाग को वायु–संचलानार्थ हेतु खाली रखने का उपदेश करते हैं। ( )

3) शंखप्रक्षालन क्रिया में 12 आसनों का अभ्यास किया जाता है। ( )

4) भुजंगनी, अश्विनी मुद्रा, विपरीतकरणी तथा महामुद्रा पाचन तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव रखती है। ( )

5) वज्रासन का अभ्यास भोजन ग्रहण करने के तुरन्त बाद नहीं करना चाहिए। ( )

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए –

1) लार में कौन सा एन्जाइम होता है?

2) कार्बोहाइड्रेट के सरलतम स्वरूप का नाम लिखिए।

3) मनुष्य में छोटी आंत की लम्बाई कितनी होती है?

4) मनुष्य मस्तिष्क के किस भाग से भूख की अनुभूति होती है?

टिप्पणी

ड) सुमेलित करते हुए सही कूट का प्रयोग करें।

1.	इन्सूलिन (Insulin)	—	a.	छोटी आंत
2.	टायलिन (Ptyalin)	—	b.	आमाशय
3.	हाइड्रोक्लोरिक अम्ल (HCl)	—	c.	लार
4.	इनेमल (Enamel)	—	d.	पेन्क्रियाज
5.	विलाई (Villi)	—	e.	दांत

आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने सीखा कि–

- पाचन तंत्र मानव शरीर को भोजन से ऊर्जा प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है।
- मनुष्य का पाचन तंत्र 28 से 32 फीट लम्बी रचना होती है जो मुख से प्रारम्भ होकर गुदा तक फैली होती है।
- मनुष्य के पाचन तंत्र तीन महत्वपूर्ण कार्यों– भोजन को सरल रुप में परिवर्तित करना, सरल रुप को अवशोषित करना और शेष अनुपयोगी मल भाग को शरीर से उत्सर्जित करने का कार्य करता है।
- मनुष्य के पाचन तंत्र के स्वस्थ एवं सक्रिय रहने पर सम्पूर्ण शरीर ऊर्जावान रहता है जबकि पाचन तंत्र के रोगग्रस्त हो जाने पर शरीर ऊर्जाहीन एवं विभिन्न प्रकार के विकारों से ग्रस्त हो जाता है।
- योग के विभिन्न अभ्यास जैसे– षट्कर्म, आसन, प्राणायाम आदि सम्पूर्ण पाचन तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव रखते हैं।
- इन अभ्यासों के प्रभाव से मनुष्य का पाचन तंत्र जीवन पर्यन्त स्वस्थ, सक्रिय, ऊर्जावान और रोगमुक्त बना रहता है।

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव पाचन तंत्र को समझाते हुये, इस पर यौगिक प्रभाव की विवेचना कीजिए।
2. पाचन क्रिया को सविस्तार समझाइये।
3. वर्तमान समय में बढ़ते पाचन तंत्र के विकारों में यौगिक क्रियाओं के प्रभाव का उल्लेख कीजिए।
4. निम्न पर टिप्पणियां लिखिए–

   1– आमाशय　　　2– यकृत

   3– छोटी आंत　　　4– बड़ी आंत

टिप्पणी

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

5.1

	क.	ख.
1.	पाचन	1— d
2.	28 से 32 फीट	2— b
3.	तीन	3— d
4.	ड्यूडिनम	4— b
5.	मुख	5— a

5.2

	क	ख	ग
1.	असत्य	1— टॉयलिन	d,c,b,e,a
2.	सत्य	2— ग्लूकोज	
3.	असत्य	3— 22 फीट	
4.	सत्य	4— हाइपोथैल्मस	
5.	असत्य		

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक — गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान— प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान — मंजु तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव— डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान— प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान— डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0) ।
7. प्राकृतिक चिकित्सा — राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर — डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ।

टिप्पणी

6

श्वसन तंत्र की संरचना—क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछली यूनिट में आपने मानव शरीर को ऊर्जा प्रदान करने वाले पाचन तंत्र के विषय में जाना। आपने जाना कि मनुष्य जो भोजन ग्रहण करता है, पाचन तंत्र के विभिन्न अंग सर्वप्रथम उस आहार को सरल रुप में परिवर्तित करते हैं, तत्पश्चात् उस सरल अंश को शरीर में अवशोषित किया जाता है और शरीर के अनुपयोगी मल भाग को शरीर से उत्सर्जित करने का कार्य पाचन तंत्र के द्वारा किया जाता है। हमने यह भी जाना कि भोजन के सरलतम अंश के रुप में ग्लूकोज शरीर को प्राप्त हो जाता है। ग्लूकोज से शरीर को ऊर्जा, किस प्रकार प्राप्त होती है, इस पर विचार करने की आवश्यकता है?

मानव शरीर के अन्दर खाद्य पदार्थों के पाचन (Digestion) के उपरान्त पोषक रस को ग्लूकोज (Glucose) के रूप में रक्त में अवशोषित कर लिया जाता है। यह पोषक रस (Glucose) रक्त के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर की प्रत्येक कोशिका में पहुँचाया जाता है किन्तु जब तक इस भोजन रस का दहन अर्थात् ऑक्सीकरण (Oxidation) नहीं होता है, तब तक इससे ऊर्जा मुक्त नहीं हो पाती है। दहन की क्रिया में ऑक्सीजन (0_2) गैस का उपयोग होता है एवं कार्बन डाईऑक्साइड ($C0_2$) नामक गैस उत्पन्न होती है। यह क्रिया श्वसन (Respiration) कहलाती है जिसमें श्वास के रुप में ऑक्सीजन (0_2) ग्रहण की जाती है और प्रश्वास के रुप में कार्बन डाइऑक्साइड ($C0_2$) उत्सर्जित की जाती है, इसीलिए श्वसन क्रिया का सामान्य अर्थ श्वास—प्रश्वास की क्रिया से लिया जाता है। यह श्वास—प्रश्वास की क्रिया मनुष्य के शरीर में जीवन का एक प्रमुख लक्षण है। मनुष्य भोजन के अभाव में कुछ दिनों तक जीवित रह सकता है, जल के अभाव में कुछ घंटे बिता सकता है किन्तु श्वास—प्रश्वास अथवा वायु के अभाव में कुछ ही क्षणों में उसके जीवन का अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

टिप्पणी

चिकित्सा विज्ञान के अनुसार यदि लगातार चार मिनट तक मानव शरीर में श्वास–प्रश्वास क्रिया नहीं होती है तब शरीर की कोशिकाएं ऑक्सीजन (O_2) के अभाव में मरने लगती है तथा सबसे पहले इसका प्रभाव मस्तिष्क (Brain) एवं हृदय (Heart) जैसे महत्वपूर्ण अंगों पर पड़ता है। वास्तव में श्वास के माध्यम से बाह्य वायुमण्डल की ऑक्सीजन (O_2) शरीर की आन्तरिक कोशिकाओं तक पहुंचती है तथा इस क्रिया के रूक जाने पर आन्तरिक कोशिकाओं को ऑक्सीजन (O_2) प्राप्त नहीं हो पाती है। ऑक्सीजन (O_2) के अभाव में कोशिका में ऊर्जा उत्पत्ति की क्रिया (ग्लूकोज का ऑक्सीकरण) नहीं हो पाती है और ऊर्जा के अभाव में शरीर की कोशिकाएं मरने लगती हैं। इस प्रकार मानव शरीर की कोशिकाओं को जीवित रखने में श्वसन तंत्र बहुत महत्वपूर्ण भूमिका वहन करता है।

आइये इस यूनिट में, श्वसन तंत्र के स्वरुप को समझने एवं इसके महत्व को विस्तार पूर्वक समझने का प्रयास करें। इसके साथ–साथ मानव श्वसन तंत्र को कौन–कौन से योगाभ्यास प्रभावित करते हैं, इसका सविस्तार अध्ययन करें।

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

- श्वसन तंत्र का सामान्य परिचय समझा सकेगें;
- श्वसन तंत्र की व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे;
- श्वसन तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि का वर्णन कर सकेंगे;
- श्वसन तंत्र के महत्व को समझाने में सक्षम होंगे;
- श्वसन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की, व्याख्या कर सकेंगे।

6.1 मानव श्वसन तंत्र का सामान्य परिचय एवं परिभाषा

शिक्षार्थियों, मानव शरीर का ऐसा संस्थान जो शरीर की कोशिकाओं को ऑक्सीजन प्रदान करता है एवं इसके साथ–साथ कोशिकाओं में उपस्थित कार्बन डाई ऑक्साइड नामक गैस को बाहर निकालने का महत्वपूर्ण कार्य करता है, श्वसन तंत्र कहलाता है। मानव श्वसन तंत्र को सुव्यवस्थित रुप में इस प्रकार परिभाषित किया जाता है–

''मानव शरीर में स्थित वह तंत्र जो, वायुमण्डल की ऑक्सीजन (O_2) को श्वास (Inspiration) के रूप में शरीर की आन्तरिक कोशिकाओं तक पहुंचाने का कार्य करता है तथा शरीर की आन्तरिक कोशिकाओं में स्थित कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) को बाह्य वायुमण्डल में छोड़ने (Expiration) का महत्वपूर्ण कार्य करता है, **श्वसन तंत्र** (Respiratory System) कहलाता है।''

टिप्पणी

The Cells of the Human Body require a constant stream of Oxygen to stay alive. The Respiratory System provides Oxygen to the body's cells while removing Carbon dioxide, a waste product that can be lethal if allowed to accumulate. There are 3 major parts of the Respiratory System: the airway, the lungs, and the muscles of respiration, which includes the Nose, Mouth, Pharynx, Larynx, Trachea, Bronchi and Bronchioles, Air sacs, Lungs and Diaphragm.

6.2 मानव श्वसन तंत्र का वर्गीकरण (Classification of Human Respiratory System)

मानव श्वसन तंत्र की संरचना नासिका से प्रारम्भ होती है। यह तंत्र नासिका से प्रारम्भ होकर फेफड़ों एवं डायफ्राम तक फैला होता है। जो श्वसन की महत्वपूर्ण क्रिया को सम्पादित करने का कार्य करता है। अब आपके मन में यह प्रश्न भी उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है कि श्वसन किसे कहते हैं? प्रिय विद्यार्थियों, श्वसन उन भौतिक–रासायनिक क्रियाओं के सम्मिलित रूप में होता है जिसके अन्तर्गत बाह्य वायुमण्डल की ऑक्सीजन (O_2) शरीर के अन्दर कोशिकाओं तक पहुंचती है और भोजन रस (ग्लूकोज) के सम्पर्क में आकर उसके ऑक्सीकरण द्वारा ऊर्जा मुक्त कराती है तथा उत्पन्न कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) को शरीर से बाहर निकालती है। श्वसन प्रत्येक प्राणधारी जीव की वह महत्वपूर्ण क्रिया है जिसे वह प्रतिक्षण जीवन पर्यन्त निर्बाध रूप से करता रहता है। जो जीवन की उत्पत्ति के साथ प्रारम्भ होकर जीवन पर्यन्त चलती है, जिसका ना होना अर्थात रूक जाना ही मृत्यु का द्योतक होता है। संरचना के आधार पर मानव श्वसन तंत्र को निम्नलिखित दो भागों में बांटा जाता है–

श्वसन तंत्र

- बाह्य श्वसन तंत्र (External Respiratory System)
- अन्तःश्वसन तंत्र (Internal Respiratory System)

चित्र 6.1: श्वसन तंत्र

6.2.1 बाह्य श्वसन तंत्र (External Respiratory System)

प्रिय शिक्षार्थियों, बाह्य श्वसन तंत्र के अन्तर्गत बाह्य वायुमण्डल से वायु लेकर फेफड़ों तक पहुंचाने वाले अंगों की संरचना का वर्णन आता है। इसके अन्दर नासिका (Nose), ग्रसनी (Pharynx), स्वरयंत्र (Larynx), श्वासनली (Trachoea), श्वसनी (Bronchus), श्वसनिकाएं (Bronchioles), वायुकोष (Alveoli), फेफड़ें (Lungs) एवं डायफ्राम (Diaphragm) की संरचना एवं क्रियाविधि का वर्णन आता है।

टिप्पणी

6.2.2 अन्तःश्वसन तंत्र (Internal Respiratory System)

अन्तःश्वसन तंत्र के अन्तर्गत फेफड़ों में गैसों का आदान–प्रदान (Exchange of Gases), रक्त द्वारा ऑक्सीजन का परिवहन (Transportation of O_2), कोशिका में ऑक्सीजन–कार्बनडाई ऑक्साइड का विनिमय (Transportation of O_2 & CO_2 by Blood), रक्त द्वारा कार्बनडाई ऑक्साइड का परिवहन (Transportation of CO_2 by Blood) तथा कार्बनडाई ऑक्साइड का फेफड़ों में विनिमय (Exchange of CO_2 in Lungs) की क्रिया का वर्णन आता है। अन्तः श्वसन तंत्र के अन्तर्गत फेफड़ों से आगे की समस्त क्रियाओं का समावेश होता है।

6.3 मानव श्वसन तन्त्र की संरचना (Structure of Human Respiratory System)

अब तक आपने श्वसन के विषय में समझा। आइए, अब मानव श्वसनतंत्र की संरचना समझते हैं। मनुष्य में फेफड़ों द्वारा श्वसन होता है, ऐसे श्वसन को फुफ्फुसीय श्वसन (Pulmonary Respiration) कहा जाता हैं। इसके साथ साथ वह मार्ग जिससे वायुमण्डल की शुद्ध वायु फेफड़ों में प्रवेश करती है तथा फेफड़ों के अन्दर से अशुद्ध वायु बाहर निकलती है, उसे **श्वसन मार्ग (Respiratory Tract)** कहते हैं। इस श्वसन मार्ग में वायु के आवागमन में भाग लेने वाले अंग श्वसन अंग **(Respiratory Organ)** कहलाते हैं। श्वसन अंग परस्पर मिलकर श्वसन तंत्र की रचना करते हैं।

मानव श्वसन तंत्र में श्वसन अंगों का समावेश निम्नलिखित क्रम से होता है–

नासिका एवं नासिका गुहा ⇨ ग्रसनी ⇨ स्वर यन्त्र ⇨श्वास नली ⇨श्वसनी एवं श्वसनिकाएं ⇨ वायुकोष ⇨फेफड़े ⇨डायफ्राम।

Nasal Cavity ⇨Pharynx ⇨Larynx ⇨Trachea ⇨Bronchus & Bronchioles ⇨Alveoli ⇨Lungs ⇨Diaphragm.

श्वसन अंगों द्वारा बाह्य वायुमण्डल से शुद्ध प्राणवायु ऑक्सीजन फेफड़ों तक पहुंचाई जाती है तथा फेफड़ों में यह प्राणवायु रक्त द्वारा ग्रहण कर ली जाती है। इसके उपरान्त रक्त द्वारा इस प्राणवायु को शरीर की समस्त कोशिकाओं तक पहुंचाया जाता है। कोशिकाओं में इस प्राणवायु का उपभोग ऊर्जा उत्पत्ति के लिए किया जाता है। किसी भी कारण से उपरोक्त वायुमार्ग के अवरूद्ध होने पर श्वसन क्रिया रूक जाती है जिसके परिणामस्वरूप कुछ ही मिनटों में दम घुटने से व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है।

टिप्पणी

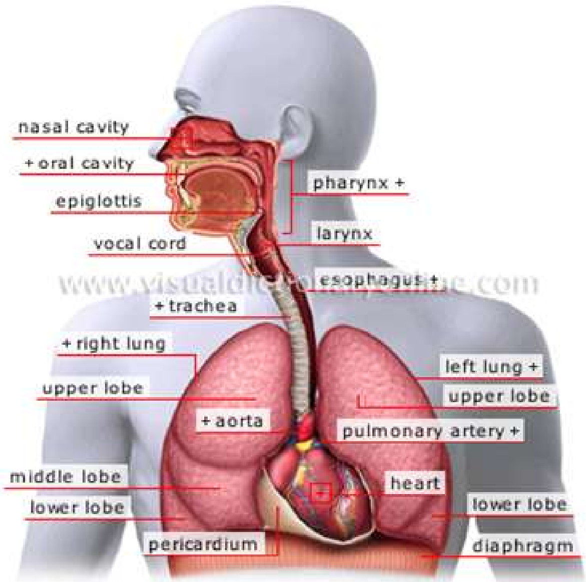

चित्र 6.2: मानव श्वसन तंत्र की संरचना

इन अंगों की संरचना और कार्यों का वर्णन इस प्रकार है –

क) नासिका एवं नासिका गुहा (Nose and Nasal Cavity)

मानव श्वसन तंत्र का प्रारम्भ नासिका से होता है। नासिका के छोर पर एक जोड़ी नासिका छिद्र (External Nostrils) स्थित होते हैं। नासिका एक उपास्थिमय (Cartilageous) संरचना होती है। जिसके अन्दर का भाग नासिका गुहा (Nasal Cavity) कहलाता है। इस नासिका गुहा में तीन वक्रीय पेशियां Superior Nasal Concha, Middle Nasal Concha और Inferior Nasal Concha पायी जाती है। क्रोध एवं उत्तेजनशीलता की अवस्था में ये पेशियां अधिक क्रियाशील होकर तेजी से श्वसन क्रिया करने लगती हैं।

नासिका गुहा में संवेदी नाड़ियां (Sensory Nerves) पायी जाती हैं जो गन्ध का ज्ञान कराती हैं। इसी स्थान (नासा मार्ग) के अधर और पार्श्व सतहों पर श्लेष्मा ग्रन्थियां (Mucas Glands) होती हैं जिनसे श्लेष्मा (Mucus) की उत्पत्ति होती है। नासिका गुहा के अग्र भाग में रोम केशों का एक जाल पाया जाता है।

नासिका एवं नासिका गुहा के कार्य (Functions of Nose & Nasal Cavity)

नासिका एवं नासिका गुहा निम्नलिखित महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करती है–

- नासिका गुहा में स्थित टरबाइनल अस्थियां नासामार्ग को चक्करदार बनाती हैं जिससे इसका भीतरी क्षेत्रफल काफी अधिक बढ़ जाता है, और अन्दर ली गयी वायु का ताप शरीर के ताप के बराबर आ जाता है।
- यहां पर स्थित श्लेष्मा ग्रन्थियां श्लेष्मा का स्रावण करती हैं। यह श्लेष्मा नासिका मार्ग को नम रखती है तथा इससे गुजरकर फेफड़ों में पहुंचने वाली वायु नम हो जाती है।

टिप्पणी

- यहाँ पर संवेदी नाड़ियों की उपस्थित वायु की स्वच्छता का ज्ञान कराती है।
- यहां पर स्थित रोम केशों का जाल फिल्टर की तरह कार्य करता हुआ हानिकारक रोगाणुओं व धुएं–धूल आदि के कणों को रोक लेता है।

उपरोक्त कारणों से मनुष्य को श्वसन क्रिया सदैव नासिका द्वारा ही करनी चाहिए।

ख) ग्रसनी (Pharynx)

नासिका गुहा आगे चलकर मुख में खुलती है। यह स्थान ग्रसनी (Pharynx) कहलाता है। यह कीप की समान आकृति वाली अर्थात् आगे से चौड़ी एवं पीछे से संकरी (पतली) रचना होती है। यह रचना निम्नलिखित तीन भागों में बटी होती है–

i. नासाग्रसनी (Nasopharynx)

ii. मुखग्रसनी (Oropharynx)

iii. स्वरयंत्र ग्रसनी (Laryngospharynx)

i) नासाग्रसनी (Nasopharynx) यह नासिका में पीछे की ओर कोमल तालु के आगे वाला भाग है। इसमें नासिका से आकर नासाछिद्र खुलते हैं। इसी भाग में एक जोड़ी श्रवणीय नलिकाएं (Auditory Nerve) कर्णगुहा से आकर खुलती हैं, इन नलिकाओं का सम्बन्ध कानों से होता है।

ii) मुखग्रसनी (Oropharynx) – यह कोमल तालू के नीचे का भाग है जो कंठच्छद (Epiglotis) तक होता है, यह भाग श्वास के साथ–साथ भोजन के संवहन का कार्य भी करता है, अर्थात् इस भाग से श्वास एवं भोजन दोनों होकर गुजरते हैं।

iii) स्वर यन्त्र ग्रसनी (Laryngopharynx) - यह कंठच्छद के पीछे वाला ग्रासनली से जुड़ा हुआ भाग है। इसमें दो छिद्र होते हैं पहला छिद्र भोजन नली का द्वार और दूसरा छिद्र श्वास नली का द्वार होता है। अर्थात् यहां से आगे एक ओर भोजन तथा दूसरी ओर श्वास का मार्ग होता है।

ग्रसनी के कार्य (Functions of Pharynx)

ग्रसनी श्वसन तंत्र का एक प्रमुख अंग है। यह अंग वायु एवं भोजन के संवहन का कार्य करता है। श्वास के रुप में ली वायु इसी ग्रसनी से होकर श्वास नली में पहुंचती है।

ग) स्वरयंत्र (Larynx)

प्रिय शिक्षार्थियों, ग्रसनी के आगे का भाग स्वरयन्त्र (Larynx) कहलाता है। स्वर यन्त्र ऊपर मुख ग्रसनी से एवं नीचे की ओर श्वासनली से जुड़ा होता है। इसी स्थान पर थायराइड एवं पैराथायराइड नामक अन्तःस्रावी ग्रन्थियां उपस्थित होती हैं। यह गले का उभरा हुआ स्थान होता है अन्दर इसी स्थान में संयोजी ऊतक से निर्मित वाक रज्जु या स्वर रज्जू (Vocal Cords) पाये जाते हैं।

स्वर यन्त्र के कार्य (Functions of Larynx)

स्वर–यन्त्र ऐसा श्वसन अंग है जो वायु का संवहन करने के साथ साथ स्वर (वाणी) को उत्पन्न करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। वास्तव में स्वर (Sound) की उत्पत्ति वायु के द्वारा ही होती है। प्रश्वास के रुप में फेफड़ों से बाहर निकलते समय वायु स्वरयंत्र में उपस्थित स्वर रज्जुओं (Vocal Cords) में कम्पन्न (Vibrations) उत्पन्न करती हैं। स्वर रज्जुओं में कम्पन्न के परिणामस्वरुप ध्वनि (Sound) उत्पन्न होती है। इस प्रकार स्वरयंत्र (Larynx) की सहायता से हम विभिन्न प्रकार के शब्दों को बोल पाते हैं और अलग अलग प्रकार की आवाजें उत्पन्न करते हैं।

स्वर रज्जुओं की तानता (Tone) तथा उनके मध्य अवकाश (Space) पर ध्वनि का स्वरूप (Sound Quality) निर्भर करता है अर्थात् इसी कारण आवाज में मधुरता, कोमलता, कठोरता एवं कर्कशता आदि गुण प्रकट होते हैं। उच्च स्तरीय स्वरवादक (गायक) अभ्यास के द्वारा इन्हीं स्वर रज्जुओं पर नियंत्रण स्थापित कर अपने स्वर को एकतानता (Proper Flow) एवं मधुरता (Smoothness) प्रदान करते हैं।

घ) श्वास नली (Trachea)

प्रिय शिक्षार्थियों, श्वासनली, स्वरयन्त्र से आरम्भ होकर फेफड़ों तक पहुंचने वाली रचना होती है। यह रचना लगभग 10 से 12 सेमी. लम्बी और गर्दन भाग में स्थित होती है। इसका कुछ भाग गर्दन और शेष भाग वक्ष गुहा (Thorasic Cavity) में स्थित होता है।

श्वासनली (Trachea) का निर्माण 16–20 अग्रेंजी भाषा के अक्षर 'C' के आकार की उपस्थियों के अपूर्ण छल्लों से होता है। श्वासनली की आन्तरिक सतह पर श्लेष्मा (Mucus) को उत्पन्न करने वाली श्लेष्मा ग्रन्थियां (Goblet cells) पायी जाती हैं। आगे चलकर श्वासनली क्रमशः दाहिनीं और बायीं ओर दो भागों में बंट जाती है, जिन्हें श्वसनी (Bronchus) कहा जाता है।

श्वासनली के कार्य (Functions of Trachea)

श्वासनली के माध्यम से श्वास फेफड़ों (Lungs) तक पहुंचता है। श्वासनली में उपस्थित गॉबलेट सैल्स (Goblet cells) श्लेष्मा का स्राव करती रहती है। यह श्लेष्मा, श्वासनलिका को नम एवं चिकनी बनाने के साथ–साथ अन्दर ग्रहण की गई वायु को भी नम बनाने का कार्य करती है, इसके साथ–साथ श्वास के साथ खींचकर आये हुए धूल के कण एवं सूक्ष्म जीवाणु भी श्वास द्वारा इस श्लेष्मा में चिपक जाते हैं तथा अन्दर फेफड़ों में पहुंचकर हानि नहीं पहुंचा पाते हैं। यही कारण होता है कि धूल भरे प्रदूषित वातावरण में जाने पर श्वासनलिका में स्थित गॉबलेट सैल्स उत्तेजित होकर अधिक श्लेष्मा को उत्पन्न करती हैं।

टिप्पणी

ङ) श्वसनी एवं श्वसनिकाएं (Bronchi and Bronchioles)

प्रिय शिक्षार्थियों, श्वासनली वक्ष गुहा में जाकर दो भागों में बंट जाती है। इन शाखाओं को श्वसनी (Bronchi) कहते हैं। श्वासनली मेरुदण्ड के पाँचवें थरेसिक ब्रर्टिब्रा (5th Thoracic Vertebra) के स्तर पर दायें और बांये ओर दो भागों में विभाजित हो जाती है।

श्वसनी क्रमशः दाहिनीं और बांयी और फेफड़ों में प्रवेश करके अनेक शाखाओं में बंट जाती है। इन शाखाओं को श्वसनिकाएं (Bronchioles) कहते हैं। मनुष्य में बांयी श्वसनी दो और दाहिनी श्वसनी तीन प्रमुख शाखाओं में विभाजित होने के उपरान्त सम्पूर्ण फेफडें में फैल जाती है। आगे चलकर श्वसनी विभिन्न छोटी–छोटी शाखाओं में और शाखाएं उपशाखाओं में बंटती चली जाती है, इसकी सबसे छोटी शाखा वायुकोष (Alveoli) कहलाती है।

श्वसनी एवं श्वसनिकाओं के कार्य (Functions of Bronchi and Bronchioles)

श्वासनली के द्वारा आया श्वास (वायु) श्वसनी एवं श्वसनिकाओं के माध्यम से फेफड़ों में प्रवेश करता है अर्थात् श्वसनी एवं श्वसनिकाएं वायु का सवंहन करने का कार्य करते हैं।

च) वायुकोष (Alveoli)

श्वसनी की सबसे छोटी शाखा वायुकोष नलिकाएं (Alveolar Ducts) कहलाती हैं। इन नलिकाओं का अन्तिम सिरा फूलकर थैली के समान रचना बनाता है। इस अतिसूक्ष्म रचना को **वायुकोष** (Alveoli) कहा जाता है। इस प्रकार दोनों फेफड़ों में वायुकोषों से अंगूर के गुच्छे के समान रचना बन जाती है। ये रचना एककोशीय दीवार (Unicellular) की बनी होती है तथा यहां पर रूधिर वाहिनियों (Blood Capillaries) का घना जाल पाया जाता है।

वायुकोष के कार्य (Functions of Alveoli)

वायुकोषों का अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य O_2 एवं CO_2 का विनिमय करना होता है अर्थात् गैसों के आदान–प्रदान (Exchange of O_2 & CO_2) की महत्वपूर्ण क्रिया में वायुकोष भाग लेते हैं।

छ) फेफड़े (Lungs)

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य में वक्षीय गुहा (Thoracic Cavity) में एक जोड़ी फेफड़े पाए जाते हैं। फेफड़े गुलाबी रंग की कोमल, कोणाकार तथा स्पंजी रचना होती है। यह अत्यन्त कोमल होने के साथ–साथ जीवन के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग होते हैं इसीलिए इनकी सुरक्षा हेतु फेफड़ों के चारों ओर पसलियों का मजबूत आवरण पाया जाता है।

प्रत्येक फेफड़े के चारों ओर एक पतला आवरण पाया जाता है जिसे फुफ्फुसावरण (Pleura) कहा जाता है। यह दोहरी झिल्ली का बना होता है तथा इसमें गाढ़ा चिपचिपा द्रव फुफ्फुस द्रव (Pleural fluid) भरा होता है। इस द्रव के कारण फेफड़ों के क्रियाशील होने पर भी फेफड़ों में रगड़ (Friction) उत्पन्न नहीं होती है।

दोनों फेफड़ों में बाएं फेफड़े की तुलना में दाहिना फेफड़ा अपेक्षाकृत बड़ा तथा अधिक फैला हुआ होता है। इसका कारण बांयी ओर हृदय का उपस्थित होना होता है। फेफड़ों का निचला भाग डायफ्राम नामक पेशीय रचना के साथ जुड़ा होता है। "दाहिना फेफड़ा तीन पिण्डों (Lobe) में तथा बांया फेफड़ा दो पिण्डों (Lobe) में बंटा होता है।"

फेफड़ों के कार्य (Functions of Lungs)

मनुष्य के फेफड़ों के अन्दर वायुकोषों का घना जाल होता है। वायुकोष फेफड़ों में मधुमक्खी के छत्ते के समान रचना का निर्माण करते हैं। फेफड़ों का हृदय के साथ सीधा सम्बन्ध होता है। हृदय CO_2 युक्त रक्त लेकर, बड़ी रक्त वाहिनी (प्लमोनरी आर्टरी) फेफड़ों में आकर अनेकों शाखाओं में बंट जाती है। बाह्य वायुमण्डल से श्वास के द्वारा लाई गई O_2 एवं शरीर के अन्दर कोशिकाओं से रक्त द्वारा लायी गयी CO_2 गैस के विनिमय (आदान–प्रदान) का कार्य फेफड़ों में ही सम्पन्न होता है।

ज) डायफ्राम (Diaphragm)

डायफ्राम लचीली मांसपेशियों से निर्मित श्वसन अंग है। श्वसन मांसपेशियों में डायफ्राम सबसे शक्तिशाली मांसपेशी होती है, जिसका सम्बन्ध दोनों फेफड़ों के साथ होता है। डायफ्राम दोनों फेफड़ों को नीचे की ओर साधकर (Tone) रखने का कार्य करता है।

डायफ्राम के कार्य (Functions of Diaphragm)

डायफ्राम वक्ष एवं उदर को विभाजित करने का कार्य करता है। फेफड़ों में श्वास भरने पर वायु का दबाव डायफ्राम पर पड़ता है, जिससे यह नीचे उदर की ओर चला जाता है और डायफ्राम का दबाव नीचे की ओर होने के कारण उदर का विस्तार होता है जबकि इसके विपरीत फेफड़ों से श्वास बाहर निकलने पर जब फेफड़े संकुचित होते हैं तब डायफ्राम का खिंचाव ऊपर की ओर होने के कारण उदर का संकुचन होता है। इस प्रकार श्वसन क्रिया का प्रभाव उदर प्रदेश पर पड़ता है। डायफ्राम फेफड़ों को उदर प्रदेश से जोड़ने का कार्य करता है।

यूनिटगत प्रश्न 6.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. कोशिका में ग्लूकोज के दहन की क्रिया में .... गैस का उपयोग होता है।

टिप्पणी

2. मनुष्य में फेफड़ों के चारों ओर का आवरण .... कहलाता है।

3. मनुष्य में दाहिने फेफड़े में श्वसनी .... प्रमुख शाखाओं में बंटी होती है।

4. एक स्वस्थ मनुष्य के प्रति 100 एम.एल. रक्त में .... मिली ग्राम हिमोग्लोबिन पाया जाता है।

5. व्यस्कावस्था में स्वस्थ व्यक्ति की श्वसन दर .... श्वास प्रतिमिनट होती है।

ख) बहुविकल्पीय प्रश्न—

1) मानव श्वसन तंत्र की सबसे छोटी रचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई है—

a) न्यूरान   b) नेफ्रान

c) एल्विओलाई   d) विलाई

2) श्वसन तंत्र के निम्नलिखित अंगों को उचित क्रम में व्यवस्थित करें—

I) ब्रोन्किओल्स   II) ट्रैकिया

III) ब्रोन्काई   IV) एल्वियोलाई

सही उत्तर के लिए निम्न कूट का उपयोग करें—

a) II, III, I, IV   b) II, I, III, IV

c) IV, III, I, II   d) II, III, IV, II

3) किस यौगिक शोधन क्रिया को ई0एन0टी0 केयर की संज्ञा दी जाती है।

a) धौति   b) नेति

c) त्राटक   d) कपालभाति

4) योग के अनुसार श्वास का पूरक करने का अर्थ है—

a) श्वास अन्दर भरना   b) श्वास बाहर छोडना

c) श्वास अन्दर भरकर रोकना   d) श्वास बाहर छोडकर रोकना

5) वाणी अर्थात स्वर की उत्पत्ति करने वाला अंग है —

a) ट्रैकिया   b) फेरिंग्स

c) लेरिंग्स   d) एपिग्लोटिस

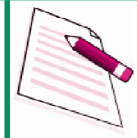

टिप्पणी

6.4 श्वसन तंत्र की क्रियाविधि (Mechanism of Respiration)

प्रिय शिक्षार्थियों, नासिका से श्वास ग्रहण करने के साथ ही बाह्य वातावरण से वायु नासिका एवं नासिका गुहा में प्रवेश कराती हैं। नासिका गुहा में उपस्थित सूक्ष्म रोम केशों का जाल धूल एवं धुंए के कणों को छान देता है। यहां पर उपस्थित संवेदी नाड़ियां वायु की गन्ध का ज्ञान मस्तिष्क को करती है। यहां से आगे यह वायु ग्रसनी में पहुंच जाती है। ग्रसनी में उपस्थित कण्ठच्छद (Epiglottis) अन्न नलिका के द्वार को बन्द कर देता है जिससे यह वायु स्वरयन्त्र से होती हुई श्वासनलिका में चली जाती है। श्वासनलिका में स्थित श्लेष्मा ग्रन्थियां श्लेष्मा का स्रावण करती रहती हैं। इसके परिणामस्वरूप वायु के साथ आए धूल, धुएँ एवं सूक्ष्म जीव आदि इस नलिका में ही चिपक जाते हैं।

इस प्रकार श्वासनलिका से वायु क्रमशः दाहिने एवं बाएं फेफड़ों में भर जाती है। श्वासनलिका से श्वसनी एवं श्वसनी से श्वसनिकाओं में होती हुई वायु आगे चलकर वायुकोषों में भर जाती है। वायु भरने के कारण वायुकोष गुब्बारे की तरह फूल जाते हैं। वायुकोष एककोशीय दीवारों के बने होते हैं तथा इन वायुकोषों के मध्य रक्तवाहिनियों का घना जाल उपस्थित होता है। इन रक्तवाहिनियों में हृदय से आया CO_2 की अधिकता युक्त अशुद्ध रक्त भरा होता है। इस प्रकार यहां वायुकोषों एवं रक्त वाहिनियों के मध्य गैसों का विनियम (Exchange of O_2 & CO_2) होता है।

6.4.1 गैसों का विनियम (Exchange of Gases)

मानव शरीर में गैसों के विनिमय की क्रिया फेफड़ों में सम्पन्न होती है। इस क्रिया को इस प्रकार समझा जा सकता है –

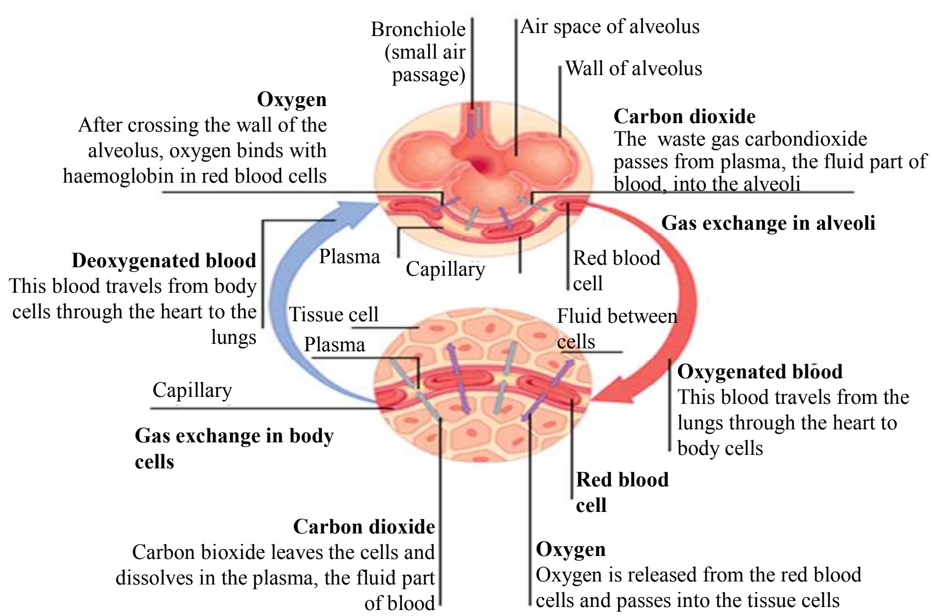

चित्र 6.3:

टिप्पणी

गैसों के विनियम अर्थात् आदान–प्रदान के परिणामस्वरूप O_2 रक्तवाहिनियों में चली जाती है एवं रक्तवाहिनियों में उपस्थित वायुकोषों में भर जाती है। तत्पश्चात वायुकोषों से CO_2 श्वसनिकाओं में, श्वसनिकाओं से श्वसनी में, श्वसनी से श्वासनलिका में, श्वासनलिका से स्वरयन्त्र, ग्रसनी से होती हुई नासिका के माध्यम से बाह्य वायुमण्डल में भेज दी जाती है। गैसों के आदान–प्रदान में हिमोग्लोबिन नामक तत्व बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आक्सीजन रक्त में स्थित लौह युक्त रंजक पदार्थ हिमोग्लोबिन के साथ जुड़कर आक्सी हिमोग्लोबिन नामक अस्थाई यौगिक का निर्माण करती है। यह यौगिक रक्त के माध्यम से शरीर की विभिन्न कोशिकाओं में पहुंचकर आक्सीजन को मुक्त कर देता है। इस मुक्त आक्सीजन का उपभोग कोशिका आक्सीश्वसन में करती है।आक्सीश्वसन के परिणामस्वरूप कार्बन डाईऑक्साइड गैस की उत्पत्ति होती है। यहाँ हिमोग्लोबिन पुनः कार्बन डाईऑक्साइड के साथ मिलकर अस्थाई यौगिक कार्बोक्सीहिमोग्लोबिन का निर्माण करता है। कार्बोक्सी हिमोग्लोबिन रक्त के साथ हृदय एवं फेफड़ों तक पहुंचता है। फेफड़ों में हिमोग्लोबिन कार्बन डाईऑक्साइड को मुक्त कर देता है तथा यह कार्बन डाईऑक्साइड प्रश्वास के रूप में बाह्य श्वसन तंत्र की सहायता से बाहर निकाल दी जाती है। इस क्रियाविधि को निम्न समीकरण द्वारा आसानी से समझा जा सकता है –

i) **फेफड़ों में हिमोग्लोबिन का आक्सीजन के साथ जुड़ना**

$$Hb + O_2 \rightarrow HbO_2$$

हिमोग्लोबिन + आक्सीजन → आक्सी–हिमोग्लोबिन

ii) **कोशिका में हिमोग्लोबिन द्वारा आक्सीजन मुक्त करना**

$$HbO_2 \rightarrow Hb + O_2$$

ऑक्सी–हिमोग्लोबिन → हिमोग्लोबिन + ऑक्सीजन

iii) **कोशिका में हिमोग्लोबिन का कार्बन डाई ऑक्साइड के साथ जुड़ना**

$$Hb + CO_2 \rightarrow HbCO_2$$

हिमोग्लोबिन + कार्बनडाइआक्साइड → कार्बोक्सीहिमोग्लोबिन

iv) **फेफड़ों में हिमोग्लोबिन द्वारा कार्बन डाई ऑक्साइड मुक्त करना**

$$HbCO_2 \rightarrow Hb + CO_2$$

कार्बोक्सीहिमोग्लोबिन → हिमोग्लोबिन + कार्बनडाइआक्साइड

आन्तरिक श्वसन की क्रिया में हिमोग्लोबिन अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका का वहन करता है। हिमोग्लोबिन रक्त में उपस्थित एक ऐसा यौगिक होता है जो ऑक्सीजन को फेफडों से लेकर शरीर की आन्तरिक कोशिकाओं तक पहुँचाने का कार्य करता है, इसी प्रकार यह हिमोग्लोबिन आन्तरिक कोशिकाओं में स्थित कार्बन डाई ऑक्साइड गैस को फेफड़ों तक पहुँचाने का कार्य करता है।

एक स्वस्थ मनुष्य के प्रति 100 एम.एल. रक्त में 12 से 14 मिली ग्राम हिमोग्लोबिन पाया जाता है। सुखी, सम्पन्न, प्रसन्नचित्त व्यक्तियों का रक्त प्राय हिमोग्लोबिन से परिपूर्ण पाया जाता है, ऐसे व्यक्तियों की कार्यक्षमता अधिक एवं इनके चेहरे पर तेज पाया जाता है। इसके विपरीत जो दुखी, निराश, हताश, समस्याओं से घिरे हुए एवं हीनता से ग्रस्त रहते हैं, उनके रक्त में हिमोग्लोबिन की मात्रा कम हो जाती है। ऐसे व्यक्तियों की कार्यक्षमता कम हो जाती है। रक्त में हिमोग्लोबिन की मात्रा कम होने पर आक्सीजन तथा कार्बन डाईऑक्साइड गैसों का परिवहन पर्याप्त मात्रा में नहीं हो पाता है। जिससे कोशिकाओं में आन्तरिक श्वसन की क्रिया बाधित होती है तथा कोशिकाओं में ऊर्जा उत्पत्ति की क्रिया धीमी पड़ जाती है। ऊर्जा उत्पत्ति की क्रिया धीमी पड़ने से उस व्यक्ति की कार्यक्षमता (Working Efficiency & Body Stamina) कम हो जाती है। ऐसी अवस्था में भोजन में आयरनयुक्त खाद्य पदार्थों जैसे– पालक, सेब, गाजर, चुकुन्दर आदि का अधिक सेवन करने से रक्त में हिमोग्लोबिन की मात्रा बढ़ जाती है, तथा व्यक्ति की कार्यक्षमता पुनः सही हो जाती है।

6.5 अन्तःश्वसन तंत्र (Internal Respiratory System)

अन्तःश्वसन का अर्थ शरीर के भीतर भोजन रस (ग्लूकोज) के दहन की क्रिया में उत्पन्न ऊर्जा से होता है। अन्तःश्वसन के फलस्वरुप शरीर के अन्दर स्थित कोशिकाएं भोजन रस (ग्लूकोज) के दहन की क्रिया के फलस्वरुप ऊर्जा प्राप्त करती हैं। अन्तःश्वसन की क्रिया में ग्लूकोज का दहन दो प्रकार से होता है –

क) ऑक्सी-श्वसन (Aerobic Respiration)- जब शरीर के अन्दर कोशिका में ऑक्सीजन उपस्थित रहती है तब ऑक्सीजन की उपस्थिति में ग्लूकोज का पूर्ण रूप से ऑक्सीकरण होता है। इस क्रिया में जल के साथ–साथ अधिकतम ऊर्जा की उत्पत्ति होती है। ग्लूकोज के एक अणु के ऑक्सी श्वसन के परिणामस्वरूप 38 ए.टी.पी. की उत्पत्ति होती है। मनुष्य की अधिकांश कोशिकाओं में ऑक्सी श्वसन की क्रिया के परिणामस्वरूप ऊर्जा उत्पन्न होती है।

$$C_6H_{12}O_6 + 6\,O_2 \rightarrow 6\,CO_2 + 6\,H_2O + 38\,ATP$$

ग्लूकोज आक्सीजन → कार्बन डाई ऑक्साइड जल ऊर्जा

ख) अनॉक्सी श्वसन (Anaerobic Respiration)

जब कोशिका में ऑक्सीजन की उपस्थिति नहीं होती किन्तु शरीर को तुरन्त ऊर्जा की अत्यधिक आवश्यकता होती है। ऐसी अवस्था में कोशिका ग्लूकोज का दहन ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में ही कर देती है। यह क्रिया अनॉक्सी श्वसन कहलाती है। इस क्रिया में ग्लूकोज का आंशिक विघटन होता है तथा ग्लूकोज के एक अणु के दहन के परिणामस्वरूप बहुत कम ऊर्जा (2 A.T.P.) की ही उत्पत्ति होती है। मनुष्य शरीर में अनॉक्सी श्वसन, कठिन श्रम की अवस्था, तेज भागने, कठिन व्यायाम की अवस्था में होता है।

टिप्पणी

$$C_6H_{12}O_6 \rightarrow 2C_2H_5COCOOH + ATP$$

ग्लूकोज   लैक्टिक अम्ल   ऊर्जा

इस प्रकार अनॉक्सी श्वसन के परिणामस्वरूप लैक्टिक एसिड की उत्पत्ति होती है। अनॉक्सी श्वसन शरीर की मांसपेशियों में होता है जिसके फलस्वरुप शरीर की पेशियों में लैक्टिक एसिड की उत्पत्ति होती है। शरीर की पेशियों के अधिक समय तक लगातार कार्य करने से लैक्टिक एसिड की अधिकता होने पर पेशियों में भारीपन, थकावट एवं क्रियाहीनता की स्थिति उत्पन्न होती है।

6.6 मनुष्य में श्वसन दर (Breathing Rate)

प्रिय शिक्षार्थियों, एक मिनट में एक मनुष्य जितनी संख्या में श्वास—प्रश्वास की क्रिया करता है, **श्वसन दर** (Breathing Rate) कहलाती है। **बाल्यावस्था के प्रथम पांच वर्षो में शरीर का विकास तेज होने के कारण श्वसन दर तीव्र होती है, जबकि आगे चलकर व्यस्क अवस्था में श्वसन दर 16—18 श्वास प्रति मिनट पर स्थिर हो जाती है।** एक नवजात शिशु की श्वसन दर प्रति मिनट 40 होती है, यह श्वसन दर उम्र बढने के साथ कम होती हुई 16—18 श्वास प्रति मिनट पर स्थिर हो जाती है। स्त्रियों में पुरूषों की तुलना में श्वसन दर कुछ अधिक होती है। श्वसन दर पर शारीरिक श्रम, विश्राम, वातावरणीय परिस्थितियां, देश, स्थान तथा मानसिक अवस्थाएं आदि कारक सीधा प्रभाव रखते हैं। साफ—स्वच्छ सकारात्मक वातावरण एवं शान्त अवस्था में श्वसन दर कम हो जाती है, जबकि इसके विपरीत प्रदूषित वातावरण, क्रोध एवं चिड़चिड़ाहट आदि नकारात्मक स्थितियों में श्वसन दर बढ़ जाती है।

> यद्यपि मनुष्यों में श्वसन क्रिया स्वचालित रुप में चलती रहती है, परन्तु फिर भी इस क्रिया पर कुछ काल तक ऐच्छिक नियंत्रण सम्भव होता है। निश्चित समयावधि के उपरान्त शरीर की कोशिकाओं में CO_2 की मात्रा बढ़ने पर श्वास लेने के लिये बाध्य होना पड़ता है। मनुष्य में श्वसन क्रिया का नियन्त्रण मस्तिष्क में स्थित मेड्यूला (Medula) नामक केन्द्र से होता है। यह केन्द्र शरीर की विभिन्न अवस्थाओं में श्वसन दर को कम एवं अधिक बनाता है। शरीर के अधिक क्रियाशील होने पर श्वसन दर बढ़ जाती है जबकि शरीर द्वारा कार्य नही करने की दशा में श्वसन दर कम हो जाती है। बाह्य जीवाणु अथवा रोगाणु से संक्रमण की अवस्था में श्वसन दर बढ़ने के साथ—साथ शरीर का तापक्रम भी बढ़ जाता है। पहाड़ों में ऊँचाइयों वाले स्थान पर अथवा ऑक्सीजन की कमी वाले स्थानों में जाने पर श्वसन दर बढ़ जाती है। क्रोध, भय एवं मानसिक तनाव आदि विपरित अवस्थाओं में श्वसन दर तीव्र हो जाती है। इसके विपरीत सहज एवं सकारात्मक परिस्थितियों में श्वसन दर कम एवं श्वास की गहराई बढ़ जाती है।

श्वसन दर तीव्र होने पर फेफड़े तेजी से कार्य करते हैं किन्तु इस अवस्था में फेफड़ों का कम भाग ही सक्रिय हो पाता है, जबकि लम्बी एवं गहरी श्वसन क्रिया में फेफडों का अधिकतम भाग सक्रिय होता है, जिससे फेफड़े स्वस्थ बनते हैं।

वायु की धारिता (Capacities of Air)

क्या आप जानते हैं कि, एक मनुष्य श्वास–प्रश्वास के रूप में वायु की जो मात्रा लेते हैं, उसे कैसे मापते हैं? मनुष्य द्वारा, वायु की जितनी मात्रा श्वास के रूप में ग्रहण की जाती है, तथा प्रश्वास के रूप में छोड़ी जाती है, वह मात्रा की माप वायु धारिता कहलाती है। इसे नापने के लिए स्पाइरोमीटर (Spirometer) नामक यंत्र का प्रयोग किया जाता है।

- वायु की वह मात्रा जो सामान्य श्वास में ली जाती है तथा सामान्य प्रश्वास में छोड़ी जाती है प्राण वायु कहलाती है। यह मात्रा 500ml होती है। यह मात्रा स्त्री और पुरुष दोनों में समान होती है।
- सामान्य श्वास लेने के उपरान्त भी वायु की वह मात्रा जो अतिरिक्त रूप से ग्रहण की जा सकती है। प्रश्वसित आरक्षित आयतन कहलाती है। वायु की यह मात्रा 3300 ml होती है।
- सामान्य प्रश्वास छोड़ने के उपरान्त भी वायु की वह मात्रा जो अतिरिक्त रूप से बाहर छोड़ी जा सकती है, निश्वसित आरक्षित आयतन कहलाती है। वायु की यह मात्रा 1000 ml होती है।
- हम फेफड़ों को पूर्ण रूप से वायु से रिक्त नहीं कर सकते अपितु गहरे प्रश्वास के उपरान्त भी वायु की कुछ मात्रा फेफड़ों में शेष रह जाती है, वायु की यह मात्रा अवशिष्ट आयतन कहलाती है। वायु की इस मात्रा का आयतन 1200 ml होता है।
- गहरे श्वास में ली गयी वायु तथा गहरे प्रश्वास में छोड़ी गयी वायु का आयतन फेफड़ों की प्राणभूत वायु क्षमता कहलाती है। वायु की यह मात्रा 4800 ml होती है।
- फेफड़ों द्वारा अधिकतम वायु ग्रहण करने की क्षमता फेफड़ों की कुल वायु धारिता कहलाती है। वायु की यह मात्रा 6000 ml होती है।

6.7 मानव श्वसन तंत्र पर योग का प्रभाव

शिक्षार्थियों, श्वसन तंत्र मानव शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र है जो प्रतिक्षण क्रियाशील रहता हुआ शरीर को ऊर्जावान बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। परन्तु वर्तमान समय में प्रदूषण (Pollution) सम्पूर्ण विश्व की बहुत बड़ी समस्या बनकर आगे आई है। प्रदूषण का सबसे अधिक दुष्प्रभाव मनुष्य के श्वसन तंत्र पर पड़ता है। वातावरण में फैलती अलग–अलग प्रकार की जहरीली गैसें, फैक्ट्रियों से निकलने वाला धुंआ, ऑटोमोबॉइल्स से उत्पन्न धुएं (नाईट्रस ऑक्साईड) ने नाना प्रकार के श्वसन रोगों को जन्म दिया है। बढ़ते वायु प्रदूषण के कारण श्वसन तंत्र से सम्बन्धित सर्दी, जुकाम, खाँसी, ब्रोंकाइटिस, दमा, एवं एलर्जी आदि रोग सामान्य बनते जा रहे हैं। मानसिक तनाव के बढ़ते प्रभाव से दमा रोग की समस्या कम उम्र के बच्चों एवं नवयुवकों में तेजी से बढ़ती जा रही है। वर्तमान समय में साइनस, सर्दी–जुकाम, माइग्रेन एवं सिरदर्द का रोग जनसामान्य की प्रमुख समस्या बनती जा रही है। श्वसन तंत्र में विकार उत्पन्न होने पर मनुष्य की कार्यक्षमता एवं रोगप्रतिरोधक क्षमता

टिप्पणी

क्षीण हो जाती है। वर्तमान समय में जहरीली रासायनिक दवाइयों एवं खतरनाक इनहेलरों का प्रयोग समाज में तेजी से बढ़ा है, परन्तु इनके प्रयोग से रोग, विकार एवं समस्या कुछ समय के लिए दब जाती है, जबकि मूल रूप से रोग समाप्त नहीं होता है, अपितु आगे चलकर और खतरनाक रूप में सामने आता है। प्राचीन काल में प्रदूषण की समस्या नहीं थी। ऋषि–मुनि से लेकर गृहस्थी एवं राजपरिवार के सभी सदस्य अग्निहोत्र को अपनी दिनचर्या का अनिवार्य अंग मानते थे। नित्य अग्निहोत्र अर्थात् देवयज्ञ अनेकानेक भौतिक मानसिक और आध्यात्मिक लाभ प्रदान करने के साथ–साथ वायुमंडल को स्वच्छ बनाए रखता था, जिसके प्रभाव से मनुष्य का श्वसन तंत्र भी सुचारू रूप से कार्य करता था। वर्तमान परिस्थितियां पूर्णतया भिन्न है। प्रदूषण के साथ–साथ नकारात्मक एवं विकृत भावनाएं श्वसन तंत्र पर बहुत नकारात्मक प्रभाव दे रही हैं। इसके कारण नाना प्रकार के श्वसन रोग उत्पन्न हो रहे हैं।

यहां पर सुव्यवस्थित दिनचर्या, योगमय जीवनशैली, नियमित योगाभ्यास एवं पथ्य आहार श्वसन तंत्र को स्वस्थ्य एवं सक्रिय बनाए रखने का एक श्रेष्ठ विकल्प है। यौगिक क्रियाओं का विधिवत नियमित अभ्यास करने से श्वसन तंत्र को दीर्घकाल तक, स्वस्थ एवं सक्रिय बनाए रखा जा सकता है। श्वसन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव का अध्ययन इस प्रकार किया जा सकता है–

1. षट्कर्म का प्रभाव

षट्कर्म की छह शोधन क्रियाएं श्वसन तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव रखती हैं। शरीर में कफ दोष विकृत होने पर श्वसन क्रिया में बाधा उत्पन्न होती है। धौति क्रिया कफ दोष का शमन करते हुए श्वसन क्रिया को सुचारू बनाती है। नेति क्रिया सम्पूर्ण श्वसन तंत्र पर सीधा सकारात्मक प्रभाव रखती है। नेति क्रिया को ई0एन0टी0 केयर की संज्ञा दी जाती है। ई0 का अर्थ ईयर अर्थात् कान, एन0 का अर्थ नोज अर्थात् नासिका एवं टी0 का अर्थ थ्रोट अर्थात् गला से होता है। नेति क्रिया इन तीन महत्वपूर्ण अंगों का शोधन करते हुए इन पर सकारात्मक प्रभाव रखती है। सर्दी, जुखाम, टॉन्सिल्स, साइनस, नाक की हड्डी बढ़ना एवं गले की एलर्जी आदि रोगों में नेति क्रिया विशेष लाभकारी प्रभाव रखती है। नेति क्रिया के लाभों का वर्णन करते हुए हठयोग प्रदीपिका के रचनाकार योगी स्वात्माराम कहते हैं–

कपालशोधिनी चैव दिव्य दृष्टि प्रदायिनी।

जत्रूर्ध्वजातरोगौघं नेतिराशु निहन्ति च।।

(हठ प्रदीपिका 2/31)

अर्थात् नेतिक्रिया कपाल को शुद्ध करती है तथा नासिका आदि के मल को दूर करती है। यह साधक के दिव्यदृष्टि प्रदान करती है तथा कन्धों की सन्धि के ऊपर के अंगों से सम्बन्धित रोग समूह को शीघ्र ही नष्ट कर देती है अर्थात् इस क्रिया के द्वारा आंख, नाक, कान, गला आदि के रोगों का नाश होता है।

इसी प्रकार नेति क्रिया के महत्व पर प्रकाश डालते हुए योग के महत्वपूर्ण ग्रन्थ भक्ति सागर में स्वामी चरणदास जी कहते हैं–

नाक, कान अरू दाँत को रोग न व्याये कोई।

निर्मल होवे नैन ही नित नेति करै सोई।।

(भक्ति सागर)

अर्थात् नियमित रूप से नेति क्रिया का अभ्यास करने से नाक, कान और दाँत सम्बन्धित रोग उत्पन्न नहीं होते हैं और नेत्र निर्मल बनते हैं।

शोधन क्रियाओं का अभ्यास श्वसन तंत्र पर सकारात्मक एवं अनुकूल प्रभाव रखता है। त्राटक नामक शोधन क्रिया मनुष्य की श्वसन दर एवं हृदय गति दोनों पर सकारात्मक प्रभाव रखती है। त्राटक कर्म के अभ्यास से श्वसन क्रिया संतुलित एवं सुव्यवस्थित होती है। वातक्रम कपालभाति का नियमित अभ्यास करने से वायुकोष स्वच्छ बनते हैं। वायुकोषों के स्वच्छ बनने से फेफड़ों का अधिकाधिक भाग सक्रिय बनता है, जिसके फलस्वरूप मनुष्य की कार्यक्षमता का विकास होता है। इसी प्रकार व्युत्क्रम एवं शीतक्रम कपालभाति जलतत्व द्वारा शरीर से कफदोष की निवृत्ति करते हैं। इनके अभ्यास से श्वसन अंगों का शोधन होता है, जिससे श्वसन तंत्र रोगमुक्त, स्वस्थ एवं सक्रिय बनता है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि षट्कर्म की छह शोधन क्रियाओं में धौति, नेति, त्राटक एवं कपालभाति क्रियाओं का अभ्यास श्वसन तंत्र पर बहुत अच्छा प्रभाव रखते हैं।

2. आसन का प्रभाव

नियमित आसनों का अभ्यास श्वसन तंत्र पर अच्छा प्रभाव रखता है। योगासन करने का महत्वपूर्ण नियम है कि आगे झुकते समय श्वास बाहर छोड़ते हैं, जबकि पीछे की ओर झुकते समय श्वास को अन्दर भरते हैं। उष्ट्रासन, गोमुखासन, सिंहासन, भुजंगासन, धनुरासन, चक्रासन, मत्स्यासन आदि आसनों का अभ्यास करने से वायुकोषों में फैलाव उत्पन्न होता है जिससे फेफड़ों की कार्यकुशलता एवं कार्यक्षमता बढ़ती है। चूंकि आसनों के अभ्यास में श्वास–प्रश्वास पर नियंत्रण रखा जाता है अतः आसनों के अभ्यास से श्वसन क्रिया पर मस्तिष्क का नियंत्रण बढ़ता है। योगासनों का सम्मिलित समूह सूर्य नमस्कार एवं प्रज्ञा योग का अभ्यास करने से मनुष्य का श्वसन तंत्र स्वस्थ्य, सक्रिय एवं रोगमुक्त बनता है।

3. मुद्राओं एवं बंधों का प्रभाव

मुद्राओं एवं बंधों का अभ्यास आन्तरिक स्तर पर शरीर को ऊर्जावान बनाता है। मुद्राओं एवं बंधों का अभ्यास करने से शरीर में प्राणऊर्जा का संचार होता है और श्वसन क्रिया पर नियंत्रण स्थापित होता है। इन यौगिक क्रियाओं के अभ्यास करने से श्वसन क्रिया सुचारू बनती है। जालन्धर बंध का अभ्यास करने से श्वसन क्रिया पर नियंत्रण स्थापित होता है। इसके साथ–साथ मूल बंध एवं जालन्धर बंध के अभ्यास से श्वसन तंत्र के विभिन्न रोग स्वतः ही दूर होते हैं।

टिप्पणी

4. प्रत्याहार का प्रभाव

प्रत्याहार से अभिप्राय इन्द्रियों पर संयम से हैं। इन्द्रियों पर असंयम करते हुए अनियमित दिनचर्या, प्रतिकूल विकृत आहार का सेवन, श्रमहीन विलासितापूर्ण जीवनशैली, प्रकृति के नियमों का उल्लंघन एवं अधिक समय तक मानसिक तनाव में रहने से श्वसन तंत्र में विकृतियां उत्पन्न हो जाती हैं तथा इन विकृतियों से श्वसन रोग उत्पन्न हो जाते हैं। यहाँ पर प्रत्याहार का पालन एक अचूक रसायन का कार्य करता है। प्रत्याहार के पालन से श्वसन तंत्र की क्रियाशीलता बढ़ती है। अनुशासन के साथ प्रत्येक क्रिया को करने से श्वसन दर संतुलित बनी रहती है और श्वसन तंत्र स्वस्थ एवं सक्रिय बनता है।

5. प्राणायाम का प्रभाव

योग एवं आयुर्वेद दोनों शास्त्रों की दृष्टि में प्राणायाम की क्रिया बहुत महत्वपूर्ण एवं लाभकारी अभ्यास है, क्योंकि प्राण ही प्राणी के जीवन का आधार होता है, प्राण ही आयु है, प्राण ही जीवन है अर्थात् सबकुछ प्राण ही है। हर प्राणी की जीवन की स्थिति अर्थात् श्वास की संख्या निश्चित है, यदि मनुष्य को दीर्घायु बनना है तो उसे जीवन में प्राणायाम की बहुत आवश्यकता है।

"प्राण की गतियों पर नियंत्रण कर मनुष्य योग की अगली सीढ़ी धारणा, ध्यान, समाधि की उच्चावस्था तक पहुंचता है और अन्त में मुक्ति को प्राप्त करता है। अर्थ यह है कि प्राण भौतिक जगत के साथ साथ आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त करने का प्रमुख साधन है। प्राण ऊर्जा पर नियंत्रण स्थापित करने की क्रिया ही '**प्राणायाम**' कहलाती है।"

प्राणायाम श्वसन तंत्र पर बहुत गहराई से सकारात्मक प्रभाव रखते हैं। प्राणायाम के अभ्यास में पूरक, रेचक, अन्तःकुम्भक एवं बाह्यकुम्भक नामक चार महत्वपूर्ण क्रियाएं श्वसन तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव रखती हैं। इन क्रियाओं के विधिपूर्वक नियमित अभ्यास करने से श्वसन क्रिया पर नियंत्रण स्थापित होता है एवं श्वसन तंत्र के रोग दूर होते हैं। नियमित प्राणायाम करने से शरीर की चयापचय दर संतुलित रहती है, शरीर में अनावश्यक चर्बी एकत्र नहीं होती है तथा वात–पित्त और कफ नामक त्रिदोष साम्यावस्था को प्राप्त होते हैं। प्राणायाम का अभ्यास करने से श्वसन क्रिया धीमी, दीर्घ एवं सूक्ष्म हो जाती है। वैज्ञानिक शोध–अनुसंधान यह स्पष्ट करते हैं कि संसार में प्रति मिनट अधिक श्वास लेने वाले जीवों की औसत आयु कम तथा प्रति मिनट कम श्वास लेने वाले जीव लम्बी औसत आयु प्राप्त करते हैं। मनुष्य द्वारा नियमित प्राणायाम का अभ्यास करने से उसकी श्वसन दर (प्रतिमिनट श्वासों की संख्या) कम हो जाती है, जिसके फलस्वरूप वह दीर्घायु को प्राप्त करता है।

प्राणायाम के लाभों का वर्णन करते हुए हठप्रदीपिका के रचनाकार योगी स्वात्माराम कहते हैं–

टिप्पणी

षट्कर्मनिर्गततस्थौल्यकफदोषमलादियकः ।

प्राणायामं ततः कुर्यादनायासेन सिद्धयति ।।

(हठप्रदीपिका 2/37)

अर्थात् मोटापा, कफ संबंधी रोग तथा मल आदि का छह शुद्धि क्रियाओं द्वारा निवारण कर, तब प्राणायाम करना चाहिए। इससे प्राणायाम अनायास ही सिद्ध हो जाता है। प्राणायाम के अन्तर्गत नाड़ी–शोधन, अनुलोम–विलोम, सूर्यभेदी, उज्जायी, भस्त्रिका एवं भ्रामरी नामक प्राणायामों का नियमित अभ्यास करने से श्वसन तंत्र, विकारों से मुक्त, स्वस्थ एवं सक्रिय बनता है।

6. ध्यान का प्रभाव

ध्यान मानसिक एकाग्रता की अवस्था है, जिसमें मनुष्य ब्रह्मांडीय ऊर्जा को ग्रहण करता है। ध्यान की अवस्था में स्थूल शरीर शान्त एवं स्थिर हो जाता है तथा मन पर नियंत्रण होने लगता है। इस शान्त अवस्था का मनुष्य के श्वसन तंत्र, मस्तिष्क एवं मन पर सकारात्मक एवं अनुकूल प्रभाव पड़ता है। नियमित ध्यान करने से श्वसन क्रिया संतुलित एवं नियंत्रित बनती है। श्वसन क्रिया के संतुलित होने से श्वसन रोग दूर होते हैं।

7. समाधि का प्रभाव

यहां पर समाधि से अभिप्रायः अपने चारों ओर सकारात्मक वातावरण के अनुभूति करने से है, जिसका अच्छा प्रभाव सभी श्वसन अंगों पर पड़ता है। समाधि की सम अनुभूति करने से सभी श्वसन अंग अपने कार्य को सुव्यवस्थित रूप से करते हैं, जिससे श्वसन तंत्र स्वस्थ, सक्रिय, ऊर्जावान एवं रोगमुक्त बनता है।

प्रिय शिक्षार्थियों, इस प्रकार उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यौगिक क्रियाओं का अभ्यास मानव श्वसन तंत्र पर अनुकूल एवं सकारात्मक प्रभाव रखता है। इसके साथ–साथ उपयुक्त आहार का सेवन करने से श्वसन तंत्र स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बनता है। आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार शरीर की कफ प्रधान प्रकृति होने पर उष्ण और रुक्ष आहार का सेवन करना चाहिए जबकि शीत और गरिष्ठ आहार का सेवन त्याग देना चाहिए।

यूनिटगत प्रश्न 6.2

क) सत्य अथवा असत्य कथन का चयन कीजिए –

1) नेति क्रिया कपाल को शुद्ध करती हुई दिव्य दृष्टि प्रदान करती है।

2) श्वासनली में गोबलेट सैल्स म्यूकस का स्त्रावण करती हैं।

टिप्पणी

3) योगासन करने में आगे झुकते समय श्वास अन्दर भरते हैं, जबकि पीछे की ओर झुकते समय श्वास को बाहर छोड़ते हैं।

4) मानसिक तनाव के बढ़ते प्रभाव से दमा रोग कम उम्र के बच्चों एवं नवयुवकों में तेजी से बढ़ रहा है।

5) नियमित प्राणायाम का अभ्यास करने से मनुष्य प्रति मिनट अधिक श्वास लेता हुआ लम्बी आयु को प्राप्त करता है।

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए –

1) श्वसन तंत्र को स्वस्थ बनाने वाले दो योगासनों के नाम लिखिए।

2) कफ दोष का शमन करने वाली एवं श्वसन तंत्र को स्वस्थ बनाने वाली दो शोधन क्रियाओं के नाम लिखिए।

3) मनुष्य में श्वास–प्रश्वास में वायु की मात्रा की नापने के लिए किस यंत्र का प्रयोग किया जाता है?

4) ग्लूकोज के एक अणु के आक्सी श्वसन के परिणामस्वरूप कितने ए0टी0पी0 की उत्पत्ति होती है?

5) मनुष्य मस्तिष्क के किस भाग से श्वसन क्रिया नियंत्रित होती है?

ग) सुमेलित करते हुए सही कूट का प्रयोग करें।

1.	हिमोग्लोबिन (Hb)	–	a– ऊर्जा अणु
2.	ए0 टी0 पी0 (A.T.P.)	–	b– फेफड़े
3.	वायु प्रकोष्ठ (Alveoli)	–	c– ऑक्सीजन
4.	ट्यूबरक्लोसिस (T.B.)	–	d– एलर्जी
5.	दमा (Asthma)	–	e– बैक्टीरिया

आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने सीखा कि

- श्वसन तंत्र मानव शरीर की कोशिकाओं को ऑक्सीजन प्रदान करता है और कोशिकाओं में स्थित कार्बन डाई ऑक्साईड को बाहर निकालने का कार्य करता है।
- मनुष्य का श्वसन तंत्र नासिका से प्रारम्भ होकर फेफड़ों और डायाफ्राम तक फैला होता है।
- मनुष्य नासिका से श्वास के रुप में वायु ग्रहण करता है जो ग्रसनी, स्वरयंत्र और श्वासनली से होती हुई दोनों फेफड़ों में भर जाती है।

टिप्पणी

- फेफड़ों में गैसों के आदान–प्रदान की क्रिया होती है जिससे ऑक्सीजन रक्त में पहुंच जाती है और रक्त में उपस्थित कार्बन डाई ऑक्साईड फेफड़ों में आ जाती है।
- यह कार्बन डाई ऑक्साईड प्रश्वास के रुप में शरीर से बाहर निकाल दी जाती है। इस प्रकार मानव शरीर में श्वसन की यह क्रिया हर समय चलती रहती है। इस क्रिया का होना ही जीवन और शरीर में इस क्रिया का रुक जाना ही मृत्यु कहलाता है।
- योग के विभिन्न अभ्यास जैसे षट्कर्म, आसन, प्राणायाम आदि सम्पूर्ण श्वसन तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव रखते हैं। इन अभ्यासों को नियमित रूप से करने से एक ओर जहां सम्पूर्ण मानव शरीर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है तो वहीं दूसरी ओर इन योगाभ्यासों के प्रभाव से मनुष्य का श्वसन तंत्र जीवन पर्यन्त स्वस्थ, सक्रिय, ऊर्जावान और रोगमुक्त बना रहता है।

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव श्वसन तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि को सविस्तार समझाइये।
2. मानव श्वसन तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव की व्याख्या कीजिये।
3. श्वसन दर से आप क्या समझते हो, श्वसन दर को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिये।
4. निम्न पर टिप्पणियां लिखिए–

   क) ऑक्सीश्वसन   ग) अनॉक्सीश्वसन

   ख) मानव फेफड़े   घ) स्वरयंत्र

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

6.1

	क	ख
1.	0_2	1– c
2.	प्लूरा	2– c
3.	तीन	3– a
4.	12 से 14	4– b

टिप्पणी

5.	16 से 18		5— a

6.2

	क		ख	ग
1.	सत्य	1.	उष्ट्रासन, गोमुखासन	1. – c
2.	सत्य	2.	नेति, धौति	2. – a
3.	असत्य	3.	स्पाईरोमीटर	3. – b
4.	सत्य	4.	38	4. – e
5.	असत्य	5.	मेड्यूला	5. – d

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजु तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0) ।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ।

7

उत्सर्जन तंत्र की संरचना–क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछली यूनिटों में आपने मानव शरीर को ऊर्जा प्रदान करने वाले पाचन तंत्र एवं श्वसन तंत्र के विषय में जाना। आपने जाना कि, भोजन के पाचन से प्राप्त ग्लूकोज का, ऑक्सीजन की उपस्थिति में दहन (अर्थात ऑक्सीकरण) होता है, और ग्लूकोज से ऊर्जा मुक्त होती है। मनुष्य इस ऊर्जा का प्रयोग शरीर के विभिन्न आन्तरिक एवं बाह्य कार्यों को करने में करता है। परन्तु इस क्रिया में कुछ ऐसे अनुपयोगी तत्व भी उत्पन्न होते हैं जो शरीर के लिए किसी काम के नहीं होते हैं तथा शरीर में रहने पर, विकारों को भी उत्पन्न करते हैं। इन पदार्थों को उत्सर्जित पदार्थ कहा जाता है। मानव शरीर का ऐसा तंत्र जो इन विजातीय पदार्थों को बाहर निकालने का कार्य करता है, "उत्सर्जन तंत्र" कहलाता है।

हम इस प्रकार भी समझ सकते हैं कि मानव शरीर को कार्य करने के लिए प्रतिक्षण ऊर्जा की आवश्यकता होती है। शरीर को यह ऊर्जा भोजन रस अर्थात् ग्लूकोज के ऑक्सीजन की उपस्थिति में दहन की क्रिया (Oxidation of Glucose in presence of O_2) से प्राप्त होती है। ग्लूकोज के दहन की क्रिया के परिणामस्वरूप शरीर में ऊर्जा की उत्पत्ति होती है। इस ऊर्जा का उपयोग विभिन्न आन्तरिक एवं बाह्य कार्यों को करने में किया जाता है। शरीर में ऊर्जा उत्पत्ति तथा ऊर्जा के प्रयोग की दर चयापचय अर्थात् मेटाबॉलिज्म (Metabolism) कहलाती है। इस चयापचय क्रिया में कुछ ऐसे अनुपयोगी, अपशिष्ट एवं अवशिष्ट पदार्थ भी उत्पन्न होते हैं जो शरीर के लिए अनुपयोगी होते हैं। अनुपयोगी होने के साथ–साथ ऐसे पदार्थों का शरीर से निष्कासन अनिवार्य होता है अन्यथा यह पदार्थ शरीर की आन्तरिक क्रियाओं में बाधाएं उत्पन्न करने लगते हैं। ऐसे अनुपयोगी पदार्थों को **उत्सर्जित पदार्थ** (Excretory Products) की संज्ञा दी जाती है। इन उत्सर्जित पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने वाले अंग उत्सर्जी अंग तथा तंत्र उत्सर्जन तंत्र (Excretory System) कहलाता है।

टिप्पणी

इस यूनिट में हम उत्सर्जन तंत्र का परिचय, संरचना, क्रियाविधि एवं उत्सर्जन तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव का सविस्तार अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

- उत्सर्जन तंत्र का सामान्य परिचय समझा सकेगें;
- उत्सर्जन तंत्र की व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे;
- उत्सर्जन तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि को समझाने में सक्षम हो सकेंगे;
- उत्सर्जन तंत्र के महत्व का वर्णन कर सकेंगे;
- उत्सर्जन तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।

7.1 मानव उत्सर्जन तंत्र का सामान्य परिचय एवं परिभाषा

शिक्षार्थियों, मानव शरीर से अनुपयोगी पदार्थों को बाहर निकालते हुए शरीर का शोधन करने वाले संस्थान को उत्सर्जन तंत्र कहते हैं। उत्सर्जी तंत्र को इस प्रकार परिभाषित किया जाता है–

"शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र, जो शरीर के लिए अनुपयोगी उत्सर्जी पदार्थों को, शरीर से उत्सर्जित करते हुए, शरीर में समस्थिति बनाए रखने का कार्य करता है, उत्सर्जन तंत्र (Excretory System) कहलाता है।"

> The Excretory System is a passive Biological System that removes excess, unnecessary materials from the body fluids of an organism, so as to help maintain internal chemical Homeostasis and prevent damage to the body. The dual function of Excretory System is the elimination of the waste products of metabolism and to drain the body of used up and broken down components in a liquid and gaseous state.

7.2 मानव शरीर के उत्सर्जी अंग (Human Excretory Organs)

शिक्षार्थियों, मानव शरीर में उत्सर्जी पदार्थ ठोस, द्रव एवं गैस तीनों अवस्थाओं में उत्पन्न होते हैं तथा इन तीनों अवस्थाओं में ही शरीर से बाहर उत्सर्जित किए जाते हैं। मानव शरीर में निम्नलिखित अंग इन उत्सर्जित पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने का कार्य करते हैं–

1.	ठोस उत्सर्जी पदार्थ–	बड़ी आँत से मल के रूप में।
2.	द्रवीय उत्सर्जी पदार्थ–	(I) वृक्कों द्वारा मूत्र के रूप में ।
		(II) त्वचा द्वारा पसीने के रूप में ।

3. **गैसीय उत्सर्जी पदार्थ–** फेफड़ों द्वारा CO_2 के रूप में।

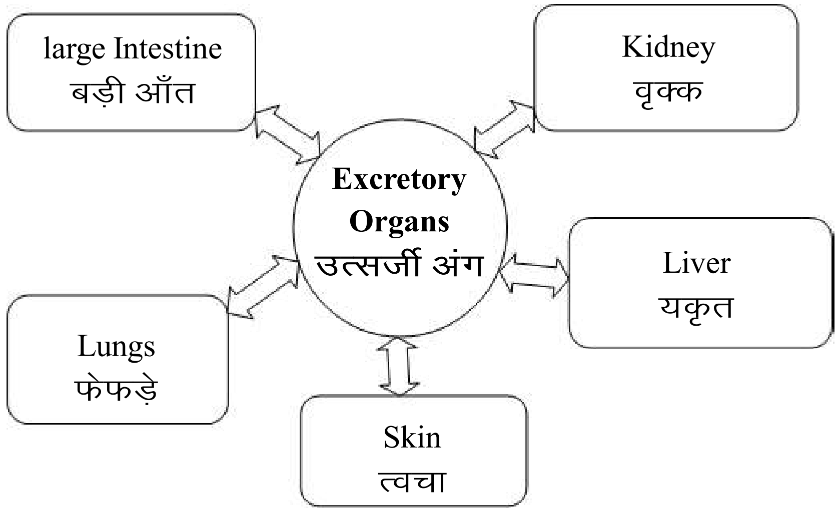

चित्र 7.1: मानव उत्सर्जन अंग

इस प्रकार मानव शरीर में बड़ी आँत, वृक्क, त्वचा एवं फेफड़े शरीर से अनुपयोगी पदार्थों को उत्सर्जित करने का कार्य करते रहते हैं अर्थात् बड़ी आँत, वृक्क, त्वचा और फेफड़े शरीर के चार महत्वपूर्ण उत्सर्जी अंग होते हैं। इनमें से बड़ी आँत का अध्ययन पाचन तंत्र के अन्तर्गत, त्वचा का अध्ययन अध्यावरणीय तंत्र के अन्तर्गत एवं फेफड़ों का अध्ययन श्वसन तंत्र के अन्तर्गत किया जाता है। अतः यहां पर उत्सर्जन तंत्र के अन्तर्गत वृक्क की संरचना एवं कार्यों का अध्ययन किया जाता है।

7.3 मानव उत्सर्जन तंत्र की संरचना (Structure of Human Excretory System)

मानव उत्सर्जन तंत्र की संरचना का क्रम इस प्रकार होता है–

दो वृक्क ⇨दो मूत्रवाहिनियां ⇨मूत्राशय ⇨मूत्रमार्ग।
Kidney ⇨Ureters ⇨Bladder⇨Urethra .

चित्र 7.2: मानव उत्सर्जन तंत्र की संरचना

7.3.1 वृक्क

मानव शरीर के वे अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग, जो प्रतिक्षण रक्त छानने (Filtration of Blood) की क्रिया करते रहते हैं और जिनकी क्रियाशीलता रक्त को शुद्ध बनाए रखती है, **वृक्क** कहलाते

टिप्पणी

हैं। वृक्कों में विकार उत्पन्न होने पर रक्त भली—भाँति छन नहीं पाता जिससे अशुद्धियां रक्त में ही मिली रह जाती हैं एवं रक्त में यूरिक ऐसिड का बढ़ना, यूरिया का बढ़ना, रक्त शर्करा का असन्तुलन, जोड़ों में सूजन—दर्द एवं गठिया और चर्मरोग आदि रोग शरीर में उत्पन्न होने लगते हैं। वृक्कों के सही प्रकार से क्रियाशील नहीं होने की स्थिति में आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में डायालिसिस (Dialysis) नामक क्रिया कराई जाती है, जिसके अन्तर्गत बाह्य उपकरणों की सहायता एवं कृत्रिम रूप से रक्त का शोधन किया जाता है। यह एक कष्टकारी एवं अप्राकृतिक क्रिया होती है, जबकि प्राकृतिक डायालिसिस (Natural Dialysis) की क्रिया वृक्कों के अन्दर प्रतिक्षण चलती रहती है।

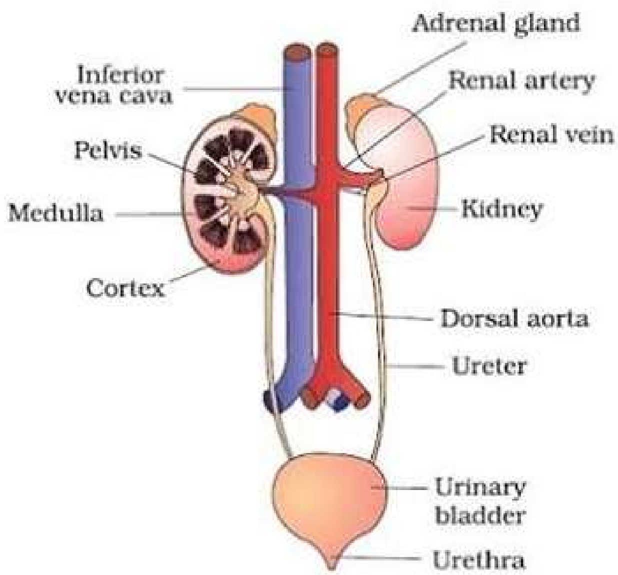

चित्र 7.3: मानव उत्सर्जन तंत्र की संरचना

वृक्क मानव शरीर की उदरीय गुहा (Abdominal Cavity) के पश्च भाग में रीढ़ के दोनों ओर स्थित होते हैं। ये संख्या में दो और बैंगनी रंग की रचनायें होती हैं जो आकार में बहुत बड़ी नहीं होती है। दोनों वृक्कों के ऊपर टोपी के समान अधिवृक्क ग्रन्थियां (Adrenal Glands) नामक रचनाएं पायी जाती हैं। ये ग्रन्थियां वृक्कों की क्रियाशीलता को नियंत्रित करने का कार्य करती हैं। यद्यपि वृक्कों का कार्य मात्र रक्त को छानकर मूत्र निर्माण करना ही नहीं होता है, अपितु दोनों वृक्क मिलकर मानव शरीर में जल, शर्करा तथा खनिज लवणों आदि शरीरोपयोगी तत्वों का सही सन्तुलन अर्थात् समानुपात (Balanced Ratio) बनाये रखने का भी कार्य करते हैं। संक्षेप में स्पष्ट करें तो वृक्क का मूल कार्य शरीर में स्थित अनावश्यक एवं अनुपयोगी तत्वों को बाहर निकालने के साथ साथ शरीर में समस्थिति (Homeostsis) बनाए रखना होता है। वृक्क की संरचना का अध्ययन निम्न दो भागों में बांटकर किया जाता है—

टिप्पणी

1. बाह्य संरचना (External Structure of Kidney)
2. आन्तरिक संरचना (Internal Structure of Kidney)

1. मानव वृक्क की बाह्य संरचना (External Structure of Human Kidney)

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर में उदरीय गुहा के पश्च भाग में रीढ़ के दोनों ओर एक जोड़ी अर्थात् संख्या में दो वृक्क उपस्थित होते हैं। वयस्क मनुष्य में एक वृक्क का भार 140 से 150 ग्राम के मध्य होता है। प्रत्येक वृक्क की लम्बाई 10 से 12 सेमी0 के मध्य एवं चौड़ाई 5 से 6 सेमी0 के मध्य होती है। वृक्क देखने में सेम के बीज (Bean Seed) के समान आकृति वाले होते हैं। दोनों वृक्कों में बाएं वृक्क की तुलना में दाहिना वृक्क दाहिनी ओर यकृत की उपस्थिति के कारण अपेक्षाकृत आकार में छोटा, अधिक फैला हुआ अर्थात् मोटा एवं कुछ नीचे की ओर स्थित होता है। वृक्कों का भीतरी किनारा अवतल (Concave) एवं बाहरी किनारा उत्तल (Convex) होता है। वृक्कों का मध्य भाग गहरा होता है। वृक्कों का मध्य भाग हायलम (Hilum) कहलाता है, इस मध्य भाग से ही रक्त वाहिकाएं वृक्कों में प्रवेश करती हैं एवं मूत्रवाहिकाएं बाहर निकलती हैं। वृक्क का ऊपरी सिरा उर्ध्व ध्रुव एवं निचला सिरा निम्न ध्रुव कहलाता है। प्रत्येक वृक्क के ऊपरी ध्रुव पर अधिवृक्क ग्रन्थि (Adrenal Gland) उपस्थित होती है। प्रत्येक वृक्क कैप्सूल के एक आवरण में लिपटा रहता है। यह कैप्सूल तन्तु ऊतक से बना होता है, जिसे वृक्कीय सम्पुट (Renal capsule) कहा जाता है इस कैप्सूल में वसा संचित रहती है जिससे यह गद्दी की तरह कार्य करता हुआ वृक्कों को बाह्य आघातों एवं चोटों से सुरक्षित रखने का कार्य करता है।

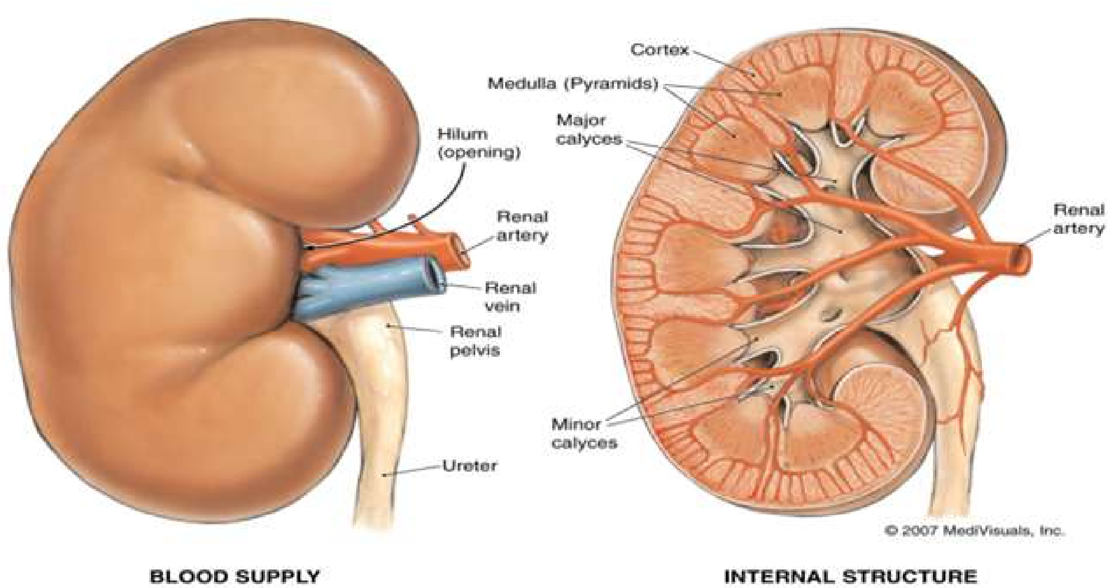

चित्र 7.4: वृक्क की बाह्य एवं आन्तरिक संरचना

टिप्पणी

2. मानव वृक्क की आन्तरिक संरचना (Internal Structure of Human Kidney)

वृक्क की आन्तरिक संरचना निम्न तीन प्रमुख भागों मे बंटी होती है–

i) वृक्कीय श्रोणि (Renal Pelvis)

ii) वृक्कीय अंतस्था (Renal Medulla)

iii) वृक्कीय प्रान्तस्था (Renal Cortex)

i) **वृक्कीय श्रोणि**– वृक्क का सबसे आन्तरिक भाग वृक्कीय श्रोणि कहलाता है। इस भाग से मूत्र को लेकर मूत्रनली बाहर की ओर निकलती है। इस स्थान पर संचायक स्थान (Collecting space) होता है।

ii) **वृक्कीय अन्तस्था**– वृक्क का मध्यभाग वृक्कीय अंतस्था कहलाता है। इसमें 8 से लेकर 18 तक की संख्या में वृक्कीय पिरामिड्स (Renal Pyramids) पाये जाते हैं। पिरामिड्स शंकु के आकार (Corn Shaped) के होते हैं तथा वृक्कीय श्रोणि में आकर खुलते हैं। इन पिरामिड्स में स्थित नलिकाएं मूत्र के पुनः अवशोषण (Reabsorption) की क्रिया में भाग लेती हैं।

iii) **वृक्कीय प्रान्तास्था**– यह वृक्क का सबसे बाहरी भाग होता है जो वृक्कीय सम्पुट (Renal Capsule) के साथ जुड़ा होता है अर्थात् यह भाग वृक्क के बाहरी आवरण (Collecting space) से जुड़ा होता है। वृक्क के इस भाग में नलिकाएं गुच्छों के रुप में अथवा जाल के रुप में फैली होती हैं।

वृक्क का निर्माण करने वाली कोशिकाएं वृक्काणु (Nephrons) कहलाती हैं अर्थात् वृक्कों की मूल रचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई वृक्काणु (Nephron) होती है। प्रत्येक वृक्काणु वृक्क में स्वतंत्र रूप से कार्य करने वाली इकाई होती है। वृक्काणु की संरचना इतनी छोटी होती है कि इसे आँखों से नहीं देखा जा सकता है। अपितु इन्हें सूक्ष्मदर्शी की सहायता से ही देखा जा सकता है, इसीलिए वृक्काणुओं को सूक्ष्मदर्शी इकाई (Microscopic Unit) कहा जाता है। प्रत्येक वृक्क का निर्माण 10 से 13 लाख वृक्काणुओं के मिलने से होता है। वृक्कों की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता वृक्काणुओं की क्रियाशीलता पर निर्भर करती है। वृक्काणुओं की क्रियाशीलता पर बहुत सारे कारक प्रभाव रखते हैं। विशेष रूप से 45 से 50 वर्ष की आयु के उपरान्त इन वृक्काणुओं की संख्या लगभग एक प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से घटने लगती है, इसका प्रभाव वृक्कों की कार्यक्षमता पर पड़ता है तथा इसके परिणाम स्वरूप रक्त छानने (Blood Filtration) एवं मूत्र निर्माण (Urine formation) की क्रिया धीमी पड़ती है। यही कारण होता है कि 50 वर्ष से अधिक उम्र होने पर मनुष्य को अपने आहार एवं विहार में अधिक नियम–संयम की आवश्यकता पड़ती है। इस आयु में अधिक विकृत आहार लेने से रक्त में विकृति उत्पन होने पर वृक्क रक्त को पुनः शुद्ध बनाने में सक्षम नहीं हो पाते हैं तथा शरीर नाना प्रकार के रोगों से ग्रस्त होने लगता है।

7.3.2 वृक्काणुओं की संरचना (Structure of Nephrons)

वृक्क में दो प्रकार के वृक्काणु उपस्थित होते हैं। वृक्क में वृक्काणुओं का वह वर्ग जो प्रतिक्षण क्रियाशील रहता है एवं संख्या में बहुत अधिक (वृक्क के लगभग दो तिहाई भाग में फैले) होता है, कोर्टिकल नेफ्रान (Cortical Nephron) कहलाता है जबकि वृक्क में उपस्थित वृक्काणुओं का वह वर्ग जो केवल विशेष परिस्थिति अर्थात् तनाव एवं दबाव (Stress Condition) में ही क्रियाशील होता है, जक्स्टामेड्यूलरी नेफ्रान (Juxtamedulary Nephron) कहलाता है। इन जक्स्टामेड्यूलरी नेफ्रान की संख्या अपेक्षाकृत कम होती है।

वृक्काणु की संरचना का अध्ययन निम्नलिखित दो भागों में बांटकर किया जाता है–

i) **केशिका गुच्छीय** (Glomerular)

ii) **वृक्कीय नलिका** (Renal tubule)

i) **केशिका गुच्छ**– केशिका गुच्छ को मालपीजी का पिण्ड (Malpighian body) भी कहा जाता है। यह वृक्काणु का आरम्भिक भाग होता है जो गुच्छे के रूप में होता है। केशिका गुच्छ एक कप (प्याले) के समान रचना बनाकर रक्त निस्यन्दन (Filtration) की क्रिया में भाग लेता है। वृक्काणुओं का यह भाग चाय की छलनी के समान एक जालनुमा रचना का निर्माण करता है। इस छलनीनुमा रचना से जब रक्त छनता है तब रक्त में उपस्थित जल एवं घुलनशील लवण (ग्लूकोज, यूरिया, अमीनो अम्ल आदि) तो इनमें से छन जाते हैं जबकि बड़े प्रोटीन के अणु इनमें से नहीं गुजर पाते हैं यह क्रिया केशिका गुच्छीय निस्यन्दन (Glomerular Filtration) कहलाती है। यह रक्त छानने का प्रथम चरण है, जिसमे रक्त से उपयोगी शर्करा एवं लवण आदि छन जाते हैं। इन छने हुए पदार्थों का वृक्क में पुनः अवशोषण किया जाता है।

ii) **वृक्कीय नलिका**– वक्कीय नलिका वृक्काणु का ऐंठा हुआ कुण्डलीकार भाग होता है। यह भाग अंग्रेज़ी भाषा के अक्षर 'U' के आकार की रचना बनाता है। इस रचना को हेनले का लूप (Loop of Henle) कहा जाता है। यहां वृक्काणु की एक भुजा पहले नीचे की ओर आती है तथा फिर उपर की ओर जाती है। वृक्कीय नलिका के इस भाग में गुच्छीय निस्यन्दन से छनकर आये द्रव से पुनः अवशोषण (Reabsorption) की क्रिया होती है, इस क्रिया के अन्तर्गत जल, ग्लूकोज, अमीनो अम्ल एवं शरीर के लिये उपयोगी खनिज लवणों का पुनः अवशोषण कर लिया जाता है। पुनः अवशोषण के उपरान्त ये उपयोगी पदार्थ पुनः रक्त में मिला दिये जाते हैं जबकि निस्यन्दन (Filtration) के परिणामस्वरुप उत्पन्न अंश को वृक्कीय श्रोणि में भेज दिया जाता है। यहां से यह मूत्र की संज्ञा ग्रहण कर लेता है। यह मूत्र वृक्कीय श्रोणि से मूत्रनलिका में एवं मूत्रनलिका से मूत्राशय में चला जाता है।

टिप्पणी

वृक्कों की क्रियाविधि (Physiology of Kidneys)

प्रिय शिक्षार्थियों, वृक्कों में वृक्कीय महाधमनी (Renal Artery) रक्त लेकर आती है तथा अनेकों शाखाओं में विभाजित हो जाती है। वृक्कीय महाधमनी की शाखाएं पहले केशिका गुच्छीय के छलनीनुमा भाग से होकर गुजरती है। यहां पर रक्त को छानकर उससे अशुद्धियां अलग कर दी जाती हैं, यह क्रिया गुच्छीय निस्यन्दन (Glomerular Filtration) कहलाती है। आगे पुनः वृक्क नलिका हेनले लूप (Henle's Loop) से होकर निकलती है तथा यहां पर एक बार पुनः पूर्व में छने पदार्थों को छाना जाता है, यह क्रिया पुनः अवशोषण (Reabsorption) कहलाती है अर्थात् वृक्कों में रक्त दो बार छनता है।

इस प्रकार दो बार छानने के उपरान्त रक्त में स्थित यूरिया, अमोनिया, क्रिएटीन, सल्फेट, फास्फेट तथा अतिरिक्त शर्करा आदि अनुपयोगी पदार्थ अलग कर दिये जाते हैं। ये पदार्थ जल के साथ घुले हुये अर्थात् द्रव अवस्था (Liquid Form) में होते हैं एवं वृक्क के वृक्कीय श्रोणि (Renal Pelvis) नामक भाग में इकट्ठा कर दिये जाते हैं। यहाँ से ये पदार्थ, मूत्र के रुप में मूत्र नली के द्वारा वृक्कों से बाहर निकलते हैं एवं मूत्राशय (Urinary Bladder) नामक अंग में एकत्र किए जाते हैं। इस प्रकार वृक्क प्रतिक्षण रक्त को छानने का कार्य करते रहते हैं। सामान्य परिस्थितियों में स्वस्थ मनुष्य के वृक्क प्रतिमिनट 125 ml की दर से रक्त छानने का कार्य करते हैं। मानव शरीर में रक्त छानने की दर पर मनुष्य का आहार–विहार, देश, काल एवं मनोस्थितियां अपना प्रभाव रखती है तथा इन कारकों से प्रभावित होकर रक्त छनने की दर घटती–बढ़ती रहती है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि, मानव शरीर में स्थित दोनों वृक्क प्रतिक्षण क्रियाशील रहते हुए रक्त को छानने (Filtration of Blood) की क्रिया में लगे रहते हैं। वृक्क चयापचय क्रिया में उत्पन्न हुए उत्सर्जी पदार्थो को छानकर मूत्र का निर्माण करते हैं। इसके साथ–साथ वृक्क रक्त में उपस्थित अन्य हानिकारक पदार्थों को भी मूत्र के साथ शरीर से उत्सर्जित करते हैं। शरीर में वृक्कों की कार्यकुशलता एवं कार्यक्षमता पर आहार–विहार का सीधा प्रभाव पड़ता है। आहार में उत्तेजक पदार्थ, मिर्च मसाले एवं मांसाहारी पदार्थों का अधिक प्रयोग करने से इन वृक्कों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। धूम्रपान, एल्कोहल तथा एंटीबायोटिक (रासायनिक दवाइयों) के अधिक सेवन के दुष्प्रभावों से शरीर को बचाने में वृक्क की क्रियात्मक इकाई अर्थात् वृक्काणुओं (Nephrons) को अपनी क्षमता से अधिक कार्य करना पड़ता है। क्षमता से अधिक कार्य में वृक्काणु नष्ट हो जाते हैं, जिससे वृक्कों की कार्यक्षमता कम हो जाती है। यदि इसके उपरान्त भी इन हानिकारक पदार्थों का प्रयोग बन्द नहीं किया जाता है, तब ऐसी अवस्था में आगे चलकर वृक्काणु अक्रियाशील होकर अपना कार्य बन्द कर देते हैं। वृक्काणुओं की अक्रियाशीलता की अवस्था किडनी फेल (Renal failure) कहलाती है। जिसमें वृक्कों में रक्त निस्यन्दन (Blood Filtration) की क्रिया बन्द हो जाती है।

वृक्कों के कार्य (Functions of Kidneys)

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर में वृक्क निम्नलिखित महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करने का कार्य करते हैं–

- **रक्त को छानकर मूत्र निर्माण करना** (Urine Formation) :– वृक्क का सबसे प्रमुख एवं महत्वपूर्ण कार्य रक्त को छानकर रक्त में उपस्थित अनुपयोगी–उत्सर्जी पदार्थों को अलग करना होता है। वृक्क वर्ज्य पदार्थों (Waste Products) को रक्त से छानकर जल में घोलकर मूत्र का निर्माण (Urine Formation) करता है। मनुष्य के दोनों वृक्क प्रतिदिन (in 24 Hours) 150 से 180 लीटर रक्त को छानकर रक्त में उपस्थित अनुपयोगी पदार्थों को मूत्र के रुप में अलग (Urine Formation) करने का कार्य करते हैं।

  एक मनुष्य प्रतिदिन 1 से 1.8 लीटर स्वच्छ (Clear), पारदर्शी (Transparent), हल्के पीले रंग (Pale Yellow to Golden Colour) के द्रव मूत्र का उत्सर्जन करता है। मूत्र का हल्का पीला रंग यूरेबिलिन (Urobilin or Urochrome) नामक रंजक पदार्थ के कारण होता है। मूत्र में अपनी एक विशेष एरोमेटिक गन्ध (Aromatic Odour) होती है। मूत्र का पी0 एच0 5.0 से 8.0 के बीच होता है। मूत्र का पी0 एच0 ग्रहण किये गए आहार के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। शाकाहारी एवं सात्विक आहार लेने वाले मनुष्यों का मूत्र उदासीन अथवा हल्का क्षारीय (Neutral or Basic Nature) प्रकृति का रहता है, जबकि मांसाहारी एवं मिर्च मसाले युक्त अम्लीय प्रकृति का आहार लेने वाले व्यक्तियों में मूत्र अम्लीय प्रकृति (Acidic Nature) का होता है।

  मूत्र में सबसे अधिक मात्रा जल (लगभग 96 प्रतिशत) की होती है। जल के साथ–साथ मूत्र में कार्बनिक एवं अकार्बनिक पदार्थ (Organic & Inorganic Salt) होते हैं। मूत्र के रुप में उत्सर्जित पदार्थों में सबसे प्रमुख घटक कार्बनिक पदार्थ यूरिया (Urea) होता है। एक स्वस्थ मनुष्य सामान्य अवस्था में प्रतिदिन शरीर से 300 से 400 mg यूरिया मूत्र के साथ उत्सर्जित करता है।

  शरीर से साफ–स्वच्छ, दुर्गन्धहीन एवं यथोचित मात्रा में मूत्र का स्रावण मनुष्य के उत्तम शारीरिक स्वास्थ्य को अभिव्यक्त करता है, जबकि इसके विपरीत मूत्र के साथ शरीर के लिए उपयोगी पोषक तत्वों जैसे रक्त शर्करा, लवणों, धातुओं एवं रक्त आदि का आना एवं इसके साथ–साथ मूत्र की मात्रा का अनियमित होना, शरीर में रोग की सूचना देता है। मूत्र में रक्त शर्करा (ग्लूकोज) की उपस्थिति मधुमेह (Diabetes) रोग की सूचना देती है। मूत्र में प्रोटीन का आना धातुक्षय अथवा एल्बूमिनेरिया (Albuminuria) रोग कहलाता है। मूत्र के साथ अधिक मात्रा में पित्त का आना पीलिया (Jaundice) रोग का सूचक होता है। पीलिया रोग अधिक संख्या में लाल रक्त कणों के टूटने से बने पदार्थ बिलीरुबिन की अधिकता के कारण होता है। मूत्र में रक्त का आना हिमेटूरिया (Hematuria) कहलाता है। मूत्र में रक्त कणों (RBCs & WBCs) की उपस्थिति शरीर में संक्रमण (Infection) रोग की

टिप्पणी

सूचना देती है। मूत्र में एसीटोन की उपस्थिति अधिक समय तक भोजन नहीं करने (Starvation) का सूचक है। जीवाणओुं अथवा रोगाणुओं द्वारा वृक्कों में संक्रमण होने पर वृक्कों में भयंकर वेदना एवं जलन होती है। वृक्कों की यह अवस्था वृक्क प्रदाह (Kidney Inflammation) कहलाती है, इस अवस्था में वृक्कों में शोथ अर्थात् सूजन उत्पन्न हो जाती है। जब वृक्क कैल्सियम के सल्फेट, क्लोराइड एवं फास्फेटों को रक्त से छानकर अलग तो कर देते हैं किन्तु उन्हें मूत्र के साथ उत्सर्जित नहीं कर पाते, तब ये अकार्बनिक पदार्थ वृक्क में ही इकठ्ठा होकर एक पथरी के समान रचना बना लेते हैं, इसे वृक्क की पथरी (Kidney Stone) कहा जाता है। वृक्क में बनी पथरी कैल्सियम ऑक्सालेट (Calcium Oxalate) कहलाती है। वृक्कों की क्रियाशीलता कम होने पर रक्त में उपस्थित यूरिया के उत्सर्जित नहीं होने पर रक्त में यूरिक एसिड की मात्रा बढ़ना एवं यूरिक एसिड का शरीर के जोड़ों में एकत्र होकर जोडों का दर्द एवं सूजन उत्पन्न करना गठिया (Gout) रोग कहलाता है। अत्यधिक तनाव की अवस्था में वृक्कों का पूर्णतया निष्क्रिय हो जाना किडनी फेल (Renal Failure) कहलाता है। यह शरीर की अत्यन्त विकट और गंभीर परिस्थिति (Critical Condition) होती है।

- **जल सन्तुलन करना (Water Level Balancing)**

  वृक्कों का दूसरा प्रमुख कार्य शरीर में जल की मात्रा को सन्तुलित करना होता है। इसीलिए अधिक जल का सेवन करने पर मूत्र की मात्रा अधिक तथा कम मात्रा में जल का सेवन करने पर अथवा पसीने के रुप में शरीर से जल निकलने पर मूत्र की मात्रा कम हो जाती है, अर्थ यह है कि वृक्क शरीर में जल की मात्रा को सन्तुलित करने का कार्य करते हैं।

- **अम्ल–क्षार सन्तुलन बनाए रखना (Acid-Base Regulation)**

  वृक्क शरीर में अम्ल–क्षार सन्तुलन बनाए रखने का कार्य करते हैं। भोजन के रुप में अधिक मात्रा में अम्लीय अथवा क्षारीय पदार्थों का सेवन करने पर अनावश्यक अम्लीय अथवा क्षारीय पदार्थों को वृक्क मूत्र के साथ उत्सर्जित करते हुए शरीर में अम्ल–क्षार का सन्तुलन बनाए रखने का कार्य करते हैं।

- **रक्त शर्करा का नियन्त्रण (Glucose Level Balancing)**

  रक्त में शर्करा (ग्लूकोज) के स्तर को नियन्त्रित करना रक्त का महत्वपूर्ण कार्य है। मानव शरीर के रक्त में शर्करा (ग्लूकोज) की सामान्य मात्रा 80–120 mg per 100 ml Blood होती है। वृक्क रक्त निस्यन्दन (filtration) के द्वारा रक्त में शर्करा की मात्रा सम बनाए रखने का कार्य करते हैं। इस क्रम में वृक्क अतिरिक्त शर्करा को मूत्र के साथ उत्सर्जित कर देते हैं।

टिप्पणी

- **यूरिया का नियन्त्रण (Urea Level Balancing)**

  एक स्वस्थ मनुष्य के रक्त में यूरिया की सामान्य मात्र 20–40 mg per 100 ml Blood होती है। रक्त में यूरिया की यह मात्रा वृक्कों द्वारा नियन्त्रित की जाती है। इसी कारण वृक्कों की क्रियाशीलता कम होने पर रक्त में यूरिया (यूरिक एसिड) की मात्रा बढ़ जाती है, इसके परिणामस्वरूप जोड़ों में दर्द एवं सूजन आदि लक्षण प्रकट होते हैं। स्वस्थ महिला के रक्त में 2.4 - 6.0 mg/dL तथा पुरुष के रक्त में 3.4 - 7.0 mg/dL यूरिक एसिड की मात्रा रहती है।

- **सोडियम एवं कैल्शियम का नियन्त्रण (Na & Ca Level Balancing)**

  वृक्क रक्त में सोडियम एवं कैल्शियम आदि शरीर के लिए उपयोगी खनिज लवणों के स्तर को नियन्त्रित करने का कार्य करते हैं। वृक्क इन लवणों की अतिरिक्त मात्रा को मूत्र के साथ उत्सर्जित करते हुए रक्त में इनकी मात्रा सम एवं शरीर के अनुकूल बनाए रखते हैं।

- **रक्त दाब नियन्त्रण (Blood Pressure Regulation)**

  स्वस्थ मनुष्य का रक्त रक्तवाहिनियों में 80–120 mm of Hg के दबाव से बहता रहता है जिसे रक्तचाप (Blood Pressure) कहते हैं। रक्तवाहिनियों में रक्तचाप को नियन्त्रित करने में वृक्क महत्वपूर्ण भूमिका वहन करते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि वृक्क रक्त को छानकर मानव शरीर से अनुपयोगी पदार्थों को उत्सर्जित करने के साथ–साथ शरीर में उपयोगी विभिन्न रासायनिक तत्वों के सन्तुलन को बनाए रखने का कार्य करते हैं। वृक्क रक्त शरीर के लिए उपयोगी एवं अनुपयोगी विभिन्न रासायनिक तत्वों के सन्तुलन को बनाए रखते हुए शरीर में समस्थिति (Homeostasis) बनाए रखते हैं।

वृक्कों को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Effecting Kidneys)

मानव शरीर में वृक्क प्रतिक्षण क्रियाशील रहते हुए मूत्र निर्माण की क्रिया में लगे रहते हैं। इन वृक्कों की क्रियाशीलता पर निम्नलिखित कारक सीधा प्रभाव रखते हैं–

➢ **जल की मात्रा (Intake of Water)** – शरीर में ग्रहण की गई जल की मात्रा वृक्कों में मूत्र निर्माण की क्रिया को प्रभावित करती है। अधिक मात्रा में जल सेवन करने पर मूत्र निर्माण की क्रिया बढ़ जाती है, जबकि कम मात्रा में जल का सेवन करने पर मूत्र की मात्रा कम हो जाती है। इसी कारण शरीर में अशुद्धियों की मात्रा बढ़ने पर अधिक मात्रा में जल सेवन का निर्देश दिया जाता है जिससे वृक्क अधिक क्रियाशील होकर मूत्र के रुप में अशुद्धियों को बाहर निकाल देते हैं। रात्रिकाल तांबे के बर्तन में रखे जल को प्रातःकाल खालीपेट पीने की क्रिया उषापान कहलाती है। प्रतिदिन नियमित रुप से

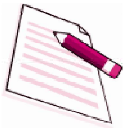

टिप्पणी

उषापान करने से वृक्कों का प्रातःकाल सही प्रकार शोधन हो जाता है और वृक्क में पथरी आदि बनने की संभावना कम हो जाती है।

- **वातावरणीय दशाएं (Environmental Condition)**— गर्मी के दिनों में शरीर से अधिक मात्रा में पसीना निकलने पर रक्त की अशुद्धियां पसीने के रुप में बाहर निकल जाती हैं जिससे वृक्कों पर कार्य का दबाव कम हो जाता है जबकि इसके विपरीत ठण्डे–सर्दी के मौसम में शरीर में पसीने की मात्रा कम उत्पन्न होने पर रक्त को शुद्ध करने हेतु वृक्कों को अधिक कार्य करना पड़ता है और प्रायः यह अनुभव भी करते हैं कि सर्दी के मौसम में मूत्र उत्सर्जन की मात्रा बढ़ जाती है।

- **उत्तेजक पदार्थों का सेवन (Intake of Stimulant)**— उत्तेजक पदार्थ जैसे चाय, काफी, एल्कोहल व दवाइयों के सेवन करने से वृक्काणु उत्तेजित हो जाते हैं जिससे मूत्र निर्माण की क्रिया तीव्र हो जाती है तथा अधिक मात्रा में मूत्र का उत्पादन होता है। कुछ विशेष एंटीबायोटिक और स्टीरॉयड दवाइयों का वृक्कों की क्रियाशीलता पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

- **शामक पदार्थों का सेवन (Intake of Narcotic)**— निकोटिन युक्त पदार्थों जैसे तम्बाकू, गुटका, और धूम्रपान आदि का सेवन करने से वृक्काणुओं की क्रियाशीलता कम हो जाती है, जिससे मूत्र की मात्रा कम हो जाती है।

- **अन्तःस्रावी हॉर्मोन्स (Endocrine Hormones)**— वृक्कों पर पिट्यूटरी ग्रन्थि एवं अधिवृक्क ग्रथियों से उत्पन हॉर्मोनस सीधा प्रभाव रखते हैं। पिट्यूटरी ग्रन्थि के पश्चभाग से स्रावित वैसोप्रेसिन हॉर्मोन्स और अधिवृक्क ग्रन्थि से उत्पन्न कॉरटिकोस्टीरॉयड तथा एल्डोस्टीरोन नामक हॉर्मोन वृक्कों की क्रियाशीलता पर सीधे–सीधे प्रभाव डालते हैं।

- **मानसिक स्थिति** (Mental Condition) — मन की सकारात्मक एवं नकारात्मक स्थितियों का प्रभाव वृक्कों की क्रियाशीलता को प्रभावित करता है। सकारात्मक परिस्थितियों एवं अनुकूल दशाओं में वृक्क की क्रियाशीलता कम हो जाती है जबकि इसके विपरीत नकारात्मक परिस्थितियों जैसे क्रोध, भय, तनाव एवं हिंसक वृत्तियाँ उत्पन्न होने पर वृक्कों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है अर्थात् नकारात्मक अवस्थाओं में मूत्र निर्माण की क्रिया तीव्र हो जाती है।

यूनिटगत प्रश्न 7.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. मानव शरीर में वृक्क की संरचना .... के बीज के समान होती है।

2. वृक्कों का मध्य भाग .... कहलाता है।
3. प्रत्येक वृक्क के ऊपरी भाग ध्रुव पर ....नामक ग्रन्थि उपस्थित होती है।
4. रक्त में .... नामक पदार्थ की अधिकता के कारण पीलिया रोग होता है।
5. मूत्र के साथ अधिक मात्रा में रक्त शर्करा का आना .... नामक रोग कहलाता है।

ख) बहुविकल्पीय प्रश्न–

1) मानव उत्सर्जन तंत्र का कार्य है–
   - a) शरीर से अनुपयोगी पदार्थों को बाहर निकालना
   - b) रक्त को छानकर शुद्ध करना
   - c) शरीर में समस्थिति बनाए रखना
   - d) उपर्युक्त सभी

2) मानव उत्सर्जन तंत्र की सबसे छोटी रचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई है–
   - a) न्यूरान b) नेफ्रान
   - c) एल्विओलाई d) विलाई

3) उत्सर्जन तंत्र के निम्नलिखित अंगों को उचित क्रम में व्यवस्थित करें–
   - I) वृक्क II) मूत्राशय
   - III) मूत्रमार्ग IV) मूत्रवाहिनी

   सही उत्तर के लिए निम्न कूट का उपयोग करें–
   - a) I, III, II, IV b) II, I, III, IV
   - c) I, IV, II, III d) III, I, IV, II

4) मालपिजी का पिण्ड का सम्बन्ध किस अंग से है–
   - a) वृक्क b) यकृत
   - c) मस्तिष्क d) पेन्क्रियाज

5) चाय/कॉफी पीने के बाद अधिक मात्रा में मूत्र का उत्सर्जन किसके कारण होता है–
   - a) शर्करा b) केफीन
   - c) जल d) निकोटिन

टिप्पणी

7.3.3 मूत्रनलियां (Ureters)

प्रिय शिक्षार्थियों, वृक्कों के साथ जुड़ी हुई दो नलियां होती हैं, जिन्हें मूत्रनलियां कहा जाता है। इनका कार्य मूत्र को वृक्क से मूत्राशय तक ले जाना होता है। प्रत्येक मूत्रनली लगभग 25 से 35 सेन्टीमीटर लम्बी होती है, जो वृक्क से प्रारम्भ होकर मूत्राशय तक जाती है। इन नलियों में वाल्व लगे होते हैं, जिनके कारण मूत्र मूत्राशय की ओर आगे की ओर बढ़ता रहता है।

7.3.4 मूत्राशय (Urinary Bladder)

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य की श्रोणि गुहा में एक खोखला अंग होता है, जो अनैच्छिक पेशियों से निर्मित होता है। यह अंग मूत्राशय कहलाता है। मूत्राशय का कार्य वृक्कों में उत्पन्न मूत्र को संचित करना होता है इसीलिए मूत्र की मात्रा के अनुसार इस अंग की आकृति एवं आकार बदलता रहता है। सामान्यतया मनुष्य में मूत्राशय की क्षमता 300 से 400 मिली0 मूत्र संचित करने की होती है। मूत्राशय में मूत्र भरने पर इसकी सूचना मस्तिष्क को दी जाती है, जिसके उपरान्त मूत्र उत्सर्जन के द्वारा इसे खाली कर दिया जाता है।

7.3.5 मूत्रमार्ग (Urethra)

मनुष्य में मूत्राशय से मूत्र लेकर एक नलिका बाहर निकलती है, जिसे मूत्रमार्ग कहा जाता है। यह रचना स्त्रियों में लगभग 4 सेमी0 लम्बी तथा पुरूषों में लगभग 20 सेमी0 लम्बी होती है। अर्थात् स्त्रियों में मूत्रमार्ग छोटा एवं पुरूषों में लम्बा होता है। इस रचना के प्रारंभिक भाग पर आन्तरिक संकोचिनी पेशी उपस्थित होती है जो तंत्रिका तंत्र के नियंत्रण में रहती है। इस पेशी के नियंत्रण से मूत्र उत्सर्जित किया जाता है।

7.4 उत्सर्जन तंत्र पर योग का प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, यौगिक क्रियाओं का अभ्यास मनुष्य के शरीर एवं मन का शोधन करता है। यौगिक क्रियाओं के अभ्यास से शारीरिक–मानसिक विकार बाहर निकलने के साथ सकारात्मकता का विस्तार होता है। यौगिक क्रियाएं शरीर में स्थित विकृत वात–पित्त, कफ दोषों, अनुपयोगी पदार्थों, गन्दगियों, विषाक्त पदार्थों एवं अविशिष्ट पदार्थों को बाहर निकालने का कार्य करती है, जबकि उत्सर्जन तंत्र का भी मूल कार्य शरीर में स्थित अनुपयोगी हानिकारक पदार्थों को बाहर निकालने का होता है अर्थात् इन दोनों का मूल उद्देश्य समान होता है, इसीलिए यौगिक क्रियाओं का मानव उत्सर्जन तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यौगिक क्रियाओं का विधिपूर्वक नियमित अभ्यास करने से उत्सर्जन तंत्र पर वर्ज्य पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने का भार कम होता है। जिससे उत्सर्जन तंत्र अधिक सहजता और कार्यकुशलता से अपना शरीर शोधन का कार्य करता है। योग में आकर सर्वप्रथम मनुष्य अपने आहार–विहार को सकारात्मक दिशा प्रदान करता है। योग के अन्तर्गत मनुष्य अपनी

समस्त क्रियाओं को अनुशासन के साथ जोड़ता है क्योंकि योगसूत्रों के रचनाकार महर्षि पतंजलि योग का प्रारंभ ही अनुशासन के साथ करते हैं –

अथयोगानुशासनम् ।।

अर्थात् अब यहाँ से योग का अनुशासन प्रारम्भ होता है।

योग में वर्णित अनुशासन (जो अन्दर से उत्पन्न हुआ है) का मनुष्य के शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, नैतिक एवं चारित्रिक आदि सभी पक्षों पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्रातःकाल सूर्योदय पूर्व निश्चित समय पर जागरण, उषापान, प्रातःकालीन भ्रमण, यौगिक षट्कर्म, आसन–प्राणायाम व ध्यान आदि क्रियाओं का अभ्यास, अपने समस्त कार्यों व जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण, ईश्वर के प्रति समर्पण और आस्था के भाव रखने से मनुष्य के सभी तंत्र स्वस्थ, सक्रिय और विकारों से मुक्त रहते हुए अपने कार्यों को भली–भांति करने में सक्षम बने रहते हैं। इन बिंदुओं का सकारात्मक प्रभाव उत्सर्जन तंत्र पर भी पड़ता है, जिसका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है–

1) उत्सर्जन तंत्र पर षट्कर्म का प्रभाव

यौगिक षट्कर्मों को शोधन कर्म की संज्ञा दी जाती है क्योंकि धौति, बस्ति, नेति, नौली, त्राटक कपाल भाति नामक छह क्रियाऐं शरीर की शुद्धि करती हैं, जिनका सकारात्मक प्रभाव उत्सर्जन तंत्र पर पड़ता है। षट्कर्म की धौति क्रिया में अधिक मात्रा में जल का सेवन किया जाता है। अधिक जल ग्रहण करने से वृक्कों का शोधन होता है और वृक्कों की क्रियाशीलता बढ़ती है। यौगिक बस्ति क्रिया का सम्बन्ध बड़ी आँत के शोधन से है चूँकि बड़ी आँत शरीर के ठोस मल पदार्थों को उत्सर्जित करती है। अतः बस्ति क्रिया का अभ्यास उत्सर्जन तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव रखता है। नेति कर्म का अच्छा प्रभाव उत्सर्जन तंत्र पर पड़ता है। नेति क्रिया के अभ्यास से नासिका मार्ग के द्वारा शरीर से विकृत कफ आदि दोष एवं अन्य अशुद्धियां बाहर निकलती हैं। नौली क्रिया के अन्तर्गत उदर में स्थित आन्तरिक अंगों की मालिश होती है अतः इससे वृक्क की कोशिकाएं (वृक्काणु) भी प्रभावित होती हैं एवं वृक्क अधिक क्रियाशील होकर अपना कार्य करते हैं। त्राटक कर्म का प्रत्यक्ष प्रभाव उत्सर्जन पर नहीं पड़ता है जबकि कपालभाति क्रिया वायु एवं जल के द्वारा शरीर का शुद्धिकरण करती है, जिससे शरीर में स्थित विषाक्त उत्सर्जित पदार्थ बाहर निकलते हैं। कपालभाति का नियमित अभ्यास करने से उत्सर्जन तंत्र स्वस्थ–निरोगी एवं विकारमुक्त बना रहता है।

2) उत्सर्जन तंत्र पर आसन का प्रभाव

नियमित योगासनों का अभ्यास मानव उत्सर्जन तंत्र पर बहुत अच्छा प्रभाव रखता है। प्रातःकाल खाली पेट योगासन करने से शरीर का उत्सर्जन तंत्र अधिक सक्रिय होता है। पीछे की ओर झुकने वाले आसन करने से वृक्कों पर दबाव पडता है जिससे वृक्कों की

क्रियाशीलता बढ़ती है और विकार दूर होते हैं। उष्ट्रासन, शलभासन, मत्स्यासन, धुनरासन, भुजंगासन, उत्तानमण्डुकासन (सुप्त वज्रासन), चक्रासन, त्रिकोणासन आदि इसी क्रम के आसन हैं, जिनका अभ्यास करने से वृक्क के साथ–साथ सम्पूर्ण उत्सर्जन तंत्र सकारात्मक रुप से प्रभावित होता है।

योग में सूर्य नमस्कार अत्यन्त प्रचलित एवं प्रमुख यौगिक क्रिया है जिसकी 12 मुद्राएं होती हैं और मंत्र के साथ 12 आसन सम्मिलित रूप से किए जाते हैं। यह अभ्यास उत्सर्जन तंत्र पर अच्छा प्रभाव डालता है। विद्वानों की मान्यतानुसार सूर्य नमस्कार का अभ्यास करने से पहले एक गिलास गुनगुना अथवा गर्म पानी पीने से उत्सर्जन तंत्र की क्रियाशीलता बढ़ती है एवं शरीर से विषाक्त पदार्थ अधिक मात्रा में बाहर निकलते हैं। नियमित योगासन करने पर शरीर से पर्याप्त मात्रा में पसीना निकलता है, जिससे बहुमूत्रता, अल्पमूत्रता, वृक्कशोथ (किडनी में सूजन), वृक्क प्रदाह (किडनी में जलन), किडनी स्टोन (पथरी) आदि रोगों पर बहुत सरलता से नियन्त्रण प्राप्त होता है।

3) उत्सर्जन तंत्र पर मुद्रा एवं बन्धों का प्रभाव

उत्सर्जन तंत्र पर मुद्रा एवं बंध सकारात्मक प्रभाव रखती हैं। मुद्राओं में महामुद्रा, विपरीतकरणी मुद्रा, माण्डूकी मुद्रा, पाशिनी मुद्रा एवं अश्वनी मुद्रा मुख्य रूप से उत्सर्जन तंत्र को प्रभावित करती है। इन मुद्राओं के नियमित अभ्यास से वृक्कों की क्रियाशीलता बनी रहती है तथा उत्सर्जन तंत्र स्वस्थ रहता है।

मूलबन्ध तथा उड्डियान बंध का प्रभाव भी उत्सर्जन तंत्र पर पड़ता है। मूलबंध का अभ्यास करने से वृक्कों पर खिंचाव एवं दबाव पड़ता है, जिससे ये स्वस्थ तथा मजबूत होते हैं। इस अंग से सम्बन्धित रोग नहीं होते हैं। जबकि उड्डियान बंध का सीधा प्रभाव वृक्कों पर पड़ता है। उड्डियान बंध का अभ्यास वृक्कों पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दबाव उत्पन्न करता हुआ वृक्कों की क्रियाशीलता को बढ़ाता है। उड्डियान बंध का अभ्यास इन वृक्कों में स्थित गन्दगियों को भी तेजी के साथ बाहर निकालने में सहायता प्रदान करता है। इन बंधों के अभ्यास से वृक्क अल्पमूत्रता, बहुमूत्रता, संक्रमण, पथरी आदि रोगों से मुक्त रहते हुए अपने कार्यों को भली भाँति करते रहते हैं। जालंधर बंध का प्रत्यक्ष प्रभाव इस तंत्र पर नहीं पड़ता है।

4) उत्सर्जन तंत्र पर प्राणायाम का प्रभाव :

प्राणायाम के संदर्भ में महर्षि मनु, मनुस्मृति में लिखते हैं –

दहयन्ते ध्मायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।

तथेन्द्रियाणां दह्यान्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात।।

अर्थात् जैसे अग्नि आदि में तपाने से स्वर्ण आदि धातुओं के मल, विकार नष्ट हो जाते हैं। वैसे ही प्राणायाम से इन्द्रियों एवं मन के दोष दूर होते हैं। प्राणायाम का अभ्यास शरीर एवं मन को स्थिर करता है। प्राणायाम के अभ्यास से प्रॉस्टेट ग्लैण्ड एवं किडनी आरोग्यता को प्राप्त होते हैं। नियमित प्राणायाम का अभ्यास वृक्कों को ऊर्जावान बनाए रखता है एवं बहुमूत्र, अल्पमूत्र, किडनी फेल, किडनी में सूजन एवं किडनी में जलन आदि रोग दूर होते हैं।

प्राणायाम के अभ्यास क्रम में अनुलोम—विलोम, नाड़ी शोधन, भ्रामरी एवं शीतली आदि का अच्छा प्रभाव पड़ता है।

5) उत्सर्जन तंत्र पर प्रत्याहार का प्रभाव

प्रत्याहार का अर्थ इन्द्रियों एवं मन पर संयम करने से होता है। प्रत्याहार को स्पष्ट करते हुए महर्षि पतंजलि स्पष्ट करते हैं —

स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्वरुपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः।।

(पातंजल योगसूत्र 2/54)

अर्थात् अपने विषयों के सम्बन्ध से रहित होने पर इन्द्रियों का चित्त के स्वरुप में तदाकार हो जाना प्रत्याहार कहलाता है। इन्द्रियों के वश में होने से आहार—विहार में अनुशासन उत्पन्न होता है और चित्त में सात्विक वृत्ति का विकास होता है। जिसके फलस्वरुप सुव्यवस्थित दिनचर्या, रात्रिचर्या एवं मिताहार का पालन करने से शरीर में अनुपयोगी—हानिकारक पदार्थ कम मात्रा में उत्पन्न होते हैं। इसका वृक्कों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है क्योंकि अधिकांश रोगों का मूल कारण इन्द्रियों पर असंयम होता है।

6) उत्सर्जन तंत्र पर ध्यान का प्रभाव

जीवन में अधिक समय मानसिक तनाव, चिन्ता, घबराहट, ब्रेचैनी, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष और उत्तेजना में व्यतीत करने पर शरीर में अधिक मात्रा में अनुपयोगी विषाक्त पदार्थ उत्पन्न होते हैं और रक्त में यूरिक एसिड का बढ़ना, रक्त शर्करा का स्तर असन्तुलित होना, अम्ल—क्षार का सन्तुलन बिगड़ना आदि जटिलताएं उत्पन्न हो जाती हैं। इसका वृक्कों पर बहुत नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ऐसी अवस्था में ध्यान और प्रार्थना संजीवनी बूटी का काम करते हैं। ध्यान के अभ्यास से यह जटिलताएं दूर होती हैं और शरीर में हॉर्मोन्स का सन्तुलन सही बनता है।

7) उत्सर्जन तंत्र पर समाधि का प्रभाव

समाधि से तात्पर्य सकारात्मक भाव में स्थित होने से है। सकारात्मक भावों का प्रभाव शरीर के सभी तंत्रों पर पड़ता है। समाधि के अभ्यास में शरीर के सभी तंत्र सभी रोगों से

टिप्पणी

रहित होकर पूर्ण क्रियाशीलता के साथ अपना कार्य करते हैं। समाधि में साधक चारों ओर सकारात्मक वातावरण की अनुभूति करता है, जिससे शरीर में बहुत अल्प मात्रा में उत्सर्जित पदार्थों की उत्पत्ति होती है तथा उत्पन्न हुए उत्सर्जी पदार्थ भली—भाँति शरीर से बाहर निकलते हैं।

यूनिटगत प्रश्न 7.2

क) सत्य अथवा असत्य कथन का चयन कीजिए —

1) मनुष्य के प्रत्येक वृक्क में 10 से 13 लाख वृक्काणु होते हैं। ( )

2) एक स्वस्थ मनुष्य के रक्त में यूरिया की सामान्य मात्रा 20—40 mg per 100 ml Blood होती है। ( )

3) मनुष्य के दोनों वृक्क प्रतिदिन 180 लीटर रक्त छानने का कार्य करते हैं। ( )

4) मूत्र का 60 प्रतिशत भाग जल होता है। ( )

5) निकोटिन युक्त पदार्थों का सेवन करने से मूत्र उत्पत्ति की मात्रा बढ़ जाती है। ( )

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए —

1) वयस्क मनुष्य के वृक्क का भार कितना होता है?

2) वृक्कों को स्वस्थ बनाने वाले दो योगासनों के नाम लिखिए।

3) वृक्कों की क्रियाशीलता को प्रभावित करने वाले दो हार्मोन्स के नाम लिखिए।

4) मनुष्य के मूत्र का पीला रंग किस रंजक पदार्थ के कारण होता है?

5) मनुष्य प्रतिदिन कितना यूरिया मूत्र के साथ उत्सर्जित करता है?

आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने सीखा कि,

- उत्सर्जन तंत्र मानव शरीर में स्थित अनुपयोगी एवं हानिकारक पदार्थों को बाहर निकालने का कार्य करता है। इसके अन्तर्गत वृक्क की संरचना एवं कार्यों का वर्णन आता है।
- यह संख्या में दो और उदरीय गुहा में स्थित होते हैं, जो प्रतिक्षण रक्त को छानने के कार्य में लगे रहते हैं।
- योगांग जैसे— षट्कर्म, आसन, प्राणायाम आदि मानव उत्सर्जन तंत्र को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं।

- योगांगों के पालन के साथ–साथ शुद्ध–सात्विक आहार, मौसमी फल एवं सब्जियां, नींबू, सन्तरा, मौसमी, अनानास, लीची, अंगूर, पपीता, तरबूज, खरबूजा, लौकी, तुराई आदि रेशेदार एवं जलीय तत्व से परिपूर्ण आहार का सेवन करने तथा नमक–मिर्च और मसाले युक्त उत्तेजक राजसिक–तामसिक आहार के साथ–साथ धूम्रपान, मद्यपान व कोल्ड ड्रिंक्स आदि दुर्व्यसनों से बचकर रहने से मनुष्य का उत्सर्जन तंत्र जीवन पर्यन्त स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त बना रहता है।

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव शरीर में वृक्क की संरचना एवं क्रियाविधि को सविस्तार समझाइये।
2. मानव उत्सर्जन तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव की व्याख्या कीजिये।
3. मानव वृक्कों के महत्वपूर्ण कार्यों पर प्रकाश डालते हुए वृक्कों को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिये।

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

7.1

	क	ख
1.	सेम	1– d
2.	हायलम	2– b
3.	अधिवृक्क	3– c
4.	बिलीरुबिन	4– a
5.	मधुमेह	5– b

7.2

	क	ख
1.	सत्य	1– 140– 150 ग्राम
2.	सत्य	2– उष्ट्रासन, गोमुखासन
3.	सत्य	3– वैसोप्रेसिन, कॉरटिकोस्टीरॉयड
4.	असत्य	4– यूरोक्रोम
5.	असत्य	5– 300 से 400 मि0ग्राम

टिप्पणी

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजु तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0) ।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ।

टिप्पणी

8

रक्त परिसंचरण तंत्र की संरचना–क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछली यूनिटों में आपने जाना कि, मानव शरीर की प्रत्येक कोशिका को जीवित एवं क्रियाशील बने रहने के लिए ग्लूकोज और ऑक्सीजन की सतत् अर्थात् निरन्तर आवश्यकता होती है। यद्यपि शरीर को ग्लूकोज भोजन से एवं ऑक्सीजन श्वसन से प्राप्त हो जाती है, किन्तु यहाँ पर विचारणीय प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि, **ग्लूकोज और ऑक्सीजन शरीर की प्रत्येक कोशिका तक कैसे पहुँचता है।** इसके लिए मानव शरीर में परिसंचरण तंत्र क्रियाशील होता है, जो रक्त के द्वारा सम्पूर्ण शरीर की कोशिकाओं तक ग्लूकोज एवं ऑक्सीजन पहुंचाने का कार्य करता है। इस तथ्य को ज्ञात करने का श्रेय अंग्रेज चिकित्सक विलियम हार्वे (William Harvey) को जाता है। इनके इस कार्य के कारण इन्हें आधुनिक शरीर क्रिया–विज्ञान का पिता (Father of Modern Physiology) भी कहा जाता है।

मानव शरीर की सात धातुओं में रक्त अत्यन्त महत्वपूर्ण धातु है। धातु अर्थात् जो तत्व शरीर को धारण करते हैं या जिनके मिलने से शरीर की उत्पत्ति होती है, उन्हें धातु की संज्ञा दी जाती है। आयुर्वेद शास्त्र में शरीर का निर्माण करने वाली सात धातुओं– रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा एवं शुक्र का वर्णन किया गया है। इन सात धातुओं में रक्त धातु का अपना एक विशिष्ट स्थान है। मानव शरीर में रक्त धातु की महत्ता को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि यदि कुल रक्त का एक–चौथाई भाग एक साथ शरीर से निकल जाये तो तुरन्त व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है। इसी कारण प्रायः दुर्घटनाओं में अधिक मात्रा में शरीर से रक्त बह जाने के कारण मृत्यु हो जाती है। अर्थ यह है कि जब–तक शरीर में रक्त है, तभी तक

जीवन है और रक्त के अभाव में जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। मानव शरीर में रक्त से मिलकर रक्त परिसंचरण तंत्र का निर्माण होता है।

रक्त परिसंचरण तंत्र के स्वरूप को समझने के उपरान्त, आपके मन में इस तंत्र को विस्तार पूर्वक समझने की जिज्ञासा उत्पन्न होगी। इसके साथ–साथ मानव रक्त परिसंचरण तंत्र को कौन–कौन से योगाभ्यास प्रभावित करते हैं, यह जानने की उत्सुकता भी आपके मन में अवश्य आयेगी। इस यूनिट में हम रक्त परिसंचरण तंत्र का परिचय, संरचना, क्रियाविधि एवं रक्त परिसंचरण तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव का सविस्तार अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

- रक्त परिसंचरण तंत्र का सामान्य परिचय बता सकेंगे;
- रक्त परिसंचरण तंत्र की व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे;
- रक्त परिसंचरण तंत्र की संरचना एवं क्रियाविधि का उल्लेख कर सकेंगे;
- रक्त परिसंचरण तंत्र के महत्व को समझा सकेंगे;
- रक्त परिसंचरण तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या कर पायेगें।

8.1 मानव रक्त परिसंचरण तंत्र का सामान्य परिचय एवं परिभाषा

शिक्षार्थियों, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से रक्त मानव शरीर का एक तरल संयोजी ऊतक (Liquid Connective Tissue) है। एक स्वस्थ मनुष्य के शरीर में 5 से 6 लीटर (औसतन 5.5 लीटर) अथवा शरीर के भार का 7 प्रतिशत भाग (Generally equivalent to 7 percent of body weight) रक्त होता है। रक्त का स्वभाव हल्का क्षारीय (pH 7.4 means slightly Basic) होता है। रक्त की सबसे प्रमुख विशेषता होती है कि रक्त किसी भी क्षण शरीर के किसी भी भाग में रूकता नहीं है, अपितु यह प्रतिक्षण संपूर्ण शरीर में परिभ्रमण (Circulate) करता रहता है। मानव शरीर में रक्त सदैव हृदय एवं रक्तवाहिनियों में होता हुआ ही परिभ्रमण करता रहता है। परिभ्रमण करता हुआ रक्त शरीर में स्थित सभी उपयोगी एवं अनुपयोगी पदार्थों का परिवहन (Transport of Nutrients & Excretory Matter) करता है तथा इन पदार्थों को शरीर की सभी कोशिकाओं तक पहुंचाने का कार्य करता है।

The Blood Circulatory System (Cardiovascular System) delivers nutrients and oxygen to all cells in the body. It consists of the Heart and the Blood vessels running through the entire body. The Arteries carry blood away from the Heart; the Veins carry it back to the Heart. The system of blood vessels resembles a Tree: The "Trunk," the main Artery (Aorta), branches into large Arteries, which lead to smaller and smaller Vessels. The smallest Arteries end in a network of tiny vessels, the capillary network.

टिप्पणी

रक्त परिसंचरण तंत्र को इस प्रकार परिभाषित किया जाता है–

"शरीर का वह तंत्र, जो रक्त के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर में उपयोगी एवं अनुपयोगी पदार्थों के परिवहन का महत्वपूर्ण कार्य करता है, रक्त परिसंचरण तंत्र कहलाता है।" रक्त परिसंचरण तंत्र के अंतर्गत रक्त, रक्तवाहिनियों एवं ह्रदय की संरचना व कार्यों का अध्ययन किया जाता है।

The Circulatory System, also called the Cardiovascular System, is an Organ System that permits Blood to Circulate and Transport Nutrients (such as Amino acids and Electrolytes), Oxygen, Carbon dioxide, Hormones and Blood cells to and from the Cells in the body to provide nourishment and help in fighting siseases, stabilize temperature and pH and maintain Homeostasis.

रक्त रोगी से लड़ने, शरीर का तापमान व पी.एच. को नियंत्रित करने और शरीर अवस्था को सम बनाए रखने में मदद करता है।

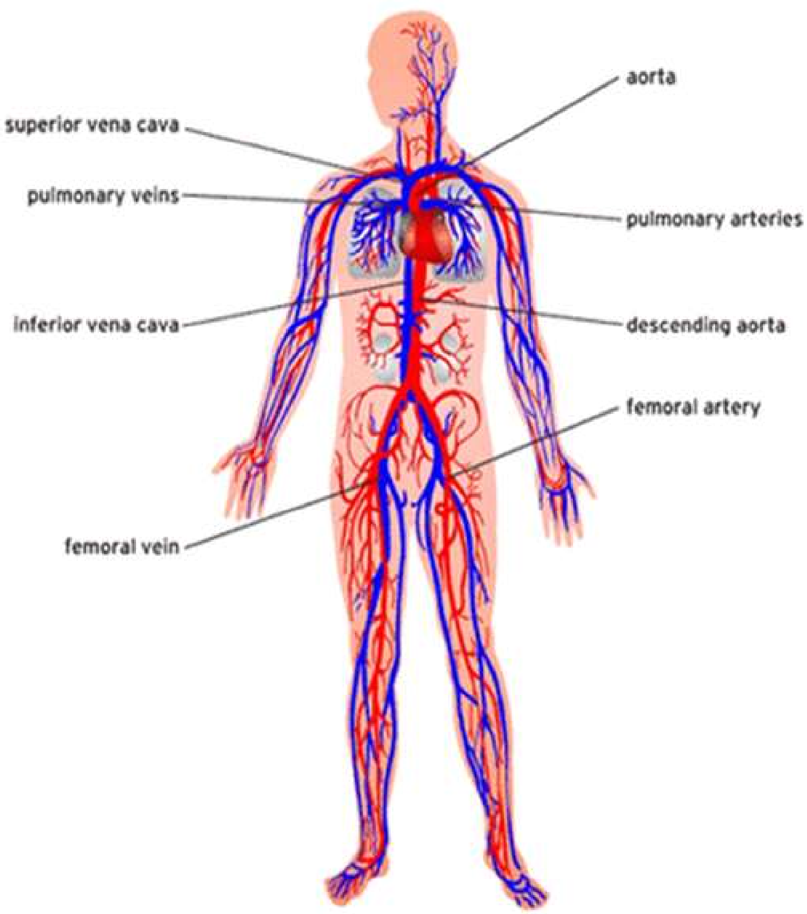

चित्र 8.1: मानव रक्त परिसंचरण तंत्र

टिप्पणी

8.2 मानव रक्त की संरचना

प्रिय शिक्षार्थियों, क्या आपने शरीर से रक्त निकलते देखा है, यह कैसा होता है? सामान्य रूप से देखने पर रक्त एक द्रव पदार्थ प्रतीत होता है किन्तु वास्तव में रक्त द्रव के साथ–साथ ठोस पदार्थों का भी संगठन होता है। माइक्रोस्कॉप द्वारा सूक्ष्म अध्ययन करने पर रक्त में द्रव के साथ–साथ ठोस पदार्थों का भी ज्ञान होता है। रक्त के द्रव भाग को रक्त प्लाज्मा (Blood Plasma) कहा जाता है। यह रक्त का लगभग 55 प्रतिशत भाग होता है। जबकि रक्त का दूसरा ठोस भाग रुधिराणु अर्थात् रक्त कोशिकायें (Blood Cells) होती हैं। रक्त का लगभग 45 प्रतिशत भाग रक्त कोशिकायें होती हैं।

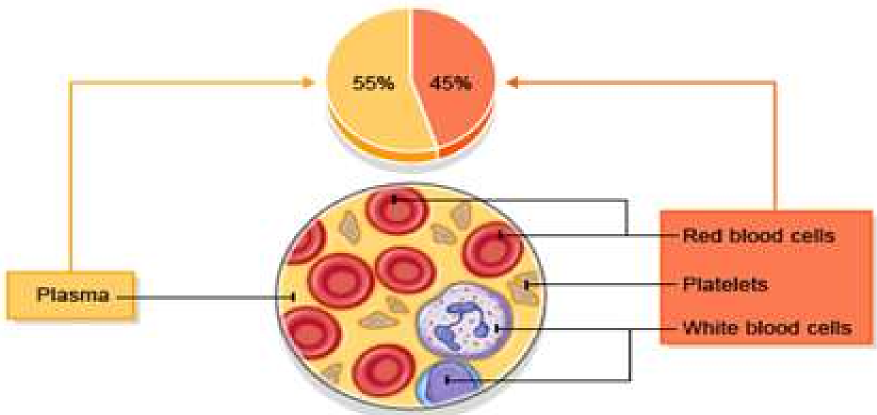

चित्र 8.2: मानव रक्त के घटक

इस प्रकार रक्त के दो प्रमुख घटक होते हैं–

1) **रक्त प्लाज्मा** (Blood Plasma)

2) **रक्त कोशिकायें** (Blood Cells)

8.2.1 रक्त प्लाज्मा (Blood Plasma)

प्रिय शिक्षार्थियों, रक्त का हल्के–पीले रंग का द्रव भाग रक्त प्लाज्मा कहलाता है जिसका 90 प्रतिशत भाग जल होता है। जल के साथ प्लाज्मा में 7 प्रतिशत भाग प्रोटीन्स तथा 3 प्रतिशत भाग में ग्लूकोज, हॉर्मोन्स, एमिनोअम्ल, एवं इलेक्ट्रोलाइट्स व अन्य कार्बनिक–अकार्बनिक लवणों के सूक्ष्म अंश होते हैं। ये सभी तत्व प्लाज्मा में द्रव अवस्था (Liquid Form) में रहते हैं। रक्त प्लाज्मा का मुख्य भाग जल शरीर की समस्त कोशिकाओं एवं ऊतकों को नमी प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। इसके साथ–साथ रक्त प्लाज्मा में एल्ब्यूमिन्स, फाइब्रिनोजन्स एवं ग्लोबुलिन्स नामक प्रोटीन्स पाये जाते हैं। ये प्रोटीन्स रक्त के परासरण दाब (Osmotic Pressure) को सामान्य बनाये रखने का कार्य करते हैं। रक्त में उपस्थित फाइब्रिनोजन्स नामक प्रोटीन रक्त का थक्का जमाने की क्रिया में भाग लेता है।

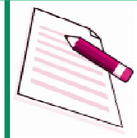

टिप्पणी

उपरोक्त तत्वों के साथ–साथ रक्त प्लाज्मा में शरीर के लिए लाभकारी विटामिन्स, एन्जाइम्स और हॉर्मोन्स आदि तत्व भी विद्यमान होते हैं। एक ओर जहां रक्त प्लाज्मा में उपयोगी तत्व उपस्थित होते हैं तो वहीं दूसरी ओर यूरिया, यूरिक एसिड, क्रिएटिनीन आदि अनुपयोगी उत्सर्जित पदार्थ भी रक्त प्लाज्मा में उपस्थित रहते हैं।

8.2.2 रक्त कोशिकायें (Blood Cells)

मनुष्य के रक्त में निम्नलिखित तीन प्रकार की कोशिकायें पायी जाती हैं–

i) लाल रक्त कोशिकायें (RBCs) – Erythrocyte.

ii) श्वेत रक्त कोशिकायें (WBCs) – Leucocyte.

iii) बिम्बाणु या प्लेटलेट्स (Platelets) –Thrombocyte.

The Erythrocytes or Red Blood Cells (RBCs), Leucocytes or White Blood Cells (WBCs) and Thrombocytes or Platelets are the most abundant cell types in the Circulatory System of Human. The RBCs are responsible for gas exchange while WBCs are solely involved with immunity. Platelets, also called thrombocytes are a component of Blood whose function (along with the coagulation factors) is to react to bleeding from blood vessel injury by clumping, thereby initiating a blood clot.

8.2.2.1 लाल रक्त कोशिकायें (RBCs)

रक्त में छोटी–छोटी वृत्ताकार डिस्क (lens-shaped) के आकार की सूक्ष्म रचनाएं पायी जाती हैं, जिन्हें लाल रक्त कोशिकायें अथवा इरिथ्रोसाइट्स कहा जाता है। एक स्वस्थ मनुष्य के रक्त में 40–60 लाख प्रति घन मिमी. (per cubic mm of Blood) (पुरुषों में 55 लाख एवं महिलाओं में 45 से 50 लाख प्रति घन मिमी0) RBCs उपस्थित होती हैं। मानव शरीर की समस्त कोशिकाओं में एकमात्र RBCs में केन्द्रक नहीं पाया जाता है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि मनुष्य के रक्त में RBCs की संख्या इतनी अधिक होती है कि इनकी अधिक संख्या के कारण ही रक्त का रंग लाल दिखाई देता है। इन लाल रक्त कणों का निर्माण अस्थि मज्जा (Bone Marrow) के अन्दर होता है। RBCs की आयु 120 दिन होती है। इस आयु के उपरान्त RBCs नष्ट हो जाती हैं और RBCs के नष्ट होने पर इनमें उपस्थित हिमोग्लोबिन यकृत में तथा इन मृत कोशिकाओं को तिल्ली (Spleen) में भेज दिया जाता है। इसी कारण तिल्ली (Spleen) को मानव शरीर का Blood Bank तथा रक्त कणों का कब्रगाह कहा जाता है। प्रायः मलेरिया तथा संक्रमण आदि से ग्रस्त होने पर जब अधिक संख्या में रक्त कण नष्ट होते हैं, तब तिल्ली (Spleen) का आकार बढ़ जाता है।

रक्त में RBCs की पर्याप्त संख्या उत्तम स्वास्थ्य का परिचायक होती है। RBCs की संख्या अधिक होने पर शरीर ऊर्जावान और क्रियाशील रहता है। शरीर में तेज और चेहरे पर कान्ति

रहती है। सुव्यवस्थित दिनचर्या, निश्चित समय पर पौष्टिक एवं शुद्ध–सात्विक आहार का सेवन, प्रत्येक कार्य प्रसन्नतापूर्वक करना, नियमित आसन–प्राणायाम एवं ध्यान आदि योगाभ्यास, हँसी–मजाक के साथ जीवन को आत्म विश्वास एवं सकारात्मक भावों से व्यतीत करना, ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जो रक्त में लाल रक्त कणों की मात्रा बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका वहन करते हैं। जबकि इसके विपरीत दिनभर तनाव के साथ शारीरिक और मानसिक श्रम करने, क्रोध करने, चिड़चिड़ाहट–ईर्ष्या और द्वेष करने, असमय विकृत राजसिक और तामसिक भोजन, लड़ाई–झगड़ों में रहने, रासायनिक दवाइयों का सेवन करने और धूम्रपान–मद्यपान आदि दुर्व्यसनों में पड़ने से लाल रक्त कणों की संख्या स्वतः ही कम हो जाती है। ऐसी अवस्था में शरीर पीला और चेहरा तेजहीन हो जाता है, शरीर की कार्यक्षमता कम होने के साथ–साथ बुढ़ापे के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

RBCs का प्रमुख घटक हिमोग्लोबिन (Hb) नामक द्रव्य होता है। हिमोग्लोबिन का निर्माण हिम नामक लौह–युक्त पदार्थ एवं ग्लोबिन नामक प्रोटीन के संयोग से होता है। स्वस्थ मनुष्य के रक्त में हिमोग्लोबिन (Hb) की सामान्य मात्रा 12 से 16 मिग्रा. प्रति 100 मि.ली. होती है। हिमोग्लोबिन में O_2 एवं CO_2 को अपने साथ संयुक्त करने की क्षमता होती है। इस क्षमता के आधार पर रक्त में उपस्थित हिमोग्लोबिन फेफड़ों में जाकर O_2 को ग्रहण कर लेता है तथा पहले हृदय में और फिर हृदय से O_2 को शरीर की सभी कोशिकाओं तक पहुंचाने का कार्य करता है। कोशिकाओं में O_2 प्रदान करने के बाद यह हिमोग्लोबिन कोशिका में स्थित CO_2 को अपने साथ संयुक्त कर लेता है तथा पुनः हृदय से होता हुआ वापिस फेफड़ों में आता है। अब यह हिमोग्लोबिन CO_2 को फेफड़ों में छोड़कर पुनः O_2 के साथ संयुक्त हो जाता है। रक्त में हिमोग्लोबिन की मात्रा अधिक होने पर यह क्रिया तीव्र गति होती है जिससे शरीर की कुशलता अधिक होती है। जबकि इसके विपरित रोगावस्था अथवा कुपोषण के कारण रक्त में हिमोग्लोबिन की मात्रा सामान्य से कम होने पर O_2 और CO_2 का परिवहन शरीर में भली–भांति नहीं हो पाता है जिससे श्रम करने पर श्वास फूलने लगता है और शरीर की कार्यक्षमता भी कम हो जाती है। सकारात्मक चिन्तन, आचार–विचार, व्यवहार और भोजन में अंकुरित अन्न, सेब, अंगूर, आम, गाजर, चकुन्दर, पालक और तुलसी के पत्ते आदि लौह–युक्त पदार्थों का सेवन करने से रक्त में हिमोग्लोबिन की मात्रा बढ़ती है।

8.2.2.2 श्वेत रक्त कोशिकायें (WBCs)

मनुष्य के रक्त में RBCs की तुलना में WBCs आकार में बड़ी किन्तु संख्या के दृष्टिकोण से काफी कम (500:1) होती है। अर्थात् 500 RBCs के साथ एक WBC पाया जाता है। एक स्वस्थ व्यस्क मनुष्य के रक्त में WBCs की संख्या 4,000-11,000 प्रति घन मिमी. (cubic mm of Blood) होती है। WBCs की यह संख्या शरीर में सदैव परिवर्तित होती रहती है। इस संख्या पर स्थान, समय और शारीरिक–मानसिक अवस्थाओं का सीधा प्रभाव पड़ता है। विशेष रूप से शरीर में संक्रमण होने पर शरीर में WBCs की संख्या बहुत तेजी से बढ़ती है और संक्रमण

की अवस्था में WBCs की संख्या पचास हजार तक पहुंच जाती है। शरीर में WBCs की संख्या का कम होना शरीर के लिए अच्छा लक्षण नहीं होता है अपितु यह शरीर में संक्रमण (Infection) को संकेत करता है। जबकि इसके विपरीत शरीर में असामान्य WBCs का सामान्य स्तर से अधिक ल्यूकेमिया अर्थात् ब्लड कैन्सर (Blood Cancer) कहलाता है। इसी प्रकार WBCs की आयु भी निश्चित नहीं होती है। इनका सामान्य जीवनकाल (Life Span) पाँच से इक्कीस दिनों का होता है। सुव्यवस्थित दिनचर्या, सन्तुलित आहार–विहार और सकारात्मक चिन्तन रक्त में WBCs की संख्या को सामान्य बनाए रखते हैं।

WBCs रंगहीन एवं पारदर्शक कोशिकायें होती है जिनकी उत्पत्ति पीत अस्थि मज्जा (Yellow Bone Marrow) एवं लसिका ग्रन्थियों (Lymph Glands) में होती है। WBCs का एकमात्र प्रमुख कार्य बाह्य जीवाणुओं, विषाणुओं एवं रोगाणुओं से शरीर की सुरक्षा करना होता है। WBCs बाह्य रोगाणुओं को निगलकर (Phagocytosis) समाप्त करते हैं तथा शरीर की सुरक्षा का कार्यभार संभालते हैं। WBCs की इसी विशेषता के कारण इन्हें 'शरीर के सिपाही' की संज्ञा दी जाती है।

8.2.2.3 बिम्बाणु (Platelets)

मनुष्य के रक्त में RBCs के आकार के समान ही सूक्ष्म रचनाएं बिम्बाणु (Platelets) पायी जाती है। स्वस्थ मनुष्य के रक्त में इनकी संख्या 1.5 से 4 लाख के मध्य होती है। इनका औसत जीवन काल 8 से 12 दिन होता है। इनकी उत्पत्ति भी अस्थिमज्जा में होती है। इनका महत्वपूर्ण कार्य रक्त का थक्का बनने की प्रक्रिया में सहायता प्रदान करना होता है। डेंगू वायरस का संक्रमण होने पर रक्त में बिम्बाणु की संख्या बहुत तेजी से कम हो जाती है।

इस प्रकार रक्त प्लाज्मा एवं रक्त कोशिकाओं के मिलने से रक्त की उत्पत्ति होती है। यह शरीरोपयोगी महत्वपूर्ण धातु रक्त मानव शरीर में निम्न कार्यों में भाग लेती हैं–

8.3 रक्त के कार्य (Functions of Blood)

1. रक्त भोजन से शरीरोपयोगी पोषक तत्वों को अवशोषित करते हुए शरीर की सभी कोशिकाओं में पहुंचाने (Transport of Nutrients) का कार्य करता है।
2. रक्त शरीर के अनुपयोगी उत्सर्जित पदार्थों का संवहन (Transport of Excretory products) करने का कार्य करता है।
3. रक्त फेफड़ों से O_2 का ग्रहण कर शरीर की सभी कोशिकाओं एवं ऊत्तकों तक इसे पहुंचाने (Transport of O_2) का कार्य करता है।
4. रक्त कोशिकाओं एवं ऊतकों में स्थित CO_2 का वहन (Transport of CO_2) करने का कार्य करता है।

टिप्पणी

5. रक्त जल संवहन के द्वारा शरीर के ऊत्तकों एवं कोशिकाओं को सूखने से बचाने का (Protection of Cell & Tissue) कार्य करता है।

6. रक्त अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से उत्पन्न हॉर्मोन्स (Transport of Hormones) के वहन का कार्य करता है।

7. रक्त शरीर के द्रवों एवं ऊतकों में परासरणीय दाब को सामान्य बनाने (Regulation Of Osmotic Pressure) का कार्य करता है।

8. रक्त संपूर्ण शरीर में ताप नियंत्रण (98.4 डिग्री फेरेनाइट) करने का कार्य करता है।

9. रक्त में उपस्थित श्वेत रक्त कण सम्पूर्ण शरीर की सुरक्षा (Protection) का कार्य करते हैं।

10. चोट आदि लगने पर थक्का (Blood Clotting) बनाने का कार्य करता है।

रक्त समूह (Blood Group)

शिक्षार्थियों, मनुष्यों में 'A', 'B', 'AB' और 'O' नामक चार रक्तसमूह पाये जाते हैं। इन रक्तसमूहों की खोज लेण्डस्टीनर नामक वैज्ञानिक ने की थी। इनमें से AB रक्तसमूह सर्वग्राही (Universal Recipient) तथा 'O' रक्तसमूह सर्वदाता (Universal Donor) कहलाता है।

यूनिटगत प्रश्न 8.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. एक स्वस्थ मनुष्य के शरीर में रक्त की मात्रा .... लीटर होती है।
2. मनुष्य के रक्त परिसंचरण तंत्र की खोज का श्रेय .... नामक वैज्ञानिक को जाता है।
3. मनुष्य का हृदय .... खण्डों में बटा होता है।
4. .... को हृदय का हृदय कहा जाता है।
5. पूरे विश्व में .... को विश्व हृदय दिवस मनाया जाता है।

ख) बहुविकल्पीय प्रश्न–

1) रक्त है–

a) उपकला ऊतक b) संयोजी ऊतक

c) पेशीय ऊतक d) तंत्रिकीय ऊतक

टिप्पणी

2) मानव शरीर में रक्त का कार्य है –

a) उपयोगी—अनुपयोगी पदार्थों का संवहन करना

b) रोगाणुओं से रक्षा करना

c) समस्थिति बनाए रखना d) सभी

3) एक स्वस्थ मनुष्य का रक्तचाप होता है—

a) 120-80 mm Hg b) 100-80 mm Hg

c) 140-100 mm Hg d) 100-60 mm Hg

4) एक स्वस्थ मनुष्य के रक्त में लाल रक्तकणों की संख्या होती है—

a) 50 हजार b) 5 हजार

c) 55 लाख d) 5 लाख

5) रक्त में उपस्थित बिम्बाणुओं का औसत जीवनकाल होता है—

a) 1 से 3 दिन b) 8 से 12 दिन

c) 21 से 28 दिन d) 2 से 5 दिन

8.4 मानव हृदय (Human Heart) संरचना एवं क्रियाविधि

हृदय मानव शरीर का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है। आयुर्वेद शास्त्र में शरीर के तीन महत्वपूर्ण मर्म स्थान कहे गये हैं— सिर, हृदय एवं वस्ति। इन तीनों में भी हृदय का अपना एक विशिष्ट स्थान है। यह मनुष्य की चेतना का वह निवास स्थान है जहाँ से उसकी सभी शारीरिक और मानसिक क्रियाएं मूलरुप से संचालित होती हैं। यह मनुष्य की वक्षीय गुहा में बांयी ओर स्थित, बंद मुठ्ठी के समान अथवा नाशपाती के समान आकार की रचना है। पुरूषों में इसका वजन 300 से 350 ग्राम एवं स्त्रियों में 250 से 250 ग्राम के मध्य होता है। हृदय का निर्माण विशेष प्रकार की पेशियों (Cardiac Muscle) से होता है जिसमें स्वयं की चेतना होती है। आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार गर्भावस्था के तीसरे से चौथे महीने में हृदय जागृत हो जाता है तथा इसके उपरान्त यह जीवन पर्यन्त अपना कार्य करता रहता है। हृदय मानव शरीर का वह महत्वपूर्ण अंग है जिसका क्रियाशील होना जीवन तथा क्रियाहीन होना मृत्यु का सूचक होता है।

8.4.1 संरचना एवं क्रियाविधि

मनुष्य के हृदय का निर्माण करने वाली पेशियों को कार्डियम (Cardium) कहा जाता है। मानव हृदय के ऊपर तीन आवरण होते हैं— पेरीकार्डियम (Pericardium), मायोकार्डियम (Myocardium), एवं एण्डोकार्डियम (Endocardium)। इन आवरणों के मध्य एक गाढ़ा चिपचिपा

टिप्पणी

द्रव्य भरा होता है, जिसे पेरिकार्डियल फ्लूएड (Pericardial Fluid) कहा जाता है। यह द्रव्य हृदय के आवरणों को चिकनाहट (Lubrication) प्रदान करता है तथा इन आवरणों को घर्षण से बचाता है।

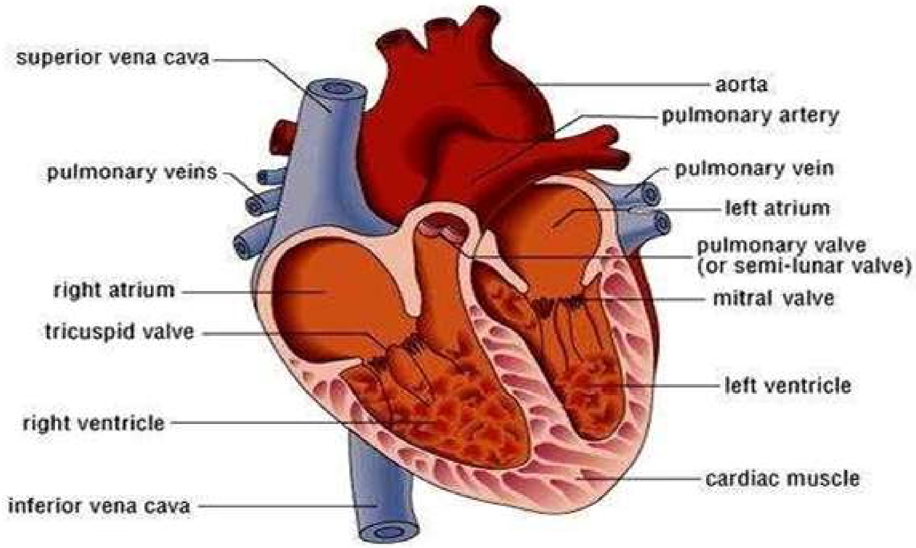

चित्र 8.3: मानव हृदय की संरचना

मनुष्य का हृदय चार खण्डों (Four Chambers) में बंटा होता है। ऊपर के दो खण्ड एट्रियम (Atrium) या अलिन्द और नीचे के दो खण्ड वेन्ट्रिकिल (Ventricles) या निलय कहलाते हैं। मनुष्य के हृदय में दाहिनी ओर अशुद्ध रक्त (Right side Deoxygenated Impure Blood) पाया जाता है तथा बांयी ओर शुद्ध रक्त (Left side Oxygenated Pure Blood) रहता है। अशुद्ध रक्त से अभिप्राय CO_2 की अधिकता वाले रक्त से एवं शुद्ध रक्त से अभिप्राय O_2 की अधिकता वाले रक्त से होता है। शरीर के विभिन्न भागों से तीन बड़ी शिराएं CO_2 युक्त अशुद्ध रक्त लेकर दाहिने अलिन्द में जाती है। Right Atrium से यह अशुद्ध रक्त Right Ventricle में जाता है तथा Right Ventricle से Pulmonary Artery द्वारा फेफड़ों में भेजा जाता है। फेफड़ों में गैसों का आदान–प्रदान होता है तथा यहां से रक्त में स्थित हिमोग्लोबीन CO_2 छोड़कर O_2 ग्रहण कर लेता है। O_2 को ग्रहण करने के उपरान्त यह शुद्ध रक्त Pulmonary Vein के द्वारा Left Atrium में आता है। Left Atrium से Left Ventricle में एवं Left Ventricle से Aorta के द्वारा शुद्ध O_2 युक्त रक्त संपूर्ण शरीर में भेज दिया जाता है।

8.4.2 हृदय स्पंदन (Heart Beat)

हृदय स्पंदन (धड़कन) का नियंत्रण पेस मेकर करता है जो Right Atrium में स्थित होता है। पेस मेकर को हृदय का हृदय कहा जाता है। मनुष्य के Right Atrium के ऊपरी भाग में स्थित S.N. Node गतिचालक (Pace Maker) कहलाता है।

टिप्पणी

मनुष्य का हृदय एक पंपिंग स्टेशन (Pumping Station) की तरह कार्य करता है जो O_2 युक्त शुद्ध रक्त शरीर की कोशिकाओं में पहुंचाता है एवं कोशिकाओं में स्थित CO_2 युक्त अशुद्ध रक्त को एकत्र करता है। इस कार्य को हृदय एक निश्चित लयबद्धता (Proper Rythm) के साथ करता है। इस लयबद्धता को हृदय स्पंदन Heart Beat कहा जाता है। मनुष्य का हृदय प्रतिमिनट 72 से 75 की दर से स्पंदन करता रहता है। **इस प्रकार एक बार स्पंदन करने में हृदय 0.8 सेकेण्ड का समय लेता है। इस 0.8 सेकेण्ड में भी हृदय में दो क्रियाएं होती हैं– प्रथम संकुचन (Contraction) और दूसरा विस्तार (Extension)।** हृदय का संकुचन (Contraction Period) ही इसका कार्यकाल कहलाता है क्योंकि संकुचन की क्रिया में हृदय की पेशी को बल लगाना पड़ता है। जबकि इसके विपरीत इस बल के हटाने पर स्वतः ही हृदय का विस्तार हो जाता है अर्थात् हृदय की पेशी स्वतः ही फैल जाती है। हृदय में संकुचन का काल 0.4 सेकेण्ड होता है, तथा हृदय का विस्तार काल भी 0.4 सेकेण्ड ही होता है। इस प्रकार से हृदय जितने समय कार्य करता है, उतने ही समय यह विश्राम भी कर लेता है। यही कारण है कि हृदय की पेशी जीवन पर्यन्त बिना थके हुए निरन्तर अपना कार्य करती रहती है। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इलैक्ट्रोकार्डियोग्राम (E.C.G.) द्वारा हृदय की क्रियाशीलता रिकार्ड की जाती है।

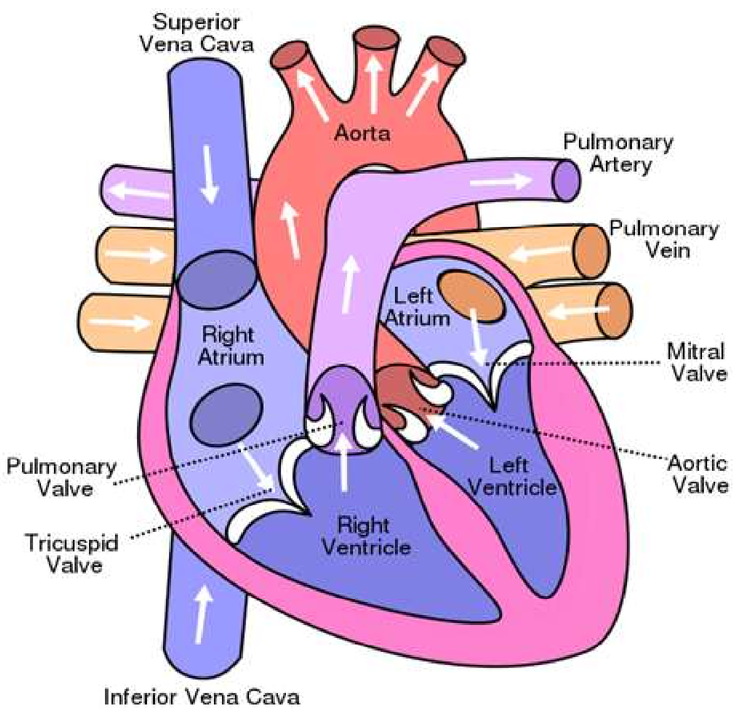

ाचत्र 8.4: मानव हृदय का ाक्रयाावाध

8.4.3 रक्तचाप (Blood Pressure)

जैसा की पूर्व में स्पष्ट किया गया है कि रक्त सदैव हृदय एवं रक्तवाहिनियों में परिभ्रमण करता रहता है तथा कभी भी इन वाहिनियों से बाहर नहीं आता है। **जिस दबाव के साथ रक्त इन रक्त वाहिनियों में परिभ्रमण करता है उसे रक्तचाप (Blood Pressure) कहा जाता है।**

टिप्पणी

एक स्वस्थ मनुष्य का रक्तचाप 120-80 mm Hg होता है। इसके भी दो भाग होते हैं। जिस समय हृदय संकुचित (Contraction) होता है, उस समय के दबाव को सिस्टोलिक प्रेशर (Systolic Pressure) कहा जाता है, तथा जिस समय हृदय का विस्तार होता है, उस समय के दबाव को डायस्टोलिक प्रेशर (Diastolic Pressure) कहा जाता है। स्वस्थ मनुष्य का सिस्टोलिक प्रेशर 120 mm Hg तथा डायस्टोलिक प्रेशर 80 mm Hg होता है। रक्तचाप को मापने का यंत्र स्फेग्मोमोनोमीटर (Sphygmomanometer) कहा जाता है।

> Systolic Pressure is the highest when the blood is being pumped out of the left ventricle into the aorta during ventricular systole. The average high during systole is 120 mmHg. Diastolic blood pressure lowers steadily to an average low of 80 mmHg during ventricular diastole.

8.4.4 रक्तवाहिनियाँ (Blood Vessels)

रक्त परिसंचरण तंत्र में रक्तवाहिनियों के दो प्रमुख वर्ग होते हैं–

i) धमनियाँ (Artery)   ii) शिराएँ (Vein)

i) धमनियाँ (Artery)

जो शुद्ध रक्त (O_2 युक्त) का वहन करती हैं और देखने में लाल रंग की होती हैं, धमनियां (Artery) कहलाती हैं। धमनियों में सदैव शुद्ध रक्त झटके के साथ बहता है, तथा धमनियों में रक्त की दिशा सदैव हृदय से अंगों की ओर होती है। धमनियों की दीवारें शिराओं की दीवारों की तुलना में अधिक मोटी एवं मजबूत होती है।

ii) शिराएं (Veins)

जो अशुद्ध रक्त (CO_2 युक्त) का वहन करती हैं और देखने में हल्के नीले रंग की होती हैं, शिराएं (Veins) कहलाती हैं। शिराओं के माध्यम से अशुद्ध रक्त कोशिकाओं, ऊतकों एवं अंगों से वापिस हृदय की ओर आता है। अतः शिराओं में रक्त एकसमान प्रवाह से बहता है। शिराओं में रक्त की दिशा सदैव अंगों से हृदय की ओर होती है।

सर्वप्रथम हृदय के Left Ventricle से O_2 युक्त शुद्ध रक्त लेकर Aorta (महाधमनी) बाहर निकलती है। यह Aorta आगे चलकर छोटी–छोटी शाखाओं में बंट जाती है। Aorta की यह शाखाएँ Artery कहलाती हैं जो आगे चलकर उपशाखाओं में विभाजित होती हैं। ये उपशाखाएं Arteriole कहलाती हैं। Arteriole भी पुनः शाखाओं में विभाजित होती हैं, ये अतिसूक्ष्म शाखाएं रक्त केशिकाएं (Blood Capillary) कहलाती हैं। सम्पूर्ण मानव शरीर में रक्त केशिकाएं जाल के रूप में फैली होती हैं। रक्त केशिकाएं एक कोशीय दीवार की बनी होती हैं। एककोशीय दीवार की होने के कारण इनसे गैसों के आदान–प्रदान की क्रिया संभव होती है। अर्थात् रक्त केशिकाएं कोशिका में O_2 प्रदान करती हुई CO_2 को

ग्रहण कर लेती हैं। तत्पश्चात् CO_2 ग्रहण करने के उपरान्त यह अशुद्ध रक्त Venules में एकत्र हो जाता है। बहुत सारी Venules आपस में मिलकर Vein बना लेती हैं तथा Veins आपस में मिलकर Vena Cava (महाशिराओं) का निर्माण करती हैं। दो बड़ी Venae Cavae संपूर्ण शरीर से CO_2 युक्त अशुद्ध रक्त लेकर Right Atrium में पहुंचा देती हैं और रक्त परिसंचरण का यह क्रम प्रतिक्षण मानव शरीर में चलता रहता है।

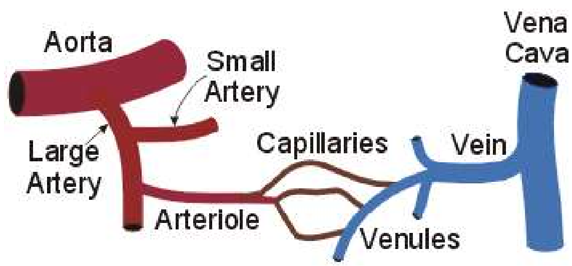

चित्र 8.5: शरीर में रक्तवाहिनियों का वर्गीकरण

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि रक्त प्रतिक्षण हृदय और रक्तवाहिनियों में परिभ्रमण करता हुआ सम्पूर्ण शरीर की कोशिकाओं को उपयोगी तत्व पहुंचाता रहता है तथा कोशिकाओं में स्थित अनुपयोगी तत्वों का वहन करता हुआ शरीर में समस्थिति (Homeostasis) युक्त बनाए रखने का महत्वपूर्ण कार्य करता रहता है। शुद्ध सात्विक आहार के साथ–साथ सकारात्मक चिन्तन रक्त को स्वच्छ एवं हृदय को स्वस्थ बनाए रखता है जबकि इसके विपरीत राजसिक–तामसिक आहार के सेवन तथा नकारात्मक चिन्तन–मनन से जहां रक्त दूषित हो जाता है तो वहीं इसका दुष्प्रभाव हृदय की कार्यक्षमता (Working Efficiency) पर भी पड़ता है और नाना प्रकार के रोगों की उत्पत्ति होती है।

8.5 रक्त परिसंचरण तंत्र पर योग का प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, हमने मानव रक्त परिसंचरण तंत्र को पढ़ा, कार्यविधि को समझा। आइए इस पर योग के प्रभाव को समझने का प्रयास करें। आयुर्वेद शास्त्र में आहार, निद्रा एवं ब्रह्मचर्य को स्वास्थ्य के तीन उपस्तम्भ माना गया है। अर्थात् ये तीन कारक, मनुष्य के स्वास्थ्य को सीधे–सीधे प्रभावित करते हैं। प्राचीन काल में इन तीनों पर मनुष्य का नियंत्रण भली–भांति बना रहता था, जिसके कारण मनुष्य का स्वास्थ्य उन्नत अवस्था में रहता था जबकि वर्तमान काल में उपरोक्त तीनों कारकों पर, मनुष्य का नियंत्रण निसन्देह कम हुआ है, जिसके फलस्वरूप विभिन्न शारीरिक एवं मानसिक रोग समाज में तेजी से बढ़े हैं। व्यावहारिक दृष्टिकोण से अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान समय में सबसे अधिक परिवर्तन मनुष्य के आहार में आया है। आहार में रासायनिक एवं कृत्रिम पदार्थों जैसे– नमक, चीनी, मैदा, चाय, कॉफी, डालडा घी, रिफाइंड कृत्रिम रंग, प्रिजरवेटिव, फास्ट फूड, कोल्ड ड्रिंक्स आदि के सेवन ने मनुष्य के रक्त में विकार बहुत तेजी से बढ़ाए हैं। कम

टिप्पणी

समय में अधिक–से–अधिक प्राप्त करने की इच्छा एवं प्रतिस्पर्धात्मक सोच ने, मनुष्य के जीवन का सन्तोष और सुख की नींद बहुत कम कर दी है। तप–संध्या और स्वाध्याय के अभाव ने मनुष्य का उसकी इन्द्रियों पर नियंत्रण और संयम को प्रभावित किया है। आधुनिकता के उत्तेजक वातावरण ने ब्रह्मचर्य पालन पर नकारात्मक प्रभाव डाला है। इन सभी कारकों के फलस्वरूप रक्त परिसंचरण तन्त्र से सम्बन्धित रोगों ने समाज में बहुत तेजी से अपनी जड़ें मजबूत की हैं। वर्तमान समाज में छोटे बच्चों से लेकर व्यस्क एवं वृद्ध व्यक्ति तक रक्तचाप एवं हृदय से सम्बन्धित रोगों से ग्रस्त होते जा रहे हैं। कोरोनरी आर्टरी डिजीज और बाईपास सर्जरी सामान्य सी बात बनती जा रही है। पश्चिमी विकसित देशों से लेकर भारतवर्ष तक, हृदयाघात से मरने वाले व्यक्तियों की संख्या का ग्राफ लगातार बढ़ता जा रहा है। आंकड़ों के अनुसार दुनिया भर में होने वाली 29 प्रतिशत मौतों की प्रमुख वजह हृदय से सम्बन्धित बीमारियां और हृदयाघात है। आधुनिक समाज में दवाईयां खाकर, रक्तचाप को नियंत्रित करने का चलन बहुत तेजी से बढ़ा है, परन्तु रासायनिक दवाइयों के लगातार सेवन से उच्च रक्तचाप कुछ समय के लिए नियंत्रित मात्र ही हो पाता है क्योंकि दवाइयों का प्रभाव लक्षणों को दबा देता है और रोग मूल रुप से शरीर में बना रहता है। यह अवस्था भविष्य की गंभीर तस्वीर की ओर संकेत करती है। विषय की गंभीरता को देखते हुए पूरे विश्व में वर्ष 2000 से 29 सितम्बर को विश्व हृदय दिवस मनाया जाता है जिसका उद्देश्य सम्पूर्ण विश्व को हृदय रोगों के प्रति जागरुक बनाकर असमय होने वाली मृत्यु को रोकना है। यहां पर रासायनिक दवाइयों के सेवन के स्थान पर, योगमय जीवनशैली और योगांगों का पालन स्वस्थ जीवन का एक श्रेष्ठ आधार बन सकता है।

योगमय जीवनशैली को अपनाने के साथ नियमित यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से रक्त का शोधन होता है जिसका रक्त, रक्तवाहिनियों, रक्तचाप एवं हृदय पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। ध्यान देना चाहिए कि योग सर्वप्रथम मनुष्य को सकारात्मक दृष्टिकोण प्रदान करता है जिसका सीधा प्रभाव मनुष्य के शरीर की रक्तवाहिनियों में होने वाले रक्त प्रवाह एवं हृदय पर पड़ता है। जहाँ संकीर्ण सोच–विचार और जीवन में झूठे दिखावे से रक्त वाहिनियां सिकुड़ जाती हैं और रक्त परिसंचरण के रास्ते बंद होकर बाईपास सर्जरी की आवश्यकता पड़ने लगती है तो वहीं दूसरी ओर खुली सकारात्मक सोच रखने से रक्तवाहिनियां फैली हुई रहती हैं जिसका हृदय और रक्तचाप पर बहुत अनुकूल प्रभाव पड़ता है। निसन्देह वर्तमान समय की 'घर बड़े किन्तु दिल छोटे' की कहावत ने हृदय रोगों में अप्रत्याशित वृद्धि की है। विभिन्न वैज्ञानिक शोध–अनुसंधान एवं सर्वेक्षण ये स्पष्ट करते हैं कि नियमित योगाभ्यास करने वाले मनुष्य हृदय रोगों से कम ग्रस्त होते हैं। इसके साथ–साथ हृदय रोगी यौगिक क्रियाओं के अभ्यास के द्वारा रक्त परिसंचरण से सम्बन्धित रोगों को ठीक कर सकते हैं। ध्यान देने योग्य तथ्य यह भी है कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान रक्तचाप एवं हृदय रोगों को जीर्ण असाध्य रोगों की श्रेणी में रखता है तथा इन्हें जीवन में कभी भी ठीक नहीं होने वाले रोग मानता है। यहां पर योग चिकित्सा के द्वारा इन रोगों का आसानी से प्रबंधन किया जा सकता है। रक्त परिसंचरण तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव को इस प्रकार समझ सकते है–

टिप्पणी

1. षट्कर्म का प्रभाव

षट्कर्म की छः शोधन क्रियाएं, शरीर में त्रिदोषों का संतुलन करती हैं तथा शरीर में उपस्थित विषाक्त गंन्दगियों को बाहर निकालती हैं। शोधन क्रियाओं के अभ्यास से रक्त में उपस्थित विषाक्त पदार्थ भी बाहर निकलते हैं अर्थात् रक्त का शोधन होकर रक्त स्वच्छ बनता है, जिससे रक्त विकार दूर होते हैं। षट्कर्म के अंतर्गत धौति क्रिया, नेति क्रिया, त्राटक एवं कपालभाति क्रिया का अभ्यास रक्त परिसंचरण तंत्र पर विशेष लाभकारी प्रभाव रखता है। यहां महत्वपूर्ण तथ्य है कि उच्च रक्तचाप से ग्रस्त रोगी को वमन क्रिया में नमक के पानी के स्थान पर सौंफ को जल में उबालकर, छानकर जल का प्रयोग करना चाहिए।

नेति क्रिया में भी सौंफ के जल का ही प्रयोग करना चाहिए। जल नेति एवं रबर नेति का अभ्यास रक्तचाप रोगियों को लाभ प्रदान करता है। त्राटक क्रिया उच्च रक्तचाप एवं हृदय रोगी के लिए विशेष लाभकारी अभ्यास है। उच्च रक्तचाप एवं हृदय रोगी को कपालभाति क्रिया तेजी से नहीं करनी चाहिए। कपालभाति क्रिया तेजी से करने पर रक्तचाप बढ़ता है एवं हृदय पर अधिक दबाव पड़ता है। इसके स्थान पर बहुत धीरे—धीरे कपालभाति क्रिया करने से संपूर्ण रक्त परिसंचरण तंत्र पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है।

2. आसन का प्रभाव

योगासन संपूर्ण रक्त परिसंचरण तंत्र पर लाभकारी प्रभाव रखते हैं। नियमित योगासन करने से शरीर का वजन कम होता है जबकि मोटापा हृदय रोगों का प्रमुख जोखिमी कारक है। आसनों का अभ्यास करने से रक्त परिसंचरण तीव्र होता है। शरीर के आँतरिक अंगों को अधिक मात्रा में रक्त प्राप्त होता है। आसनों के क्रम में ताड़ासन, त्रिकोणासन, सर्वांगासन, हलासन, चक्रासन, शीर्षासन, मरकटासन, नौकासन, भुजंगासन, धनुरासन आदि का अभ्यास रक्त परिसंचरण तीव्र करता है। आसनों के क्रम में शशांकासन का हृदय पर बहुत लाभकारी प्रभाव पड़ता है। नियमित शशांकासन करने से हृदयाघात की संभावना कम होती है। शवासन, मकरासन एवं बालासन का अभ्यास भी संपूर्ण रक्त परिसंचरण तंत्र पर लाभकारी प्रभाव रखता है। यहाँ ध्यान करने योग्य तथ्य यह है कि उच्च रक्तचाप रोगी को कठिन आसनों जैसे— धनुरासन, चक्रासन, मयूरासन और शीर्षासन का अभ्यास नहीं कराना चाहिए।

3. मुद्रा एवं बन्ध का प्रभाव

बन्धों के साथ यौगिक मुद्राओं का अभ्यास, रक्त परिसंचरण तंत्र पर लाभकारी प्रभाव रखता है। विपरीतकरणी मुद्रा, महामुद्रा, खेचरी मुद्रा, शाम्भवी आदि मुद्राओं का अभ्यास करने से रक्त परिसंचरण तंत्र स्वस्थ एवं सक्रिय बनता है एवं इससे सम्बन्धित रोग दूर होते हैं।

टिप्पणी

4. प्रत्याहार का प्रभाव

प्रत्याहार अर्थात् इन्द्रियों पर संयम करने का, रक्त परिसंचरण तंत्र पर विशेष लाभकारी प्रभाव पड़ता है। रक्त परिसंचरण तंत्र के अधिकांश रोग मूल रूप से प्रत्याहार का अपालन करने से उत्पन्न होते हैं। भोजन में अधिक मिर्च—मसालों का प्रयोग, नमक का सेवन, तामसिक आहार रक्त में विकृति उत्पन्न करता है, जिसके फलस्वरूप हृदय रोग उत्पन्न होते हैं। इस अवस्था में प्रातःकाल निश्चित समय पर जागरण, प्रातःकालीन भ्रमण, उषापान, सुव्यवस्थित दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या, शरीर की प्रकृति के अनुरूप हितकारी भोजन का सेवन करने से रक्त परिसंचरण तंत्र के रोग दूर होते हैं।

5. प्राणायाम का प्रभाव

प्राणायाम का अर्थ, प्राणऊर्जा की वृद्धि करने वाले अभ्यास से है। प्राणायाम का अभ्यास रक्त परिसंचरण तंत्र के रोगों में अचूक रसायन का कार्य करता है। नियमित विधिपूर्वक प्राणायाम करने से रक्तचाप संतुलित होता है, हृदय स्वस्थ सक्रिय एवं बलवान बनता है, जिससे मनुष्य दीर्घायु को प्राप्त होता है। प्राणायाम के अन्तर्गत अनुलोम—विलोम, नाड़ी—शोधन, उज्जायी एवं भ्रामरी अभ्यास रक्त परिसंचरण तंत्र पर बहुत लाभकारी प्रभाव रखते हैं। रक्तचाप की बढ़ी अवस्था में प्रातः और सांय दोनों समय शवासन—योगनिद्रा के साथ—साथ पर्याप्त समय तक नियमित रूप से अनुलोम—विलोम और भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए।

6. ध्यान का प्रभाव

ध्यान का अभ्यास मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक ऊर्जा को उन्नत बनाता है। भारतीय संस्कृति में प्रातः और सांय दोनों समय सन्धिबेला में ईश्वर के ध्यान का उपदेश दिया गया है। इस काल में ईश्वर का ध्यान करते हुए वैदिक संध्या के अन्तर्गत अर्थर्ववेद के निम्न मंत्र का वाचन और चिन्तन छह बार किया जाता है—

''योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मतं वो जम्भे दध्मः''।।

(अर्थर्ववेद)

अर्थात् आधिपत्य, रक्षा और जीवन प्रदान करने वाले प्रभो, आपको बारम्बार नमस्कार है। जो हमसे द्वेष करता है अथवा जिसे हम द्वेष करते हैं, उसे हम आपकी न्यायरुपी सामर्थ्य पर छोड़ देते हैं। इस प्रकार ईश्वर समर्पण से मनुष्य का सारा तनाव दूर हो जाता है और आत्मबल—आत्मसन्तोष की अनुभूति होती है। वैज्ञानिक अनुसंधान स्पष्ट करते हैं कि ध्यान करने से शरीर के सभी् हार्मोन्स संतुलित होते हैं, जिसका सकारात्मक प्रभाव रक्त परिसंचरण तंत्र पर पड़ता है। उच्च रक्तचाप एवं हृदय रोगों में ध्यान एवं प्रार्थना का अभ्यास विशेष लाभकारी प्रभाव रखता है।

7. समाधि का प्रभाव

विपरीत वातावरण एवं प्रतिकूल परिस्थितियों का संपूर्ण रक्त परिसंचरण तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। विपरीत अनुभूतियों को करने से रक्तचाप में वृद्धि होती है एवं हृदयरोग उत्पन्न होते हैं। मानसिक तनाव उच्चरक्तचाप एवं हृदय रोगों का एक प्रमुख कारण है। यहां पर समाधि अर्थात् अपने चारों ओर सकारात्मक वातावरण की अनुभूति, रक्तचाप एवं हृदय पर अनुकूल प्रभाव रखती है। अपने चारों ओर सकारात्मक अनुभूतियां करते हुए आनन्दपूर्वक रहने से रक्तचाप संतुलित रहता है, हृदय स्वस्थ एवं सक्रिय बनता है, जिसका मनुष्य के रक्त परिसंचरण तंत्र पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

अष्टांग योग के प्रणेता महर्षि पतंजलि ने योगांगों का प्रारम्भ यम–नियम से किया है। यम के अंतर्गत अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह जबकि नियम में शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान का समावेश है। यम और नियम का पालन करने से मनुष्य का रक्त परिसंचरण तंत्र सदैव स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त रहता है। इसके साथ–साथ चित्तप्रसाद्न अर्थात् मन को प्रसन्न रखने के उपायों पर प्रकाश डालते हुए महर्षि पतंजलि पुनः स्पष्ट करते हैं–

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावनाश्चित्तप्रसादनम् ।।

(पा0 यो0 सू0 1/33)

अर्थात् सुखी पुरुषों से मित्रता की भावना करने, दुःखी मनुष्यों से दया, पुण्यात्मापुरुषों में प्रसन्नता की भावना और पापियों में उपेक्षा की भावना करने से चित्त निर्मल रहता है। योग साधकों को इसका अभ्यास करना चाहिए।

इस प्रकार के भावों को धारण कर जीवन यापन करने से मनुष्य का रक्त परिसंचरण तंत्र सदैव स्वस्थ, सक्रिय और रोगों से मुक्त बना रहता है।

यूनिटगत प्रश्न 8.2

क) सत्य अथवा असत्य कथन का चयन कीजिए –

1) मनुष्य के हृदय में दाहिनी ओर शुद्ध रक्त उपस्थित होता है।

2) शुद्ध रक्त (O_2 युक्त) का वहन करने वाली रक्तवाहिनी शिराएं (Veins) कहलाती है। ( )

3) धमनियों में रक्त की दिशा सदैव हृदय से अंगों की ओर होती है। ( )

4) रक्त समूह AB सर्वदाता होता है। ( )

5) प्लमोनरी धमनी (Pulmonary Artery) हृदय से अशुद्ध रक्त फेफडों तक लेकर जाती है। ( )

टिप्पणी

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए –

1) वयस्क मनुष्य के हृदय का भार कितना होता है ?

2) मानव हृदय को स्वस्थ बनाने वाले दो प्राणायामों के नाम लिखिए ?

3) एक स्वस्थ मनुष्य के रक्त का सिस्टोलिक प्रेशर कितना होता है?

4) किन रक्तकणों को शरीर के सिपाही की संज्ञा दी जाती है ?

5) रक्त में हिमोग्लोबिन की मात्रा बढ़ाने वाले दो खाद्य पदार्थों के नाम लिखिए।

आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने सीखा कि,

- रक्त परिसंचरण तंत्र मानव शरीर में परिवहन का महत्वपूर्ण कार्य करता है।
- मानव शरीर की महत्वपूर्ण धातु के रूप में रक्त शरीर में स्थित समस्त उपयोगी एवं अनुपयोगी पदार्थों के परिवहन का कार्य करता है।
- मानव शरीर की वक्षीय गुहा में स्थित बंद मुठ्ठी के समान रचना हृदय, रक्त को रक्त वाहिनियों में भेजने का कार्य करता है।
- शुद्ध रक्त का वहन करने वाली वाहिनीयां, धमनियां और अशुद्ध रक्त का वहन करने वाली वाहिनियां, शिराएं कहलाती हैं। इन वाहिनियों में 120–80 mm Hg के दबाव से रक्त परिभ्रमण करता रहता है।
- यह रक्त समस्त उपयोगी एवं अनुपयोगी पदार्थों के परिवहन का कार्य करता है।

उपरोक्त अध्ययन के आधार पर सार संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि मन में अच्छे विचारों के रूप में शुभ–संकल्प धारण करने, सुव्यवस्थित दिनचर्या के साथ शुद्ध–सात्विक संतुलित आहार ग्रहण करने, परिश्रम के साथ विश्राम का समन्वय रखते हुए आदर्श दिनचर्या का पालन करने और अपने कार्यों तथा जीवन के प्रति सन्तुष्टि के भाव रखते हुए नियमित यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करने से मनुष्य का रक्त परिसंचरण तंत्र अर्थात् रक्त एवं हृदय जीवन पर्यन्त निरोगी, स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बने रहते हैं। विभिन्न योगांग जैसे षट्कर्म, आसन, प्राणायाम आदि का नियमित अभ्यास करने से भी मनुष्य का रक्त परिसंचरण तंत्र सदैव स्वस्थ बना रहता है।

टिप्पणी

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव रक्त के संगठन को समझाते हुए इसके प्रमुख कार्यों का उल्लेख किजिए।
2. मानव रक्त परिसंचरण तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव की सविस्तार व्याख्या कीजिये।
3. रक्तकणों के प्रमुख प्रकारों को समझाते हुए इनकी संरचना एवं महत्व पर प्रकाश डालिए।
4. निम्न पर टिप्पणियां लिखिए–

   क) लालरक्त कण ग) मानव हृदय पर प्राणायाम और ध्यान का प्रभाव

   ख) रक्तचाप घ) आधुनिक जीवनशैली जनित रोगों में योग की भूमिका

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

8.1

	क		ख
1.	5.5	1.	b
2.	विलियम हार्वे	2.	d
3.	चार	3.	a
4.	पेस मेकर	4.	c
5.	29 सितम्बर	5.	b

8.2

	क		ख
1.	असत्य	1.	300 से 150 ग्राम
2.	असत्य	2.	अनुलोम–विलोम, भ्रामरी
3.	सत्य	3.	120 mm Hg
4.	असत्य	4.	W.B.Cs.
5.	सत्य	5.	पालक, सेब

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।

टिप्पणी

2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजु तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर(उ0 प्र0) ।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ।

9

अन्तःस्रावी तंत्र की संरचना–क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछली यूनिट में आपने रक्त परिसंचरण तंत्र के विषय में अध्ययन किया। आपने जाना कि, मानव शरीर में रक्त प्रतिक्षण परिभ्रमण करता रहता है और उपयोगी तथा अनुपयोगी पदार्थों का परिवहन करता हुआ शरीर में समस्थिति बनाए रखता है। अब आपको यह भी समझना चाहिए कि मानव शरीर में ऊर्जा उत्पत्ति एवं प्रयोग करने की दर सदैव परिवर्तनशील रहती है। मनुष्य दिन के समय अधिक क्रियाशील रहते हुए विभिन्न कार्यों को सम्पादित करता है जिस कारण दिन में अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जबकि इसके विपरीत रात्रिकाल में मनुष्य विश्राम करता है जिसमें कम ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। मानव शरीर में ऊर्जा उत्पत्ति एवं प्रयोग करने की दर चयापचय (Metabolism) कहलाती है। मानव शरीर की चयापचय दर ग्रन्थियों से उत्पन्न रासायनिक तत्व– हार्मोन्स (Hormones) के द्वारा नियंत्रित होती है।

हार्मोन्स रक्त में मिलकर सम्पूर्ण मानव शरीर की चयापचय दर को नियंत्रित करने का कार्य करते हैं। अब आपके मन में यह प्रश्न उत्पन्न होना अत्यन्त स्वाभाविक है कि शरीर में हार्मोन्स कहां से उत्पन्न होते हैं? कौन–कौन से हार्मोन्स उत्पन्न होते हैं और इन हार्मोन्स के कौन–कौन से कार्य हैं? इस यूनिट में आप, अन्तःस्रावी ग्रन्थियों तथा इन से उत्पन्न होने वाले हार्मोन्स का, सविस्तार अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

टिप्पणी

- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का सामान्य परिचय दे सकेगें;
- अन्तःस्रावी तंत्र की व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे;
- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से उत्पन्न हार्मोन्स के कार्यों की व्याख्या कर सकेंगे;
- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के महत्व को समझाने में सक्षम हो सकेंगे;
- अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।

9.1 अन्तःस्रावी तंत्र का सामान्य परिचय एवं परिभाषा

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव शरीर में कुछ विशेष स्थानों पर हार्मोन्स को उत्पन्न करने वाली रचनाएं उपस्थित होती हैं। इन रचनाओं को ग्रन्थियां (Glands) कहा जाता है। मानव शरीर में निम्न तीन प्रकार की ग्रन्थियां पायी जाती हैं–

1. **नलिकायुक्त ग्रन्थियां** (Exocrine Glands)– ग्रन्थियों का ऐसा वर्ग, जिनका स्राव एक विशेष नलिका द्वारा ग्रन्थि से बाहर आता है तथा शरीर के किसी स्थान विशेष को ही प्रभावित करता है, '**नलिकायुक्त ग्रन्थियां**' (Exocrine Glands) कहलाता है। नलिकायुक्त ग्रन्थियों को बहिर्स्रावी ग्रन्थियां भी कहा जाता है। मानव शरीर में अश्रु ग्रन्थियां, स्वेद ग्रन्थियां एवं पाचक रसों को उत्पन्न करने वाली प्रमुख नलिकायुक्त ग्रन्थियां पायी जाती हैं।

2. **नलिकाविहीन ग्रन्थियां** (Endocrine Glands)– ग्रन्थियों का ऐसा वर्ग जिनका स्राव किसी नलिका द्वारा बाहर नहीं आता है अपितु सीधे ही रक्त में मिला दिया जाता है। रक्त में मिलने के बाद यह स्राव रक्त के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर में परिभ्रमण करता हुआ सम्पूर्ण शरीर को प्रभावित करता है, '**नलिकाविहीन ग्रन्थियां**' कहलाता है। नलिकाविहीन ग्रन्थियों को अन्तःस्रावी ग्रन्थियां भी कहा जाता है। मानव शरीर में पिट्यूटरी, पीनियल, थायरॉयड, पैराथॉयरायड, थाइमस, एड्रीनल एवं प्रजनन ग्रन्थियां नलिकाविहीन अन्तःस्रावी ग्रन्थियां होती हैं।

3. **मिश्रित ग्रन्थियां** (Mixed Glands)– ग्रन्थियों का वह वर्ग जिसके कुछ स्राव नलिकाओं द्वारा बाहर निकलते हैं एवं कुछ स्राव सीधे रक्त में मिला दिए जाते हैं, '**मिश्रित ग्रन्थियां**' कहलाता है। यकृत और पेन्क्रियाज इस वर्ग की प्रमुख ग्रन्थियां हैं। यकृत मानव शरीर की सबसे बड़ी ग्रन्थि होती है, जबकि अन्तःस्रावी ग्रन्थियों में थायरॉयड ग्रन्थि सबसे बड़ी होती है।

Some types of Glands release their secretions in specific areas they are known as **Exocrine glands**, such as the Sweat and Salivary glands, release their secretions in the skin or inside the mouth. On the other hand, ductless **Endocrine glands like Pituitary and Thyroid** release more than 20 major Hormones directly into the bloodstream. Hormones are known as chemical messenger which control or regulate many biological processes

and are often produced in exceptionally low amounts within the body. Hormone plays very important role in Human Body like Insulin control blood sugar. The Thyroid gland secretes two main Hormones, Thyroxin and Triiodothyronine, into the bloodstream. These Thyroid Hormones stimulate all the cells in the body and control biological processes such as Growth, Reproduction, Development and Metabolism.

प्रिय शिक्षार्थियों, यहां पर अध्ययन का प्रमुख विषय अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की संरचना एवं क्रियाविधि है। मानव शरीर में स्थित अन्तःस्रावी तंत्र को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है—

''शरीर का वह तंत्र जो अन्तःस्रावों अर्थात् हार्मोन्स के द्वारा, सम्पूर्ण शरीर के चयापचय दर, वृद्धि—विकास, प्रजनन और निद्रा—जागरण आदि अन्य महत्वपूर्ण क्रियाओं के नियमन का कार्य करता है, अन्तःस्रावी तंत्र कहलाता है।

The Endocrine System is the collection of Glands that produce Hormones and Hormones regulate Metabolism, Growth and Development, Tissue Function, Sexual Function, Reproduction, Sleep and Mood, among other things.

शिक्षार्थियों, अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से उत्पन्न होने वाला स्राव हॉर्मोन (Hormone) कहलाता है। वैज्ञानिक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि हॉर्मोन एक रासायनिक संदेशवाहक (Chemical messenger) होता है जो मानव शरीर के किसी अंग अथवा ऊतक विशेष में पहुंचकर उसकी क्रियाविधि और गतिशीलता को तेज कर देता है अथवा उसमें शिथिलन उत्पन्न कर देता है। सभी हार्मोन्स मूल रुप से प्रोटीन (Basically Protein) के बने होते हैं एवं ऊतकों, अंगों—तंत्रों तथा सम्पूर्ण मानव शरीर पर बहुत विस्फोटक प्रभाव (डॉयनमिक इफैक्ट) रखते हैं। हार्मोन्स का प्रभाव तुरन्त अंगों की क्रियाशीलता पर पड़ता है। एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि, शरीर में समय और परिस्थिति के अनुसार हार्मोन्स का स्रावण कम अथवा अधिक होता रहता है। मानव शरीर में प्रत्येक हॉर्मोन एक निश्चित ग्रन्थि से उत्पन्न होता है और कार्य विशेष को सम्पादित करता है। मानव शरीर में हार्मोन्स को उत्पन्न करने वाली महत्वपूर्ण अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का वर्णन इस प्रकार है।

9.2 अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की संरचना

मानव शरीर में कौन—कौन सी अन्तः स्रावी ग्रंथियां पायी जाती हैं, आइए जानें

मानव शरीर में निम्न अन्तःस्रावी ग्रन्थियां उपस्थित होती हैं—

टिप्पणी

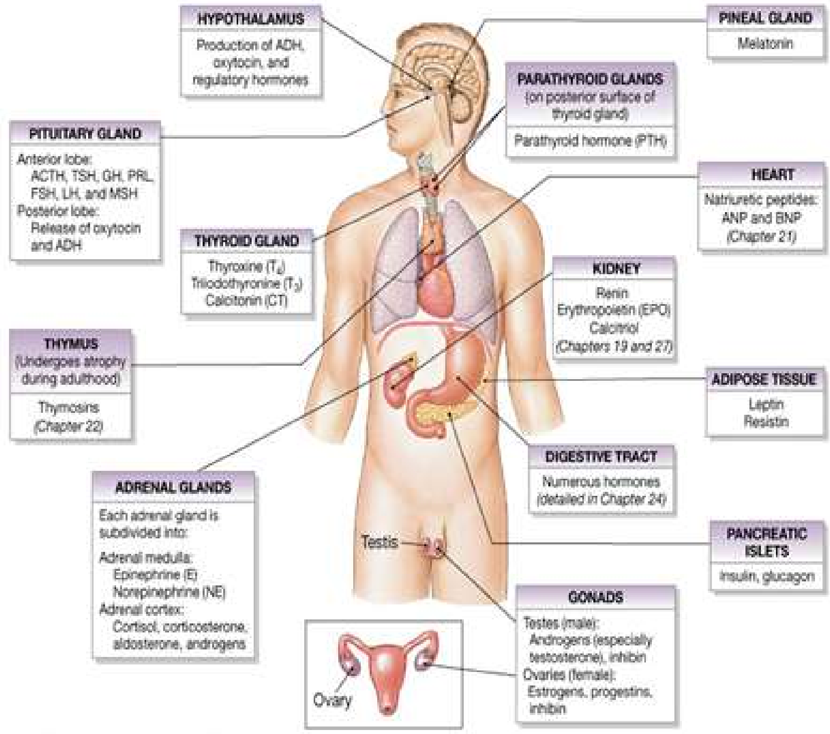

चित्र 9.1: मानव शरीर की प्रमुख अन्तःस्रावी ग्रन्थियां

9.2.1 पिट्यूटरी ग्रन्थि (Pituitary Gland)

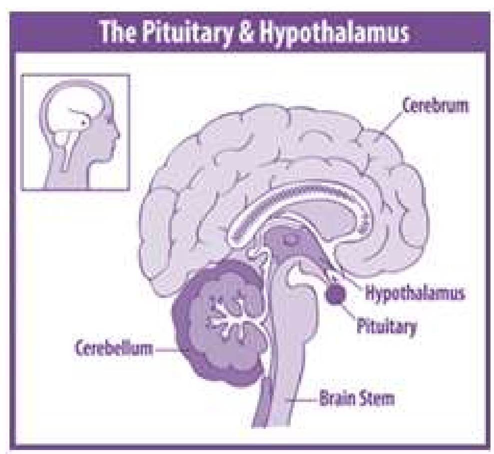

प्रिय शिक्षार्थियों, पिट्यूटरी शब्द लैटिन भाषा के 'पिटयूटिया' से उत्पन्न होता है, जिसका अर्थ 'कफ' से लिया जाता है। चूंकि कफ दोष शरीर की वृद्धि का कारण है और यह ग्रन्थि भी शरीर की वृद्धि में भाग लेती है अतः इसे पिट्यूटरी कहा गया है। हिन्दी भाषा में इसे पीयूष ग्रन्थि कहा जाता है। पीयूष से अभिप्राय अमृत से है अर्थात् यह अमृत प्रदान करने वाले ग्रन्थि है। पिट्यूटरी मस्तिष्क के हाइपोथेलेमस से ठीक नीचे आधारभाग में भूरे रंग की और मटर के दाने के समान रचना होती है, जिसका वजन मात्र 0.5 ग्राम (500 से 900 मिलीग्राम) होता है। अन्तःस्रावी ग्रन्थियों में पिट्यूटरी ग्रन्थि पिनीयल के बाद सबसे छोटी ग्रन्थि है किन्तु इसके महत्वपूर्ण कार्यों के आधार पर पिट्यूटरी ग्रन्थि को मास्टरग्लैण्ड (Pituitary is the Master Gland of Human Body) की संज्ञा दी जाती है।

टिप्पणी

वास्तव में पिट्यूटरी ग्रन्थि से उत्पन्न होने वाले स्राव दूसरी ग्रन्थियों पर सीधा प्रभाव रखते हैं तथा इन ग्रन्थियों को उत्तेजित अथवा शान्त कर देते हैं। पिट्यूटरी की इस विशेषता के कारण इसे मास्टरग्लैण्ड (Master Gland) कहा जाता है। पिट्यूटरी का अग्र भाग एडीनोहाइपोफाइसिस (Adenohypophysis) एवं पश्च भाग न्यूरोहाइपोफाइसिस (Neurohypophysis) कहलाता है। पिट्यूटरी ग्रन्थि के इन भागों से निम्नलिखित हार्मोन्स स्रावित होते हैं–

9.2.1.1 पिट्यूटरी के अग्र भाग (Anterior Pituitary) से स्रावित हार्मोन्स

पिट्यूटरी ग्रन्थि के अग्र भाग से निम्न सात हार्मोन्स उत्पन्न होते हैं–

1. **वृद्धि होर्मोन या सोमेटोट्रॉपिक होर्मोन (Growth Hormone, Somatotropic Hormone, G.H.)**

   मानव शरीर में वृद्धि और विकास को नियंत्रित करने वाला हॉर्मोन '**वृद्धि हॉर्मोन**' कहलाता है। इस हॉर्मोन के प्रभाव से शरीर की कोशिकाओं, ऊतकों एवं अंगों में वृद्धि की दर बढ़ जाती है। विशेष रूप से यह हॉर्मोन शरीर की अस्थियों पर सीधा प्रभाव रखता है और इसके प्रभाव से शरीर की लम्बाई प्रभावित होती है। वृद्धि हॉर्मोन के अति स्रावण से शरीर की लम्बाई अधिक, सामान्य स्राव होने पर शरीर की लम्बाई सामान्य जबकि अल्पस्रावण हाने पर शरीर बौना रह जाता है। इसी प्रकार वृद्धि हॉर्मोन महिलाओं में स्तनों के सामान्य विकास के लिए भी आवश्यक होता है। इस हॉर्मोन की कमी होने पर महिलाओं में स्तनों का विकास भलीभांति नहीं हो पाता है। वृद्धि हॉर्मोन शरीर की पेशियों के विकास के लिए भी आवश्यक होता है, इस हॉर्मोन की कमी से शरीर की पेशियों का विकास सही प्रकार से नहीं हो पाता है और शरीर की मांसपेशियां अविकसित रह जाती हैं।

   इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि मानव शरीर में जहां–जहां वृद्धि होती है, उस वृद्धि को नियंत्रित करने वाला वृद्धि हॉर्मोन (सोमेटोट्रॉपिक हॉर्मोन) ही होता है।

2. **प्रोलेक्टिन (Prolactin/P.R.L.)**

   यह हार्मोन महिलाओं में प्रजनन क्रिया को नियंत्रित करने का कार्य करता है। प्रोलेक्टिन हॉर्मोन प्रसव के उपरान्त स्तनों से दुग्ध उत्पादन को प्रेरित करने का कार्य भी करता है।

3. **थायरॉयड उद्दीपक हॉर्मोन (Thyroid-Stimulating Hormone/T.S.H.)**

   यह हॉर्मोन थायरॉयड ग्रन्थि की क्रियाशीलता को उद्दीप्त (Stimulate) करता है। इस हॉर्मोन के प्रभाव से थायरॉयड ग्रन्थि आयोडीन का भली–भांति उपयोग करके थायरॉक्सिन नामक हॉर्मोन का स्रावण बढ़ा देती है।

टिप्पणी

4. **एड्रीनोकॉर्टिकोट्रोपिक हॉर्मोन (Adrenocorticotropic Hormone/A.C.T.H.)**

   यह हॉर्मोन एड्रीनल ग्रन्थियों पर उत्तेजक प्रभाव रखता है। इस हॉर्मोन के प्रभाव से एड्रीनल ग्रन्थि की क्रियाशीलता बढ़ जाती है, जिसके परिणामस्वरूप एड्रीनल ग्रन्थि से उत्पन्न होने वाले स्टीरॉयड हार्मोन्स का स्रावण अधिक मात्रा में होने लगता है।

5. **ल्यूटीनाइजिंग हॉर्मोन (Luteinizing Hormone/L.H.)**

   यह हॉर्मोन महिलाओं में मासिक चक्र को नियंत्रित करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। पुरूषों में यह हॉर्मोन वृषण पर प्रभाव रखता है एवं प्रजनन क्रिया को प्रभावित करता है।

6. **फॉलिकल उद्दीपक हॉर्मोन (Follicle-Stimulating Hormone/F.S.H.)**

   यह हॉर्मोन भी प्रजनन अंगों को प्रभावित करता है। यह हार्मोन महिलाओं के मासिक चक्र एवं पुरूषों के वृषणों में शुक्राणुओं का निर्माण करने वाली कोशिकाओं को उद्दीप्त (Stimulate) करने का कार्य करता है।

7. **मेलेनोसाइट उद्दीपक हॉर्मोन (Melanocyte- Stimulating Hormone)**

   यह हॉर्मोन त्वचा में मेलानिन नामक वर्णक की उत्पत्ति को उत्तेजित करता है। इस हॉर्मोन के प्रभाव से त्वचा का वर्ण श्याम (Black) हो जाता है। इस हॉर्मोन के प्रभाव से त्वचा के विभिन्न स्थानों में काले स्पाट अर्थात् तिल आदि बनने लगते हैं।

9.2.1.2 पिट्यूटरी के पश्च भाग (Posterior Pituitary) से स्रावित हार्मोन्स

पिट्यूटरी ग्रन्थि के पश्च भाग से निम्नलिखित दो हार्मोन्स उत्पन्न होते हैं–

1. **एन्टीडायूरेटिक हार्मोन या वैसोप्रेसिन (Anti Diuretic Hormone or Vasopressin)**

   यह हॉर्मोन वृक्कों पर प्रभाव रखता है। इस हॉर्मोन के प्रभाव से वृक्क नलिकाओं की शोषण क्षमता बढ़ जाती है, जिसके कारण वृक्कों में अधिक जल का अवशोषण होने लगता है और कम मूत्र की उत्पत्ति होती है। इसके विपरीत इस हॉर्मोन का कम स्रावण होने से वृक्कों में जल का अवशोषण कम होने लगता है जिससे अधिक मात्रा में मूत्र की उत्पत्ति होती है। दर्द–पीड़ा, तनाव और उत्तेजक अवस्थाओं में इस हॉर्मोन का स्रावण बढ़ जाता है और ऐसी अवस्था में प्रायः रक्तचाप बढ़ने के साथ कम मूत्र की उत्पत्ति होती है।

2. **ऑक्सीटोसिन (Oxytocin)**

   यह हॉर्मोन गर्भाशय की अरेखित चिकनी पेशियों **(Smooth Muscles of Uterus)** पर अपना प्रभाव रखता है, इस हॉर्मोन के प्रभाव से इन पेशियों में तनाव और संकुचनशीलता उत्पन्न हो जाती है। यह हॉर्मोन गर्भावस्था में विशेष प्रभाव रखता है। बच्चे के दुग्धपान करते समय स्तनों को दबाने की संवेदनाएं, मस्तिष्क के हाइपोथेलेमस एवं पिट्यूटरी

भाग में पहुंचती है, इन संवेदनाओं के फलस्वरूप इस हॉर्मोन का स्रावण बढ़ने के कारण दुग्ध ग्रन्थियां **(Mammary Glands)** उत्तेजित होकर अधिक दूध को स्रावित करने लगती हैं।

इस प्रकार उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट होता है कि पिट्यूटरी ग्रन्थि मानव शरीर की अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थि है जिसके कम क्रियाशील अथवा क्षय होने पर मनुष्य के शरीर में निम्न विकृतियां (Disorders) उत्पन्न होती हैं–

1. शरीर की वृद्धि और विकास रूक जाता है तथा शरीर बौना रह जाता है।
2. थायरॉयड और अधिवृक्क ग्रन्थियों की क्रियाशीलता कम हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप शरीर की चयापचय दर **(Metabolic Rate)** कम हो जाती है।
3. जनन ग्रन्थियों **(Gonads)** का विकास रूक जाता है जिसके परिणामस्वरूप पुरूषों में नपुंसकता एवं स्त्रियों में बांझपन आदि दोष उत्पन्न हो जाते हैं।
4. शरीर में स्फूर्ति कम होने के साथ आलस्य और भारीपन आने लगता है और साथ ही साथ शरीर में मोटापा **(Obesity)** आने लगता है।
5. शरीर के बाल गिरने लगते हैं और मूत्र उत्पत्ति की मात्रा असामान्य हो जाती है।
6. शरीर की चयापचय दर असन्तुलित होने के साथ शारीरिक और मानसिक विकास बाधित होने लगता है।

9.2.2 पीनियल ग्रन्थि (Pineal Gland)

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य के सिर में पिन और नोक के समान लाल से भूरे रंग की एवं चावल के दाने के समान आकार की एक रचना उपस्थित होती है, जिसे पीनियल ग्रन्थि कहा जाता है। यह ग्रन्थि लगभग 150 मिलीग्राम की होती है तथा एक कैप्सूल से ढकी होती है। इसके साथ–साथ यह कुछ पर्दों द्वारा अनेक खण्डों में बंटी होती है। इस ग्रन्थि का बाल्यावस्था में काफ़ी विकास होता है परन्तु आगे चलकर पचास वर्ष की आयु के उपरान्त इसमें कैल्सियम जमा होने के कारण यह ठोस आकार ग्रहण करती हुई निष्क्रिय **(Calcification)** हो जाती है। प्राचीन काल से ही पीनियल ग्रन्थि को एक रहस्यमय ग्रन्थि माना जाता है। कुछ विद्वान यहीं पर अर्थात् ब्रह्मरन्ध्र में मनुष्य की चेतना का निवास मानते हैं। पीनियल ग्रन्थि को एपीफाइसिस अथवा तीसरा नेत्र भी कहा जाता है जिसका विशेष आध्यात्मिक महत्व है।

> The Pineal Gland produces Melatonin, a serotonin-derived hormone which modulates sleep patterns in both circadian and seasonal cycles. The shape and size of the Gland make it resemble a Pine nut, hence its name. The Pineal Gland is located in the Epithalamus, near the center of the Brain, between the two Hemispheres, tucked in a groove where the two halves of the Thalamus join.

टिप्पणी

इस ग्रन्थि से मेलाटोनिन (Melatonin) नामक हॉर्मोन स्रावित होता है जो पिट्यूटरी ग्रन्थि एवं मस्तिष्क पर सीधा प्रभाव रखता है। इस हॉर्मोन के प्रभाव से मस्तिष्क की क्रियाशीलता कम हो जाती है तथा मनुष्य की संवेदनशीलता कम होते हुए उसे नींद आने लगती है। इस ग्रन्थि को ध्यान की ग्रन्थि **(The Gland of Meditation)** भी कहा जाता है क्योंकि ध्यान करने से इस ग्रन्थि की क्रियाशीलता बढ़ जाती है और इससे अधिक मात्रा में मेलाटोनिन (Melatonin) हॉर्मोन स्रावित होने लगता है। व्यावहारिक रूप में भी हम प्रायः यह अनुभव करते हैं कि बहुत ध्यानपूर्वक कोई कार्य करने जैसे पढ़ाई–अध्ययन करते समय अथवा टीवी आदि देखने या संगीत पर ध्यान लगाने पर हमारी बाहरी संवेदनशीलता कम हो जाती है और हमें तुरन्त ही नींद आ जाती है। यह प्रभाव पीनियल ग्रन्थि से उत्पन्न मेलाटोनिन (Melatonin) नामक हॉर्मोन का होता है। जबकि इसके विपरीत इस हॉर्मोन के अल्पस्रावण से नींद कम हो जाती है। मानसिक तनाव का इस ग्रन्थि की क्रियाशीलता पर दुष्प्रभाव पड़ता है और तनाव में रहने पर इस ग्रन्थि की क्रियाशीलता कम हो जाती है। इससे मेलाटोनिन हॉर्मोन कम स्रावित होने के कारण मनुष्य की नींद कम हो जाती है। इसके साथ–साथ मनुष्य की चयापचय दर पर भी इस अवस्था का नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

9.2.3 थायरॉयड एवं पैराथायरॉयड ग्रन्थियाँ (Thyroid & Parathyroid Glands)

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य के गले में श्वास नलिका के दोनों ओर एक चूल्हे के समान रचना होती है, जिसे 'थॉयरायड ग्रन्थि' कहा जाता है। इसका वजन लगभग 25 से 30 ग्राम होता है। अन्तःस्रावी ग्रन्थियों में '**थॉयरायड**' मानव शरीर की सबसे बड़ी अन्तःस्रावी ग्रन्थि होती है। थॉयरायड ग्रन्थि चारों ओर से आवरण में लिपटी होती है जिसके अन्दर प्रोटीन पदार्थ कोलॉयड (Colloid Matter) भरा होता है। इस कोलॉयड में मधुमक्खी के छत्ते के समान लगभग तीस लाख छोटी–छोटी रचनाओं का जाल होता है। यहीं पर थायरॉक्सिन नामक हॉर्मोन का निर्माण होता है।

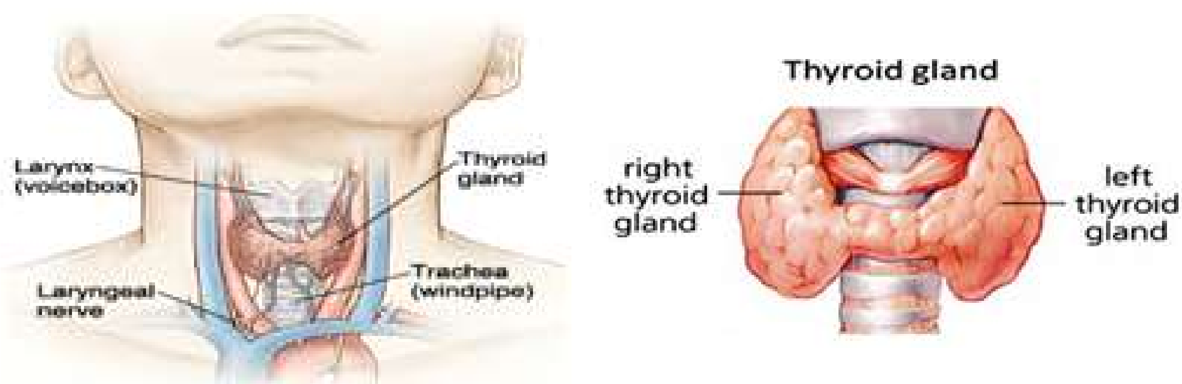

चित्र 9.2: थायरॉयड ग्रन्थि की संरचना

थायरॉक्सिन हॉर्मोन की उत्पत्ति में आयोडीन नामक तत्व आवश्यक होता है। मानव शरीर में थायरॉक्सिन हॉर्मोन को सामान्य रूप से उत्पन्न करने हेतु थायरॉयड ग्रन्थि को प्रतिदिन 25 माइक्रोग्राम आयोडीन की आवश्यकता होती है। थायरॉयड ग्रन्थि का अति क्रियाशील होना हायपरथॉयरोडिज्म (Hyperthyroidism) तथा थायरॉयड ग्रन्थि का कम क्रियाशील होना हायपोथॉयरोडिज्म (Hypothyroidism) कहलाता है। हायपरथॉयरोडिज्म के अन्तर्गत शरीर की चयापचय दर बढ़ जाती है। श्वसन दर के साथ नाड़ी दर बढ़ जाती है और मनुष्य अधिक चिन्तित और क्रियाशील हो जाता है। नींद कम होने के साथ अँगुलियों में सूक्ष्म कम्पन्न होने लगता है और शरीर का वजन तेजी से कम होने लगता है। इसके विपरीत हायपोथॉयरोडिज्म (Hypothyroidism) से ग्रस्त होने पर मनुष्य की शारीरिक और मानसिक क्रियाशीलता कम हो जाती है। चेहरा फूल जाता है और शरीर का वजन बढ़ जाता है। शरीर का तापक्रम सामान्य से कम हो जाता है और ठण्ड सहन नहीं हो पाती है। हर समय थकान रहने के साथ मोटापा बढ़ने लगता है, त्वचा रूक्ष–शुष्क (Scaly & Dry) हो जाती है। ऐसी अवस्था में महिलाओं का मासिक चक्र अनियमित हो जाता है।

Hyperthyroidism is the condition that occurs due to Excessive Production of Hormone by the Thyroid Gland. Signs and Symptoms vary between people and may include Irritability, Muscle Weakness, Sleeping problems, a fast Heartbeat, Heat intolerance, Diarrhea, Enlargement of the Thyroid, and Weight loss. Hypothyroidism is a condition in which the body lacks sufficient Thyroid Hormone. Since the main purpose of Thyroid Hormone is to "run the body's Metabolism," it is understandable that people with this condition will have Symptoms associated with a slow Metabolism. In fact, as many as 10% of women may have some degree of Thyroid Hormone deficiency.

थायरॉइड ग्रन्थि के समीप मसूर के दाने के आकार की चार छोटी–छोटी रचनाएं होती है, जिन्हें पैराथाइरॉयड ग्रन्थियां (Parathyroid Glands) कहा जाता है। पैराथाइरॉयड ग्रन्थियां पैराथॉरर्मोन (Parathormone/ PTH) को स्रावित करती हैं। पैराथॉरर्मोन का महत्वपूर्ण कार्य, मनुष्य के शरीर में कैल्शियम एवं फॉस्फोरस आयनों का सन्तुलन स्थापित करना होता है। इस हॉर्मोन के प्रभाव से उपरोक्त तत्वों का संतुलन बना रहता है तथा अस्थियाँ, पेशियां एवं तंत्रिकाएं सुचारू रूप से अपना कार्य करती हैं। जबकि इस हार्मोन के अल्पस्रावण से शरीर में कैल्शियम, फॉस्फोरस और मैग्निशियम आदि तत्वों के असन्तुलन होने पर अस्थियों तथा पेशियों का विकास रूक जाता है, इसे टिटेनी (Tetany) रोग कहा जाता है। मानव शरीर में पेराथॉर्मोन के अधिक मात्रा में स्रावण होने से रक्त में कैल्शियम का स्तर बढ़ने के कारण वृक्कों में पथरी (Kidney stone) की संभावना बढ़ जाती है।

9.2.4 थाइमस ग्रन्थि (Thymus Gland)

प्रिय शिक्षार्थियों, थाइमस ग्रन्थि मनुष्य की वक्षीय गुहा (Thoracic Cavity) में हृदय के समीप उपस्थित होती है। थाइमस ग्रन्थि की प्रमुख विशेषता होती है कि यह ग्रन्थि केवल बाल्यावस्था में ही सक्रिय रहती है और युवावस्था आने पर निष्क्रिय (Inactive) हो जाती है। थाइमस ग्रन्थि

टिप्पणी

से थाइमिक स्राव (Thymic Secretion) की उत्पत्ति होती है। इस स्राव का सम्बन्ध शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता (Immunity Power) के साथ होता है। इस कारण चिकित्सक थाइमस ग्रन्थि को प्रतिरक्षा तंत्र का अंग मानते हैं। थाइमस ग्रन्थि से उत्पन्न थाइमिक स्राव शरीर में प्रजनन अंगों (Gonads) पर विशेष प्रभाव रखता है तथा प्रजनन अंगों को समय से पूर्व परिपक्व (It control the pre-maturation of Gonads) नहीं होने देता है। बाल्यावस्था से आगे चलकर युवावस्था में पिट्यूटरी ग्रन्थि से कुछ ऐसे स्राव उत्पन्न होते हैं जो थाइमस ग्रन्थि पर नकारात्मक प्रभाव रखते हैं। पिट्यूटरी से उत्पन्न इन स्रावों के प्रभाव से थाइमस ग्रन्थि की क्रियाशीलता कम होने लगती है और इस ग्रन्थि से थायमिक स्राव कम उत्पन्न होने लगता है। थाइमिक स्राव के कम मात्रा में उत्पन्न होने पर प्रजनन अंगों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है और इसके उपरान्त थाइमस ग्रन्थि शरीर में अवशेष रूप में रह जाती है। थाइमस ग्रन्थि को ब्रह्मचर्य ग्रन्थि भी कहा जाता है क्योंकि ब्रह्मचर्य का पालन करने से इस ग्रन्थि की क्रियाशीलता जीवनपर्यन्त बनी रहती है एवं इसके प्रभाव से शरीर ओज–तेज से परिपूर्ण रहता है। इस ग्रन्थि के प्रभाव से शरीर की जीवनी शक्ति तथा रोग–प्रतिरोधक क्षमता बहुत उन्नत अवस्था में रहती है। जबकि इसके विपरीत इस ग्रन्थि के कम आयु में निष्क्रिय होने की स्थिति में शरीर का ओज–तेज क्षीण हो जाता है, शरीर की जीवनी शक्ति एवं रोग–प्रतिरोधक क्षमता बहुत क्षीण हो जाती है एवं नाना प्रकार की आधि–व्याधियाँ उत्पन्न होने लगती हैं।

9.2.5 एड्रीनल ग्रन्थियाँ (Adrenal Glands)

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य के दोनों वृक्कों के ऊपर टोपी के समान रचनाएं पायी जाती हैं, जिन्हें अधिवृक्क या एड्रीनल ग्रन्थियाँ कहा जाता है। प्रत्येक एड्रीनल ग्रन्थि का आकार टोपी के समान और वजन 5 से 8 ग्राम होता है। यह ग्रन्थियाँ एक कैप्सूल में बन्द रहती हैं जिसका बाहरी भाग कॉर्टेक्स (Cortex) और केन्द्रीय भाग मेडूला (Medulla) कहलाता है। एड्रीनल के इन दोनों भागों से निम्न हार्मोन्स स्रावित होते हैं–

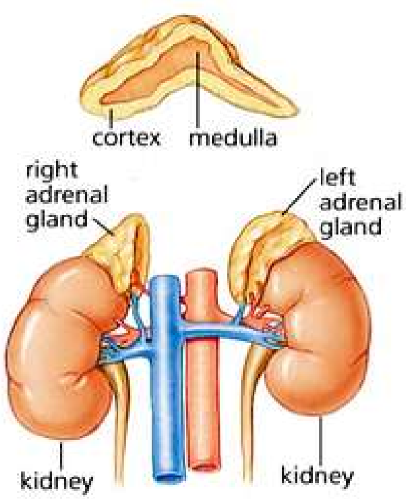

चित्र 9.3: मानव वृक्कों के ऊपर स्थित अधिवृक्क ग्रन्थियों की संरचना

टिप्पणी

9.2.5.1 एड्रीनल कॉर्टेक्स (Adrenal Cortex)

यह एड्रीनल ग्रन्थि का 90 प्रतिशत भाग होता है जिसकी कोशिकाएं लगभग 50 हार्मोन्स स्रावित करती हैं। इन्हें सामूहिक रुप से कॉटिकोस्टिरॉएड्स कहा जाता है। इन स्टीरॉएड हार्मोन्स में एल्डोस्टीरॉन, कॉर्टिसोल तथा एण्ड्रोजन प्रमुख होते हैं। एड्रीनल कॉर्टेक्स के अल्पक्रियाशील होने पर इन हार्मोन्स का अल्पस्रावण हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप एडीसन रोग (Addison's Disease) उत्पन्न होता है। इसमें शारीरिक थकान रहने के साथ—साथ रक्त की कमी, निम्न रक्तचाप और रक्त शर्करा का स्तर कम हो जाता है।

9.2.5.2 एड्रीनल मेड्यूला (Adrenal Medulla)

यह एड्रीनल ग्रन्थि का आन्तरिक भाग है जो कॉर्टेक्स से घिरा होता है। इस भाग से एड्रीनेलिन (Epinephrine) और नॉरएड्रीनेलिन (Nor-Epinephrine) नामक दो हार्मोन्स स्रावित होते हैं। यह एड्रीनेलिन हार्मोन्स तनाव की स्थिति में उत्पन्न होता है और सिम्पेथेटिक तंत्रिका तंत्र को उद्दिप्त (Stimulate) करते हुए शरीर पर उत्तेजक प्रभाव रखते है। यह शरीर पर फाईट एण्ड फ्लाईट प्रभाव (Fight and Flight Response) रखते हैं। जब मनुष्य गुस्से अथवा तनाव की स्थिति में होता है, तब पिट्यूटरी से उत्पन्न स्राव अधिवृक्क की क्रियाशीलता को बढ़ाते हुए एड्रीनलीन हॉर्मोन के स्रावण को बढ़ा देते हैं। इन हार्मोन्स के प्रभाव से रक्तचाप बढ़ जाता है, हाथों एवं पैरों की ओर रक्त संचार बढ़ जाता है, पसीना उत्पन्न होने लगता है, मांसपेशियों का तनाव, क्रियाशीलता एवं उत्तेजनाएं बढ़ जाती हैं, फलस्वरूप व्यक्ति अधिक—से—अधिक कार्य करने के लिए प्रेरित हो जाता है, जबकि इस अवस्था में मस्तिष्क की क्रियाशीलता कम होने पर उसमें सोच—विचार करने की क्षमता कम हो जाती है।

9.2.6 जनन ग्रन्थियाँ (Gonads)

प्रिय शिक्षार्थियों, पुरूषों में एवं महिलाओं में अलग—अलग प्रकार के जनन ग्रन्थियां पायी जाती हैं। पुरूषों में वृषण ग्रन्थियां होती हैं, जिसमें टेस्टोस्टीरॉन (Tastosterone) नामक हॉर्मोन की उत्पत्ति होती है, जबकि महिलाओं में डिम्ब ग्रन्थियां (Ovary) पायी जाती हैं। इन डिम्ब ग्रन्थियों से ईस्ट्रोजन (Estrogen) एवं प्रोजेस्टीरॉन (Progesterone) नामक दो महत्वपूर्ण हार्मोन स्रावित होते हैं। ये सभी हार्मोन्स प्रजनन क्रिया में भाग लेते हैं।

9.2.7 अग्न्याशय या पेन्क्रियाज (Pancreas)

प्रिय शिक्षार्थियों, अग्न्याशय एक मिश्रित ग्रन्थि (Mixed Gland) है जिससे पाचक रस रूपी बहिस्रावों के साथ—साथ हार्मोन्स रूपी अन्तःस्राव भी उत्पन्न होते हैं। इस ग्रन्थि में 2 लाख से 20 लाख तक की संख्या में अग्न्याशयिक द्विपीकाएं पायी जाती हैं। इनमें एल्फा, बीटा और डेल्टा सैल्स पायी जाती हैं। अग्न्याशय की एल्फा सैल्स से ग्लूकेगॉन, बीटा सैल्स से इन्सूलिन और डेल्टा सैल्स से सोमेटोस्टेटिन नामक हार्मोन्स उत्पन्न होते हैं। यह हार्मोन्स रक्त शर्करा (Blood Suger means Glucose) को नियंत्रित करने का कार्य करते हैं। शरीर में इन्सुलिन हार्मोन के असन्तुलन से मधुमेह नामक रोग उत्पन्न होता है।

टिप्पणी

यूनिटगत प्रश्न 9.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. मानव शरीर में ऊर्जा उत्पत्ति एवं प्रयोग करने की दर .... कहलाती है।
2. मनुष्य के शरीर में हार्मोन्स को उत्पन्न करने वाली रचना .... कहलाती है।
3. पीनियल ग्रन्थि से .... हॉर्मोन स्रावित होता है।
4. मानव शरीर की सबसे बडी ग्रन्थि .... है।
5. मनुष्य की सोच विचार का सीधा प्रभाव .... नामक ग्रन्थि पर पड़ता है।

ख) बहुविकल्पीय प्रश्न–

1) मानव शरीर में हार्मोन्स का कार्य किसको नियंत्रित करना है–

a) शरीर में वृद्धि एवं विकास   b) चयापचय दर

c) निद्रा एवं जागरण   d) सभी

2) यकृत और पेन्क्रियाज किस वर्ग की ग्रन्थियां हैं –

a) अन्तःस्रावी   b) बहिःस्रावी

c) मिश्रित   d) इनमें कोई नहीं

3) मानव शरीर में ऊपर से प्रारम्भ करते हुए निम्न अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को उचित क्रम में व्यवस्थित करें–

I) थायरॉयड   II) गोनेड्स (जनन ग्रन्थियां)

III) एड्रिनल (अधिवृक्क ग्रन्थियां)   IV) पिट्यूटरी

सही उत्तर के लिए निम्न कूट का उपयोग करें–

a) I, II, III, IV   b) IV, III, II, I

c) IV, I, II, III   d) IV, I, III, II

4) शरीर में पिट्यूटरी से स्रावित सोमेटोट्रॉपिक हॉर्मोन का कार्य है –

a) शरीर की लम्बाई नियंत्रित करना   b) थायरॉयड को नियंत्रित करना

c) प्रजनन क्रिया को नियंत्रित करना   d) मूत्र की मात्रा नियंत्रित करना

5) मानव शरीर में **T-3** और **T-4** का स्रावण किस ग्रन्थि से होता है–

a) पिट्यूटरी   b) थायरॉयड

c) एड्रिनल   d) थायमस

ग) सत्य अथवा असत्य कथन का चयन कीजिए –

1) थायराइड ग्रन्थि मस्तिष्क के हाइपोथेलेमस से ठीक नीचे आधारभाग में मटर के दाने के समान स्थित होती है। ( )

2) मानव शरीर की सबसे बड़ी अन्तःस्रावी ग्रन्थि पिट्यूटरी होती है। ( )

3) नलिकायुक्त ग्रन्थियों को अन्तःस्रावी ग्रन्थियां भी कहा जाता है। ( )

4) अग्न्याशय की बीटा सैल्स से इन्सूलिन हार्मोन उत्पन्न होता है। ( )

5) हायपरथॉयरोडिज्म के अन्तर्गत शरीर की चयापचय दर कम हो जाती है। ( )

घ) एक शब्द में उत्तर दीजिए –

1) मानव शरीर की किस ग्रन्थि को मास्टर ग्लैण्ड की संज्ञा किसे दी जाती है ?

2) पिट्यूटरी ग्रन्थि से स्रावित दो प्रमुख हार्मोन्स के नाम लिखिए।

3) मनुष्य के शरीर में पेराथॉराइड ग्रन्थियों की संख्या कितनी होती है?

4) एड्रीनल ग्रन्थि का केन्द्रीय भाग क्या कहलाता है ?

5) मधुमेह रोग का सम्बन्ध किस ग्रन्थि से है?

ङ) सुमेलित कीजिए–

1.	पिट्यूटरी	a.	सोमेटोस्टेनिन
2.	पेन्क्रियाज	b.	थायरॉक्सिन
3.	थायरॉयड	c.	सोमेटोट्रोपिक
4.	एड्रिनल	d.	मेलाटॉनिन
5.	पीनियल	e.	एपीनेफ्रीन

9.3 अन्तःस्रावी तंत्र पर योग का प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, वर्तमान काल में भारतीय समाज में पाश्चात्य दर्शन एवं पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण बहुत तेजी से बढ़ा है। योगमय जीवनशैली एवं अध्यात्मवाद को आदर्श मानने वाले भारतीयों ने वर्तमान काल में भौतिकवाद की चकाचौंध से प्रभावित होकर, पश्चिमी सभ्यता के अनुकरण में, इस प्रकार अपनी रूचि दिखाई है कि आहार–विहार और अन्य सभी क्रियाकलापों पर आधुनिकता का प्रभाव दूर से ही दिखाई पड़ता है। निष्काम भाव से दिनभर कठिन परिश्रम करने के उपरान्त एवं अहिंसा–सत्य धर्म का पालन करते हुए रात्रि को सुख की नींद सोने वाले भारतीयों ने भौतिकवाद के जाल में फंसकर दिन का चैन एवं रात्रि की नींद खराब कर ली है। आधुनिक समाज में प्रचलित ''येन केन प्रकारेण प्रसिद्धः पुरुषो भवेत्'' के सिद्धान्त का सबसे ज्यादा दुष्प्रभाव, मनुष्य की अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर पड़ा है। आज

टिप्पणी

समाज में हॉर्मोन्स से सम्बन्धित रोगों की बाढ़ आई हुई है, जिससे बहुत कम व्यक्ति ही बच पा रहे हैं। मधुमेह, थायरॉयड, ब्लडप्रेशर, मोटापा, गुस्सा आना, अनिद्रा और स्वयं पर अनियंत्रण जैसे रोग समाज के प्रत्येक वर्ग में बहुत तेजी से फैलते जा रहे हैं। इन रोगों से बचने के लिए अलग–अलग प्रकार की रासायनिक दवाइयों का सेवन समाज में बढ़ा है किन्तु इन रोगों का दवाइयों के प्रयोग से रोग का स्थायी समाधान प्राप्त नहीं हो पाता है अपितु रासायनिक दवाइयों का प्रयोग करने के स्थान पर योगमय जीवनशैली एवं यौगिक क्रियाओं का अभ्यास अन्तःस्रावी तंत्र को सन्तुलित एवं स्वस्थ बनाये रखने का श्रेष्ठ एवं उत्तम साधन है। यह तथ्य पूर्व में स्पष्ट हो चुका है कि मस्तिष्क के पास स्थित पिट्यूटरी ग्रन्थि मानव शरीर की मास्टर ग्रन्थि होती है। इस ग्रन्थि पर मनुष्य की सोच–विचार का सीधा प्रभाव पड़ता है। सोच–विचार सकारात्मक होने पर इस ग्रन्थि से उत्पन्न हॉर्मोन संतुलित रहते हैं, जिससे शरीर की वृद्धि, विकास एवं चयापचय दर संतुलित रहती है, जबकि इसके विपरीत सोच–विचार नकारात्मक होने पर पिट्यूटरी ग्रन्थि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। पिट्यूटरी ग्रन्थि के स्राव असंतुलित होने का दुष्प्रभाव अन्य ग्रन्थियों के स्रावों को भी असंतुलित कर देता है। योग सर्वप्रथम मनुष्य की सोच–विचार को सकारात्मक बनाता है, जिसका सीधा प्रभाव पिट्यूटरी ग्रन्थि पर पड़ता है और इससे पिट्यूटरी ग्रन्थि स्वस्थ एवं सक्रिय बनती है, जिसके प्रभाव से शरीर की अन्य ग्रन्थियां भी संतुलित रूप में हार्मोस को स्रावित करने लगती है। आइए, अन्तःस्रावी तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव को समझें–

1. षट्कर्म का प्रभाव

षट्कर्म की छः शोधन क्रियाएं, संपूर्ण शरीर को स्वच्छ बनाती हैं। शरीर के स्वच्छ होने पर अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है। हार्मोन्स संतुलित मात्रा में स्रावित होते हैं एवं हार्मोन्स से सम्बन्धित रोग दूर होते हैं। शोधन क्रियाओं का नियमित अभ्यास मास्टर ग्लैण्ड पिट्यूटरी के साथ–साथ शरीर की सभी ग्रन्थियों को स्वस्थ और सक्रिय बनाने में बहुत महत्वपूर्ण योगदान देता है। अग्निसार, नौलि और कपालभाति क्रिया का सीधा प्रभाव ग्रन्थियों की क्रियाशीलता पर पड़ता है और नियमित विधिपूर्वक इन यौगिक अभ्यासों को करने से सम्पूर्ण अन्तःस्रावी तंत्र निरोगी एवं क्रियाशील बनता है। त्राटक क्रिया का सीधा एवं सकारात्मक प्रभाव ग्रन्थियों की क्रियाशीलता पर पढ़ता है। बहिःत्राटक, अधोत्राटक एवं अन्तःत्राटक की क्रिया का अभ्यास पिट्यूटरी और पीनियल ग्रन्थि के साथ–साथ शरीर की समस्त अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर लाभकारी प्रभाव डालता है।

2. आसन का प्रभाव

अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर योगासन सीधा प्रभाव रखते हैं। आसन करने से रक्तसंचार तीव्र होता है, जिसके परिणामस्वरुप ग्रन्थियों की क्रियाशीलता बढ़ती है। आसनों के क्रम में शीर्षासन (आसनों का राजा) के अभ्यास के दौरान सम्पूर्ण शरीर में रक्त संचार विपरीत दिशा में हो जाता है। इसका शरीर की सभी अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर लाभकारी प्रभाव

पड़ता है। यहाँ महत्वपूर्ण तथ्य है कि यद्यपि शीर्षासन को आसनों का राजा माना जाता है किन्तु शीर्षासन के अभ्यास का प्रारम्भ पचास वर्ष की आयु के उपरान्त नहीं करना चाहिए, अपितु पचास अथवा अधिक वर्ष की आयु होने पर शीर्षासन के स्थान पर सर्वांगासन का अभ्यास करना चाहिए। सर्वांगासन सभी अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर शीर्षासन के लगभग समान लाभकारी प्रभाव रखता है। भुजंगासन, धनुरासन, उष्ट्रासन, वक्रासन के साथ–साथ ध्यानात्मक आसन जैसे– पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन, वज्रासन आदि का अभ्यास करने से अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्राव अर्थात् हार्मोन्स संतुलित रहते हैं। शवासन का भी अन्तःस्रावी तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। बारह आसनों का समूह अर्थात् सूर्य नमस्कार का नियमित, विधिपूर्वक मंत्रों के साथ अभ्यास करने से शरीर के हार्मोन्स संतुलित होते हैं।

3. मुद्रा और बन्ध का प्रभाव

मुद्रा और बन्धों के अभ्यास शरीर की आन्तरिक ऊर्जा में वृद्धि करते हैं, इसके साथ–साथ इन अभ्यासों के प्रभाव से आन्तरिक ऊर्जा सन्तुलित होती है, जिसका सकारात्मक प्रभाव अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर पड़ता है। घेरण्ड संहिता नामक ग्रन्थ में शाम्भवी मुद्रा को ध्यानयोग समाधि का प्रमुख साधन माना गया है। शाम्भवी मुद्रा का अभ्यास, पिट्यूटरी, पिनियल और थायरॉइड आदि सभी ग्रन्थियां को स्वस्थ और सक्रिय बनाता है। इसके साथ–साथ ज्ञान मुद्रा, प्राण मुद्रा, महामुद्रा आदि अभ्यास भी अन्तःस्रावी तंत्र पर लाभकारी प्रभाव रखते हैं।

4. प्रत्याहार का प्रभाव

प्रत्याहार अर्थात् इन्द्रियों पर संयम करना। जब शरीर, इन्द्रियां और मन संयमित होते हैं, तो सभी ग्रन्थियां संतुलित रूप में हार्मोन्स को स्रावित करती हैं। योग वशिष्ठ नामक ग्रन्थ को मनोविज्ञान का श्रेष्ठ वैदिक ग्रन्थ कहा जाता है। इस ग्रन्थ में महर्षि वशिष्ठ विकृत मनोदशा से ग्रस्त श्रीराम को, ज्ञानयोग का उपदेश करते हुए, मोक्ष के चार द्वारपालों का वर्णन करते हैं। महर्षि वशिष्ठ शम, विचार, सन्तोष और साधु–संगम को मोक्ष के चार द्वारपाल कहते हैं। इनका पालन करने से मनुष्य का मोक्ष मार्ग प्रशस्त होता है। इन चारों में प्रथम स्थान 'शम' का है। यहां शम से अभिप्राय इन्द्रियों पर संयम स्थापित करते हुए शान्ति की अवस्था प्राप्त करने से है। मानव शरीर में सदैव चंचल रहने वाली इन्द्रियों को प्रत्याहार का पालन करने से ही शान्त और वश में किया जा सकता है। इस प्रकार प्रत्याहार का पालन करने से इन्द्रियों पर संयम प्राप्त होता है, जिसके फलस्वरूप एक ओर जहां शरीर में हार्मोन्स सन्तुलित होते हैं तो वहीं दूसरी ओर मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है।

5. प्राणायाम का प्रभाव

प्राणायाम का अभ्यास, अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की क्रियाशीलता को बढ़ाता है तथा हार्मोन्स को सन्तुलित रखता है। नियमित और विधिपूर्वक प्राणायाम करने से शरीर में हार्मोन्स

टिप्पणी

का संतुलन बना रहता है। प्राणायाम के क्रम में भ्रामरी एवं उज्जायी प्राणायाम क्रमशः पिट्यूटरी एवं थायरॉयड ग्रन्थि को प्रभावित करते हैं। हठप्रदीपिका के रचनाकार योगी स्वात्माराम उज्जायी प्राणायाम की विधि एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं –

मुखं संयम्य नाडीभ्यामाकृष्य पवनं शनैः, यथा लगति कण्ठात्तु हृदयावधि सस्वनम्।।

पूर्ववत् कुम्भयेत् प्राणं रेचयेदिडया ततः, श्लेष्मादोषहरं कण्ठे देहानलविवर्धनम्।।

(हठप्रदीपिका 2/51–52)

अर्थात् मुख को बंद कर दोनों नथुनों से वायु को कुछ आवाज के साथ धीरे–धीरे इस प्रकार ग्रहण करना चाहिए कि कण्ठ से लेकर हृदय प्रदेश तक इसके स्पर्श का अनुभव हो। पहले सूर्यभेदन के समान कुम्भक करें और फिर बायीं नासिका से वायु का रेचक कर दें। इस अभ्यास से कफ दोष से उत्पन्न कण्ठ से सम्बन्धित रोग दूर होते हैं और जठराग्नि प्रदिप्त होती है। वैज्ञानिक शोध–अनुसंधान स्पष्ट करते हैं कि उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास थायरॉयड ग्रन्थि की क्रियाशीलता को विशेष रूप से प्रभावित करता है।

प्राणायाम के साथ प्रणव उच्चारण, उद्गीत एवं गायत्री मंत्र व महामृत्युंजय मंत्र का उच्चारण करने से संपूर्ण अन्तःस्रावी तंत्र स्वस्थ, सक्रिय एवं रोगमुक्त बनता है। प्राणायाम से पूर्व नाड़ी शोधन का अभ्यास करने से सभी ग्रन्थियां स्वस्थ एवं सक्रिय बनती हैं।

6. ध्यान का प्रभाव

ध्यान का अन्तःस्रावी तंत्र पर सीधा प्रभाव पड़ता है। तनाव तथा आवेश में रहने से शरीर में सभी हार्मोन्स असंतुलित हो जाते हैं, जबकि इसके विपरीत ध्यान का अभ्यास करने से हार्मोन्स संतुलित होते हैं। दीपक की जलती लौ पर ध्यान, प्रातःकाल के उगते सूर्य पर ध्यान, हृदय में ईष्ट देव का ध्यान आदि करने से पीनियल और पिट्यूटरी ग्रन्थि की क्रियाशीलता सन्तुलित रुप से बनी रहती है। इसी प्रकार विचारों की समरुपता का अभ्यास, योगनिद्रा का भी अन्तःस्रावी तंत्र पर, लाभकारी प्रभाव रखता है।

7. समाधि का प्रभाव

बौद्व दर्शन में महात्मा बुद्ध, आर्य अष्टांगिक मार्ग का उपदेश करते हैं। आर्य अष्टांगिक मार्ग के तीन महत्वपूर्ण अंग–प्रज्ञा, शील और समाधि हैं। इसमें समाधि शीर्ष अंग है जिसके अभ्यास से मनुष्य को परमात्मा का साक्षात्कार होने के साथ–साथ आत्मज्ञान की अनुभूति होती है। समाधि अर्थात् अपने चारों ओर सकारात्मक एवं अनुकूल वातावरण की अनुभूति करने पर शरीर के सभी हॉर्मोन्स संतुलित होते हैं। योग के अंतर्गत मनुष्य अपनी सोच–विचार को सकारात्मक बनाता हुआ, चारों ओर सकारात्मक अनुभूति करता है, जिसका सकारात्मक प्रभाव सम्पूर्ण अन्तःस्रावी तंत्र पर पड़ता है।

टिप्पणी

यूनिटगत प्रश्न 9.2

निम्न में से सत्य अथवा असत्य कथन का चयन कीजिए।

1. शरीर के स्वच्छ होने पर अन्तःस्रावी ग्रंथियों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है। ( )
2. प्रत्याहार के अभ्यास से सभी ग्रन्थियां संतुलित रूप में हार्मोन्स को स्रावित करती है। ( )
3. आसन का अंतःस्रावी ग्रंथियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। ( )
4. तनाव तथा आवेश में रहने से हार्मोन्स के संतुलन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। ( )

आपने क्या सीखा

इस यूनिट में हमने सीखा कि

- अन्तःस्रावी तंत्र के अन्तर्गत पिट्यूटरी, पीनियल, थायरॉयड–पैराथायरॉयड, थायमस, एड्रीनल, जनन ग्रन्थियां और अग्न्याशय नामक ग्रन्थियों का वर्णन आता है।
- इन ग्रन्थियों में पिट्यूटरी ग्रन्थि को मास्टर ग्रन्थि की संज्ञा दी जाती है क्योंकि इस ग्रन्थि से स्रावित होने वाले हार्मोन्स दूसरी अन्य सभी ग्रन्थियों की क्रियाशीलता को भी प्रभावित करते हैं।
- इन ग्रन्थियों से उत्पन्न हाने वाले हार्मोन्स, मानव शरीर की चयापचय दर को नियंत्रित करने का कार्य करते हैं।
- वर्तमान काल की अव्यवस्थित जीवनशैली, भौतिकवाद की अधिकता, प्रतिस्पर्धात्मक जीवनशैली, दूसरों पर अविश्वास, सामांजस्य का अभाव, झूठ, चोरी, हिंसा आदि नकारात्मक वृत्तियों का मनन–चिंतन, शरीर में हार्मोन्स को असंतुलित कर देता है, जबकि इसके विपरीत त्यागपूर्वक भोग का अनुसरण, भौतिकवाद और अध्यात्मवाद का समन्वय, योगदर्शन में वर्णित मैत्री, करूणा आदि उपायों द्वारा चित्तप्रसादन, श्रद्धा, प्रेम, निष्ठा, विश्वास, समर्पण आदि सकारात्मक भावों को धारण करने से शरीर में अन्तःस्रावी हार्मोन्स संतुलित बनते हैं।
- योगमय जीवनशैली अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम व ध्यान आदि योगांगों का पालन करने से अन्तःस्रावी तंत्र स्वस्थ, सक्रिय, निरोगी एवं रोगमुक्त रहता है।

यूनिटांत प्रश्न

1. अन्तःस्रावी तंत्र को समझाते हुए मानव शरीर में इसके महत्व पर प्रकाश डालिए।
2. मानव अन्तःस्रावी तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव की सविस्तार व्याख्या कीजिये।
3. मानव शरीर में स्थित अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का नामांकित रेखचित्र बनाते हुए सविस्तार चर्चा कीजिए।

टिप्पणी

4. निम्न पर टिप्पणियां लिखिए—

क)	पिट्यूटरी ग्रन्थि	ग)	पीनियल ग्रन्थि
ख)	थायरॉइड ग्रन्थि	घ)	अग्न्याशय ग्रन्थि

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

9.1

	क	ख
1.	चयापचय	1— d
2.	ग्रन्थि	2— c
3.	मेलाटॉनिन	3— d
4.	यकृत	4— a
5.	पिट्यूटरी	5— b

	ग		घ	ङ
1.	असत्य	1.	पिट्यूटरी	cabed
2.	असत्य	2.	वृद्धि हार्मोन, प्रोलेक्टिन	
3.	असत्य	3.	चार	
4.	सत्य	4.	मेड्यूला	
5.	सत्य	5.	पेन्क्रियाज	

9.2

1. सत्य, 2. सत्य, 3. असत्य, 4. असत्य

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक — गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान— प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान — मंजु तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव— डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान— प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान— डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0) ।
7. प्राकृतिक चिकित्सा — राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर — डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ़।

10

प्रतिरक्षा तंत्र एवं प्रजनन तंत्र की संरचना–क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, पिछली यूनिटों में आपने, रक्त परिसंचरण तंत्र और अन्तःस्रावी तंत्र के विषय में जाना। आपने जाना कि मानव शरीर में रक्त प्रतिक्षण परिभ्रमण करता रहता है और उपयोगी तथा अनुपयोगी पदार्थों का परिवहन करता हुआ शरीर में समस्थिति बनाए रखता है। इसके साथ–साथ मानव शरीर में, कुछ विशेष स्थानों पर महत्वपूर्ण रचनाएं (ग्रन्थियां) पायी जाती हैं, जो हार्मोन्स को स्रावित करने का कार्य करती हैं। हार्मोन्स मानव शरीर में स्रावित होने वाले ऐसे रासायनिक तत्व होते हैं, जो शरीर की चयापचय दर को नियंत्रित करने का कार्य करते हैं। अब यहां पर एक महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होता है कि मानव शरीर की बाहरी रोगाणुओं से सुरक्षा कौन करता है।

बाह्य वायुमण्डल में असंख्य सूक्ष्म जीव उपस्थित होते हैं। ये सूक्ष्म जीव प्रतिक्षण मानव शरीर पर आक्रमण करते रहते हैं। यद्यपि त्वचा एक प्रमुख सुरक्षा आवरण के रूप में, शरीर की रक्षा करती रहती है, किन्तु फिर भी बाह्य वातावरण से बहुत सारे सूक्ष्म जीव श्वास के माध्यम से, भोजन और जल अथवा अन्य माध्यमों से, मानव शरीर के अन्दर चले जाते हैं। इन सूक्ष्म रोगाणुओं से शरीर की सुरक्षा करने के लिए ईश्वर द्वारा मानव शरीर को एक विशेष तंत्र दिया है, जिसे शरीर प्रतिरक्षा तंत्र अथवा लसीका तंत्र की संज्ञा दी जाती है।

प्रिय शिक्षार्थियों, यह सब जानने के उपरान्त अब आपके मन में यह प्रश्न उत्पन्न होना स्वाभाविक है कि, शरीर में प्रतिरक्षा तंत्र कहां स्थित होता है? मानव प्रतिरक्षा तंत्र के कौन–कौन से अंग होते हैं और मानव शरीर में प्रतिरक्षा तंत्र किस प्रकार शरीर की सुरक्षा करता है?

टिप्पणी

तो आइए, शरीर की सुरक्षा करने वाले प्रतिरक्षा तंत्र का, सविस्तार अध्ययन करते हैं–

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

- प्रतिरक्षा तंत्र का सामान्य परिचय समझा सकेगें;
- प्रतिरक्षा तंत्र की व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे;
- प्रतिरक्षा तंत्र के अंगों का वर्णन कर सकेंगे;
- प्रतिरक्षा तंत्र के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे;
- प्रजनन तंत्र के संक्षिप्त परिचय से अवगत करा सकेंगे;
- प्रतिरक्षा तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे;
- प्रजनन तंत्र पर योग के प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे।

10.1 मानव प्रतिरक्षा तंत्र का सामान्य परिचय एवं परिभाषा

प्रिय शिक्षार्थियों, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट होता है कि, वह तंत्र जो शरीर की सुरक्षा का महत्वपूर्ण कार्य करता है, प्रतिरक्षा तंत्र कहलाता है। इसे हम इस प्रकार समझ सकते हैं–

"मानव शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र, जो बाह्य जीवाणुओं, विषाणुओं एवं रोगाणुओं से शरीर की सुरक्षा करता हुआ, शरीर को स्वस्थ एवं ऊर्जावान बनाये रखने का, महत्वपूर्ण कार्य करता है, प्रतिरक्षा तंत्र (Immunity System) कहलाता है।" इसके अन्तर्गत प्रमुख रूप से लसीका ग्रन्थियों एवं लसीका ऊतकों की संरचना एवं कार्यों का अध्ययन किया जाता है।

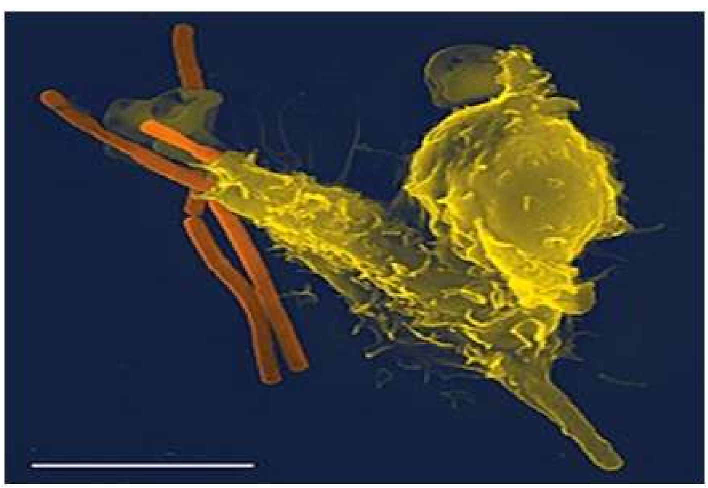

चित्र 10.1: मानव प्रतिरक्षा तंत्र

मूल रूप से स्पष्ट करें तो, प्रतिरक्षा तंत्र मानव अथवा किसी भी अन्य जीव के भीतर होने वाली उन जैविक क्रियाओं का समूह है जो पहले रोगाणुओं एवं अन्य अर्बुद कोशिकाओं की पहचान करता है और इसके उपरान्त उनके विरुद्व युद्ध करता हुआ, उन्हें मारने का कार्य करता है। मानव शरीर का यह संस्थान प्रतिरक्षा तंत्र कहलाता है।

The **immune system** is a host defense system comprising many biological structures and processes within an organism that protects against disease. To function properly, an immune system must detect a wide variety of agents, known as pathogens, from viruses to parasitic worms, and distinguish them from the organism's own healthy tissue.

प्रिय शिक्षार्थियों, इस प्रकार मानव प्रतिरक्षा तंत्र के स्वरूप को जानने एवं समझने के उपरान्त अब आपके मन में प्रतिरक्षा तंत्र के महत्वपूर्ण अंगों के विषय में, जानने की जिज्ञासा बढ़ गयी होगी, तो आइए मानव प्रतिरक्षा तंत्र के प्रमुख अंगों को जानें।

10.2 लसीका (Lymph)

लसीका रक्त प्लाज्मा के समान, स्वच्छ जल जैसा, द्रव पदार्थ होता है। इस द्रव में लसिका ग्रन्थियों से उत्पन्न लिम्फोसाइट्स (Lymphocytes) उपस्थित होती हैं। लिम्फोसाइट्स को मानव शरीर की गश्ती सेना कहा जाता है, क्योंकि लिम्फोसाइट्स सम्पूर्ण शरीर में परिभ्रमण करती हुई शरीर की सुरक्षा का कार्यभार संभालती है। लिम्फोसाइट्स में प्रमुख रूप से श्वेत रक्त कोशिकाएं (ल्यूकोसाइट्स) पायी जाती है। जिनका कार्य शरीर में उपस्थित विषाणु अथवा रोगाणु का भक्षण करना होता है। जहां पर भी अथवा जिस अंग में श्वेत रक्त कोशिकाओं को विषाणु या रोगाणु मिलता है, यह उसके चारों ओर घेरा बना देती हैं तथा उससे युद्ध करती हैं। इस युद्ध की अवस्था में शरीर का तापक्रम बढ़ जाता है। प्रायः यह अनुभव भी होता है कि शरीर में संक्रमण होने पर शरीर का तापक्रम बढ़ा हुआ रहता है।

श्वेत रक्त कोशिकाएं रोगाणुओं से तब–तक युद्ध करती रहती हैं, जब –तक कि श्वेत रक्त कोशिकाओं की विजय नहीं हो जाती। ऐसी अवस्था में श्वेत रक्त कोशिकाएं अपनी संख्याएं बढ़ाती हैं, तथा रुक–रुक कर रोगाणुओं के विरूद्ध युद्ध करती रहती हैं। हम व्यावहारिक रूप में प्रायः यह देखते हैं कि हमें एक निश्चित अन्तराल पर ही बुखार आदि आता है, तथा कुछ समय शरीर का तापक्रम सामान्य होने के बाद, तीन से छः घण्टे बाद पुनः तापक्रम बढ़ जाता है। इसका कारण यह है कि युद्ध में हार होने पर, श्वेत रक्त कोशिकाएं पुनः अपनी संख्याएं बढ़ाती हैं, तथा संख्या अधिक होने पर रोगाणुओं के विरूद्ध युद्ध करती हैं।

लसीका द्रव सम्पूर्ण शरीर में वाहिकाओं के माध्यम से परिभ्रमण करता रहता है। इन वाहिकाओं के मार्ग में कुछ निश्चित स्थानों पर छोटे–छोटे ऊतक के पिण्ड उपस्थित होते हैं। इन पिण्डों को लसीका पर्व कहा जाता है। यह लसीका पर्व गर्दन, पार्श्व भुजा (बगल) , वक्ष, उदर आदि स्थानों पर प्रमुख रूप से होते हैं। लसीका पर्व छलनी का कार्य करती हैं और लसीका द्रव को

टिप्पणी

छानती रहती हैं। इस कारण लसिका में उपस्थित हानिकारक पदार्थ यहां पर छनकर अलग हो जाता है। यही कारण होता है कि शरीर में संक्रमण होने पर, इन स्थानों पर सूजन के साथ तीव्र वेदना प्रारम्भ हो जाती है।

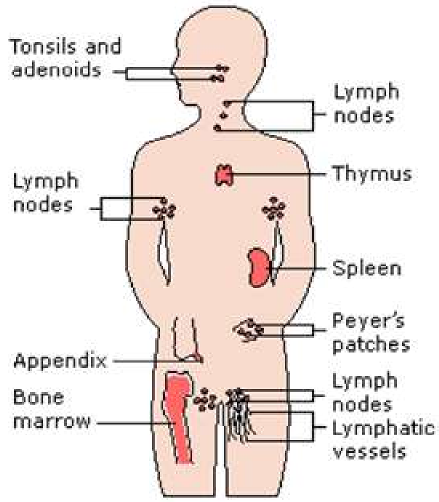

चित्र 10.2: लसिका तंत्र

मानव शरीर के लसीका तंत्र में निम्न तीन महत्वपूर्ण अंगों का समावेश होता है –

i) **प्लीहा** (Spleen) (ii) **थायमस ग्रन्थि** (Thymus Gland)

iii) **टॉन्सिल्स** (Tonsils)

10.3 प्लीहा (Spleen)

प्रिय शिक्षार्थियों, प्लीहा एक प्रमुख लसिका अंग होता है। **यह डायाफ्राम के नीचे और पेन्क्रियाज के साथ स्थित होता है**। इसका वजन 200 ग्राम तथा रंग बैंगनी होता है। प्लीहा रक्त को छानने का कार्य करती है। इस अंग में भक्षण कोशिकाएं पायी जाती हैं जो सूक्ष्म जीवाणुओं का भक्षण करती है। इसके साथ–साथ मृत लाल रक्त कोशिकाएं भी, यहीं पर रक्त से अलग कर दी जाती हैं। मृत लाल रक्त कोशिकाओं के हिमोग्लोबिन से लौह तत्व को अलग कर पुनः रक्त कण बनने हेतु, अस्थि मज्जा तक पहुँचा दिया जाता है। इसके साथ–साथ लाल रक्त कणों एवं बिम्बाणुओं का भण्डारण भी प्लीहा में ही किया जाता है, जिस कारण प्लीहा को मानव शरीर का ब्लड बैंक भी कहा जाता है।

10.4 थायमस ग्रन्थि (Thymus Gland)

प्रिय शिक्षार्थियों, थायमस हृदय के समीप स्थित, मानव शरीर की महत्वपूर्ण अन्तःस्रावी ग्रन्थि है, जो लिम्फोसाइट्स का निर्माण करती है। इस गन्थि का सीधा सम्बन्ध मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता के साथ होता है। इस ग्रन्थि के क्रियाशील रहने पर मनुष्य की रोग

प्रतिरोधक क्षमता, उन्नत बनी रहती है, जबकि इस ग्रन्थि के निष्क्रिय होने का दुष्प्रभाव, मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता पर पड़ता है और मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता क्षीण हो जाती है। एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि जन्म से लेकर यौवनारम्भ तक इस ग्रन्थि का आकार बढ़ता रहता है, जबकि आगे चलकर युवावस्था में पिट्यूटरी ग्रन्थि से कुछ ऐसे स्राव उत्पन्न होते हैं जो थायमस ग्रन्थि की क्रियाशीलता को कम कर देते हैं और इसके परिणाम स्वरूप आगे चलकर यह ग्रन्थि निष्क्रिय हो जाती है। इसके उपरान्त जीवन पर्यन्त यह ग्रन्थि एक अवशेषी अंग के रुप में मानव शरीर में बनी रहती है।

10.5 टॉन्सिल्स (Tonsils)

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्य के गले में एक जोड़ी अर्थात् दो टॉन्सिल्स उपस्थित होते हैं। मानव शरीर में टॉन्सिल्स प्रमुख प्रतिरक्षी अंग की भूमिका का वहन करते हैं। इनका कार्य मनुष्य पाचन एवं श्वसन क्रिया में उपस्थित रोगाणुओं को नष्ट करना होता है। प्रायः यह व्यावहारिक दृष्टि में भी अनुभव किया जाता है कि विकृत आहार—विहार एवं मौसम परिवर्तन के फलस्वरूप गले में स्थित टॉन्सिल को अधिक कार्य करना पड़ता है, जिस कारण इनका आकार बढ़ जाता है और इनमें सूजन के साथ वेदना, उत्पन्न हो जाती है। पुनः पुनः विकृत आहार—विहार का सेवन करने पर इन टॉन्सिल का आकार स्थाई रूप से बढ़ जाता है।

इस प्रकार उपरोक्त अंग मिलकर मानव शरीर की सुरक्षा का कार्यभार संभालते हैं।

10.6 मानव प्रजनन तंत्र की संरचना

प्रिय शिक्षार्थियों, अभी आपने मानव शरीर की सुरक्षा के विषय में पढ़ा, अब प्रजनन तंत्र के विषय में चर्चा करते हैं।

प्रत्येक प्राणी में अपनी वंशवृद्धि करने हेतु जनन क्षमता पायी जाती है, जिसके द्वारा प्राणी अपने समान प्राणी को उत्पन्न करता है। शास्त्रों में इस सृष्टि को मैथुनी सृष्टि कहा गया है। अर्थात् संसार में मैथुन क्रिया के द्वारा जीव अपनी वंश वृद्धि करते हैं। यह मैथुन क्रिया सभी सजीव प्राणधारियों में पायी जाती है।

मनुष्य में भी, अपने समान गुण, कर्म एवं स्वभाव वाली संतानों को उत्पन्न करने की क्षमता पायी जाती है, जिसे प्रजनन क्षमता (Reproduction Power) कहा जाता है। मानव शरीर का वह तंत्र, जिसके अन्तर्गत प्रजनन अंगों की संरचना एवं कार्यों का वर्णन किया जाता है, प्रजनन तंत्र (Reproductive System) कहलाता है।

मनुष्य में महिलाओं एवं पुरूषों में प्रजनन तंत्र की संरचना अलग—अलग होती है। पुरूषों में दो वृषण, दो अधिवृषण, दो शुक्रवाहिकाएँ, दो वृषणरज्जु, दो शुक्राशय, दो स्खलनीय वाहिकाएँ, एक प्रोस्टेटग्लैण्ड, दो काउपर और एक शिश्न नामक प्रजनन अंग पाये जाते हैं जबकि स्त्री प्रजनन तंत्र में दो डिम्बग्रन्थियां, गर्भाशयिक नलियाँ, गर्भाशय तथा योनि नामक प्रजनन अंगों का समावेश होता है।

टिप्पणी

10.7 मानव प्रजनन तंत्र की क्रियाविधि

प्रिय शिक्षार्थियों, मनुष्यों में पुरूष एवं स्त्री के संयोग से प्रजनन क्रिया सम्पन्न होती है। जिसके फलस्वरूप सन्तान की उत्पत्ति होती है। मनुष्य में 280 दिनों अथवा 40 सप्ताह का गर्भकाल होता है। सर्वप्रथम स्त्री और पुरूष के संयोग से एक भ्रूण (Zygote) का निर्माण होता है। इस भ्रूण में बहुत तेजी से कोशिका विभाजन (Cell Division) क्रिया चलती है, जिसके फलस्वरूप भ्रूण की कोशिकाएं तेजी से विभाजित होती हुई, मानव के शरीर का रूप ग्रहण कर लेती हैं। आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार गर्भावस्था के तीसरे से चौथे माह में भ्रूण का हृदय सक्रिय हो जाता है। तत्पश्चात् निश्चित वृद्धि को प्राप्त होता हुआ यह भ्रूण 280 दिनों अथवा नौ माह के उपरान्त एक नन्हें शिशु के रूप में जन्म लेता है।

Human Reproducive System usually involves internal fertilization by sexual intercourse. During this process, the male inserts his penis into the female's vagina and ejaculates semen, which contains sperm. A small portion of the sperm pass through the cervix into the uterus and then into the fallopian tubes for fertilization of the ovum. Only one sperm is required to fertilize the ovum. Upon successful fertilization, the fertilized ovum or zygote, travels out of the fallopian tube and into the uterus, where it implants in the uterine wall. This marks the beginning of gestation, better known as Pregnancy, which continues for nine months as the foetus develops. When the foetus has developed to a certain point, Pregnancy is concluded with childbirth.

10.8 मानव प्रतिरक्षा तंत्र एवं प्रजनन तंत्र पर योग का प्रभाव

स्वास्थ्य शरीर की वह सकारात्मक अवस्था है, जिसमें शरीर के सभी अंग–अवयव और तंत्र अपने सामान्य कार्यों को सामान्य रुप से सम्पादित करते रहते हैं और बाहरी वातावरण के साथ मनुष्य का तालमेल सुव्यवस्थित रुप से बना रहता है। स्वास्थ्य की इस अवस्था को परिभाषित करते हुए मानव स्वास्थ्य संगठन कहता है –

Health is a state of complete Physical, Mental and Social well being and not merely the absence of disease or infirmity.

अर्थात् केवल रोगों की अनुपस्थिति मात्र को ही स्वास्थ्य नहीं कहा जा सकता है, अपितु स्वास्थ्य तो वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक स्तर पर पूर्ण रूप से स्वस्थ हो।

इस अवस्था को प्राप्त करने में प्रतिरक्षा तंत्र का बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। वर्तमान काल में अनियमित दिनचर्या, विकृत खान–पान, चारों और बढ़ता प्रदूषण और तनावयुक्त सोच–विचार का सबसे ज्यादा दुष्प्रभाव, मनुष्य की प्रतिरक्षा प्रणाली और प्रजनन तंत्र पर पड़ा है। इन कारकों के परिणामस्वरूप मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता क्षीण हो जाती है, जिससे मनुष्य नित नये–नये रोगों से ग्रस्त होता जा रहा है। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर होने के कारण, संक्रामक रोगों का प्रभाव समाज पर, दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा

है। यहाँ महत्वपूर्ण बिन्दु यह भी है कि प्रायः संक्रामक रोगों से बचने के लिए एंटीबायोटिक दवाइयों का प्रयोग किया जाता है किन्तु एंटीबायोटिक दवाइयों का मनुष्य के प्रतिरक्षा तंत्र पर बहुत नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इन दवाइयों के प्रयोग से प्रतिरक्षा तंत्र कमजोर हो जाता है। यहां पर यौगिक क्रियाओं का अभ्यास मनुष्य के प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत बनाने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका वहन करता है। यौगिक क्रियाओं के अभ्यास से मनुष्य, जीवन में स्वच्छता को धारण करने और पथ्य आहार का सेवन करने से, मनुष्य जीवन पर्यन्त संक्रामक रोगों से मुक्त और स्वस्थ बना रहता है।

अष्टांग योग के प्रथम दो अंग– यम और नियम का पालन करने से, मनुष्य की मानसिक ऊर्जा और आत्मबल, उन्नत अवस्था में बना रहता है, जिसका सकारात्मक प्रभाव प्रतिरक्षा तंत्र पर पड़ता है। नकारात्मक चिन्तन एवं नकारात्मक भाव जैसे– असत्य, चोरी और हिंसा आदि के भावों का मनन चिन्तन करने से शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली में, विकार उत्पन्न हो जाते हैं। यम का चौथा भाग ब्रह्मचर्य, शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र पर सीधा प्रभाव रखता है। अथर्ववेद में ब्रह्मचर्य के फल पर प्रकाश डालते हुए स्पष्ट किया गया है –

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाध्नत।।

(अथर्ववेद)

अर्थात् ब्रह्मचर्य व्रत के तप से देवताओं ने मृत्यु को जीत लिया।

इसी प्रकार नियम के अन्तर्गत शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान का वर्णन आता है। शौच का अभिप्रायः शुद्धिकरण अर्थात् स्वच्छता से है। शौच के अभाव में गन्दगी में रहने से प्रतिरक्षा तंत्र कमजोर हो जाता है और नाना प्रकार के शारीरिक तथा मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं। सन्तोष से सर्वोत्तम अर्थात् सबसे उत्तम सुख की प्राप्ति होती है। तप, व्रत और उपवास धारण करने से शरीर और मन से अशुद्धियों का नाश होता है और शरीर–मन शुद्ध तथा पवित्र बनते हैं। स्वाध्याय ज्ञान प्राप्त करने का श्रेष्ठ साधन है जिससे ईष्ट देव प्रसन्न होते हैं और ईश्वर प्रणिधान से मनुष्य सर्वत्र ईश्वरीय सत्ता की अनुभूति करता हुआ समाधि सुख को प्राप्त करता है। इस प्रकार यम–नियम का पालन मनुष्य को शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करता है। इसका सकारात्मक प्रभाव सम्पूर्ण शरीर और मन पर पड़ता है।

यूनिटगत प्रश्न 10.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. ....को मानव शरीर का ब्लड बैंक कहा जाता है।
2. मनुष्य के गले में टॉन्सिल्स की संख्या .... होती है।

3. मनुष्य में गर्भकाल .... सप्ताह होता है।
4. प्लीहा .... को छानने का कार्य करती है।
5. अथर्ववेद के अनुसार .... के तप से देवताओं ने मृत्यु को जीत लिया।

ख) बहुविकल्पीय प्रश्न

1) कौन सा तंत्र बाह्य जीवाणुओं, विषाणुओं एवं रोगाणुओं से शरीर की सुरक्षा करता है

a) पाचन तंत्र	b) उत्सर्जन तंत्र
c) प्रजनन तंत्र	d) प्रतिरक्षा तंत्र

2) स्वास्थ्य के किस पक्ष का वर्णन W.H.O. ने अपनी परिभाषा में नहीं किया है

a) शारीरिक स्वास्थ्य	b) आध्यात्मिक स्वास्थ्य
c) मानसिक स्वास्थ्य	d) सामाजिक स्वास्थ्य

3) मानव शरीर में किस ग्रन्थि को बाल्यावस्था की ग्रन्थि कहा जाता है

a) थायमस	b) पिट्यूटरी
c) थायरॉयड	d) एड्रीनल

4) महर्षि पतंजलि कृत अष्टांग योग का प्रथम अंग, क्या है

a) आसन	b) प्राणायाम
c) यम	d) ध्यान

5) कौन सी रक्त कोशिकाएं, मानव शरीर की सुरक्षा का कार्य करती हैं

a) आर0 बी0 सी0	b) डब्लू0 बी0 सी0
c) प्लेट्लेट्स	d) न्यूरॉन

आपने क्या सीखा

प्रिय शिक्षार्थियों, इस यूनिट में हमने सीखा कि,

- प्रतिरक्षा तंत्र (Immunity System) बाह्य जीवाणुओं, विषाणुओं एवं रोगाणुओं से शरीर की सुरक्षा करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। इस कार्य के परिणामस्वरूप शरीर, स्वस्थ एवं ऊर्जावान बना रहता है।
- इस तंत्र के अन्तर्गत प्रमुख रूप से लसीका ग्रन्थियों एवं लसीका ऊतकों की संरचना एवं कार्यों का अध्ययन किया जाता है।

टिप्पणी

- मनुष्य में भी अपने समान गुण, कर्म एवं स्वभाव वाली संतानों को उत्पन्न करने की क्षमता प्रदान करने वाला संस्थान प्रजनन तंत्र कहलाता है।
- मनुष्य में पुरुष एवं महिला में अलग–अलग प्रजनन अंग पाये जाते हैं। इनकी संरचना एवं कार्यों का अध्ययन प्रजनन तंत्र में किया जाता है।
- मनुष्य में 40 सप्ताह अथवा 280 दिनों का गर्भकाल होता है।
- योगाभ्यास, उपयुक्त आहार–विहार और संयमित जीवनचर्या के द्वारा मनुष्य का प्रतिरक्षा तंत्र एवं प्रजनन तंत्र स्वस्थ एवं उन्नत बना रहता है।
- जीवन में सकारात्मक दृष्टिकोण को अपनाते हुए योग की क्रियाओं का नियमित अभ्यास करने से मनुष्य के प्रतिरक्षा एवं प्रजनन तंत्र जीवन पर्यन्त स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बने रहते हैं।

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव प्रतिरक्षा तंत्र को समझाते हुए, इसके महत्व पर प्रकाश डालिए।
2. मानव प्रतिरक्षा तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव की, सविस्तार व्याख्या कीजिये।
3. निम्न पर टिप्पणियां लिखिए–

   क) मानव प्रजनन तंत्र की क्रियाविधि ग) प्रजनन तंत्र पर योग का प्रभाव

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

10.1

क		ख
1–	प्लीहा	1– d
2–	दो	2– b
3–	40	3– a
4–	रक्त	4– c
5–	ब्रह्मचर्य	5– b

टिप्पणी

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजु तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0)।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ।

टिप्पणी

11

तंत्रिका तंत्र की संरचना–क्रियाविधि एवं योग के प्रभाव

प्रिय शिक्षार्थियों, आपने रक्त परिसंचरण तंत्र और अन्तःस्रावी तंत्र के विषय में जाना। आप समझ चुके हैं कि, मानव शरीर में रक्त प्रतिक्षण परिभ्रमण करता रहता है और उपयोगी तथा अनुपयोगी पदार्थों का परिवहन करता हुआ, शरीर में समस्थिति बनाए रखता है। इसके साथ–साथ मानव शरीर में कुछ विशेष स्थानों पर महत्वपूर्ण रचनाएं (ग्रन्थियां) पायी जाती हैं, जो हार्मोन्स को स्रावित करने का कार्य करती हैं। हार्मोन्स मानव शरीर में स्रावित होने वाले ऐसे रासायनिक तत्व होते हैं, जो शरीर की चयापचय दर को नियंत्रित करने का कार्य करते हैं। मानव शरीर में स्थित टॉन्सिल्स और लिम्फ ग्रन्थियां, बाहरी रोगाणुओं से शरीर की सुरक्षा का कार्यभार संभालती है। अर्थात् यह स्पष्ट होता है कि मानव शरीर की प्रत्येक कोशिका, प्रत्येक अंग और प्रत्येक तंत्र का अपना एक विशिष्ट महत्व (Each Organ and System has its unique importance in Human Body) होता है। मानव शरीर के तंत्रों के विषय में यह कहना बहुत कठिन है कि, शरीर का कौन सा तंत्र अधिक महत्वपूर्ण होता है, किन्तु तंत्रिका तंत्र इसलिए बहुत अधिक महत्वपूर्ण कहा जा सकता है, क्योंकि मानव शरीर के अन्य सभी तंत्रों को नियंत्रित एवं समायोजित (Control and Co ordination) करने का महत्वपूर्ण कार्य तंत्रिका तंत्र ही करता है।

मानव तंत्रिका तंत्र एक जटिल एवं महत्वपूर्ण तंत्र होता है जो, मानव शरीर की समस्त ऐच्छिक और अनैच्छिक क्रियाओं को नियंत्रित करने का कार्य करता है। यह शरीर के समस्त आन्तरिक अंगों पर नियंत्रण रखता है। इसके साथ–साथ मनुष्य द्वारा किये जाने वाले सभी कार्य भी तंत्रिका तंत्र के द्वारा ही नियंत्रित होते हैं। अतः यह तथ्य मानव शरीर में तंत्रिका तंत्र के महत्व को स्पष्ट करता है।

टिप्पणी

प्रिय शिक्षार्थियों, यह सब जानने के उपरान्त अब आपके मन में यह प्रश्न आना, अत्यन्त स्वाभाविक है कि, शरीर में तंत्रिका तंत्र कहां स्थित होता है? मानव तंत्रिका तंत्र के कितने भाग होते हैं? यह किस प्रकार शरीर को नियंत्रित करने का, कार्य करता है? आइए, इस यूनिट में अब मनुष्य की समस्त क्रियाओं को नियंत्रित एवं समायोजित करने वाले अत्यन्त विशिष्ट उक्त तंत्र का सविस्तार अध्ययन करते हैं–

उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के बाद आप –

- तंत्रिका तंत्र का सामान्य परिचय वर्णन कर सकेगें;
- तंत्रिका तंत्र की व्याख्या करने में सक्षम हो सकेंगे;
- तंत्रिका तंत्र का वर्गीकरण कर सकेंगे;
- तंत्रिका तंत्र के महत्व पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- तंत्रिका तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे।

11.1 तंत्रिका तंत्र का सामान्य परिचय एवं परिभाषा

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव तंत्रिका तंत्र को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है–

"शरीर का वह महत्वपूर्ण तंत्र जो समस्त ऐच्छिक–अनैच्छिक, आन्तरिक तथा बाह्य क्रियाओं को नियंत्रित, नियमित और समायोजित करने का कार्य करता है, तंत्रिका तंत्र कहलाता है।"

मस्तिष्क, स्पाइनल कॉर्ड एवं सभी तंत्रिकाएं, जो इन अंगों को शेष शरीर के साथ जोड़ती हैं, मिलकर तंत्रिका तंत्र का निर्माण करती हैं। ये अंग आपस में एक दूसरे के साथ मिलकर संवेदनाओं को ग्रहण करने और शरीर पर नियंत्रण व नियमन करते हैं। ब्रेन तथा स्पाइनल कॉर्ड मिलकर कन्ट्रोल सेंटर बनाते हैं, जिसे केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र कहते हैं, जहाँ सूचना का परीक्षण कर, निर्णय दिया जाता है। संवेदी अंग व संवेदी तंत्रिकाएं, शरीर के बाहर एवं अंदर स्थितियों की निगरानी करते हैं और केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र को संदेश भेजते हैं।

The Nervous System consists of the Brain, Spinal cord and all of the Nerves that connect these organs with the rest of the Body. Together, these organs are responsible for the Control of the body and Communication among its parts and environment. The Brain and Spinal Cord form the Control Center known as the Central Nervous System (CNS), where information is evaluated and decisions made. The Sensory Nerves and Sense Organs of the Peripheral Nervous System (PNS) monitor conditions inside and outside of the Body and send this information to the CNS.

मनुष्य का तंत्रिका तंत्र, शरीर की सभी क्रियाओं का नियंत्रण, नियमन एवं समन्वय करता है। नियंत्रण (Control) से अभिप्राय, शरीर के अंगों के आदेशों, निर्देशों तथा नियमों के अनुरूप कार्य करने से, नियमन (Regulate) से अभिप्राय, अंगों का सुव्यवस्थित रूप में कार्य करने से एवं समन्वय (Co ordination) से अभिप्राय, अंगों का एक–दूसरे के साथ सही प्रबन्धन करने अथवा दो या अधिक अंगों को साथ मिलाकर कार्य करने से है। तंत्रिका तंत्र उपरोक्त तीनों क्रियाओं को बहुत सहजता और सरलतापूर्वक करता हुआ, शरीर में सम स्थिति (Homeostasis) बनाये रखता है। बाह्य वातावरण से संवेदनाओं, प्रेरणाओं एवं उद्दीपनों (Stimulus) को ग्रहण करना तथा उसके उत्तर में विभिन्न अनुक्रियाएं करना, तंत्रिका तंत्र का प्रमुख कार्य होता है। यह बाह्य वातावरण के परिवर्तनों को, त्वचा में स्थित संवेदी तंत्रिकाओं के माध्यम से ग्रहण करता है तथा इनकी सूचना मस्तिष्क को पहुंचाता है। इसकी अनुक्रिया के रूप में, मस्तिष्क से प्राप्त आदेशों को, तंत्रिकाओं के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर में विस्तारित करना तंत्रिका तंत्र का कार्य है। यह श्वसन, पाचक एन्जाइम्स उत्पन्न करना, याददाश्त और बुद्धिमता पर भी नियंत्रण रखता है।

The Human Nervous System controls everything from Breathing and Producing Digestive Enzymes, to Memory and Intelligence. It conducts Stimuli from Sensory Receptors to the Brain and Spinal cord and that conducts Impulses back to other parts of the Body. The Nervous System includes both the Central Nervous System and Peripheral Nervous System. The Central Nervous System is made up of the Brain and Spinal Cord and the Peripheral Nervous system is made up of the Somatic and the Autonomic Nervous systems.

मानव तंत्रिका तंत्र की मूलभूत इकाई न्यूरॉन (Neuron) कहलाती है। न्यूरॉन से मिलकर तंत्रिकाओं (Nerves) का निर्माण होता है।

11.2 मानव तंत्रिका तंत्र का वर्गीकरण

प्रिय शिक्षार्थियों, अध्ययन हेतु रचना एवं कार्यों के आधार पर मानव तंत्रिका तंत्र को निम्न तीन भागों में बांटा जाता है–

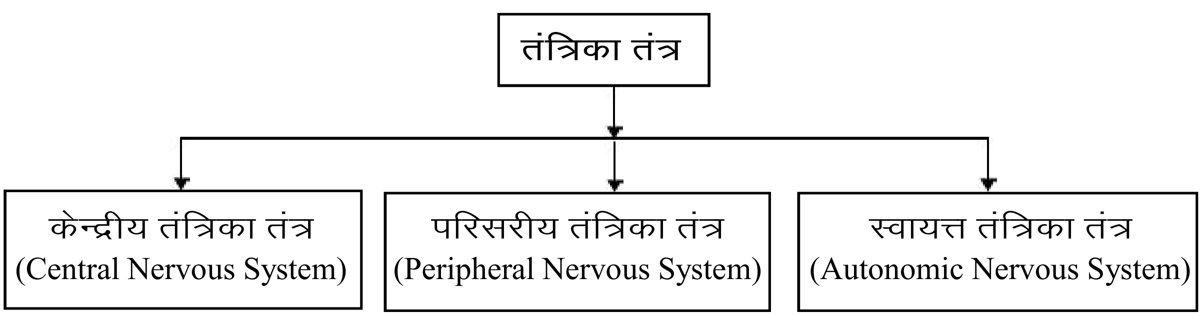

चित्र 11.1: तंत्रिका तंत्र

टिप्पणी

11.2.1 केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (Central Nervous System)

प्रिय शिक्षार्थियों, केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के अन्तर्गत मानव मस्तिष्क (Brain) एवं सुषुम्ना (Spinal Cord) का समावेश होता है। तंत्रिका तंत्र का सबसे महत्वपूर्ण भाग केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (Central Nervous System) होता है जो मूल रुप से सभी सूचनाओं को ग्रहण करने के उपरान्त चिन्तन–मनन करता हुआ समस्त निर्णय लेता है। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में दो महत्वपूर्ण अंगों– मस्तिष्क एवं सुषुम्ना का समावेश होता है।

i) मानव मस्तिष्क (Human Brain) (ii) सुषुम्ना (Spinal Cord)

इन अंगों की संरचना एवं कार्यों का वर्णन इस प्रकार है–

11.2.1.1 मानव मस्तिष्क (Human Brain)

मनुष्य के शीर्ष प्रदेश (Head Region) में एक बड़ी अखरोट (Walnut) के समान आकार वाली रचना स्थित होती है, जिसे मस्तिष्क (Brain) कहा जाता है। मस्तिष्क मानव शरीर की सबसे उत्कृष्ट (Superior) रचना होती है, जो ज्ञानशक्ति, इच्छाशक्ति और संकल्पशक्ति का केन्द्र होता है। यह कम्प्यूटर से भी तेज प्रतिक्रिया (Quick Response) देने में सक्षम होता है। मानव मस्तिष्क शरीर के भार का 2 प्रतिशत होता है। इसका सामान्य वजन पुरुषों में 1350 ग्राम (1.3 Kg to 1.4 Kg) एवं महिलाओं में 1250 ग्राम होता है। चूंकि यह शरीर की अत्यन्त महत्वपूर्ण रचना होती है अतः इसे सुरक्षा प्रदान करने हेतु इसके चारों ओर अस्थियों का मजबूत आवरण कपाल (Cranium) स्थित होता है, जो इसे बाह्य आघातों एवं चोट आदि से बचाने का कार्य करता है। मानव मस्तिष्क का विकास जीवन के प्रथम पांच वर्ष की आयु तक बहुत तेजी से होता है। इस आयु के उपरान्त यह एक निश्चित आकार ग्रहण कर लेता है एवं इसके उपरान्त यह लगभग स्थिर सा हो जाता है। आगे चलकर पचास वर्ष की आयु के उपरान्त मस्तिष्क में सिकुड़न उत्पन्न होने लगती है, जिसके फलस्वरूप विस्मरण अर्थात् भूलना, निष्क्रियता और तीव्र निर्णय लेने में कठिनाई जैसी जटिलताएं उत्पन्न होने लगती हैं।

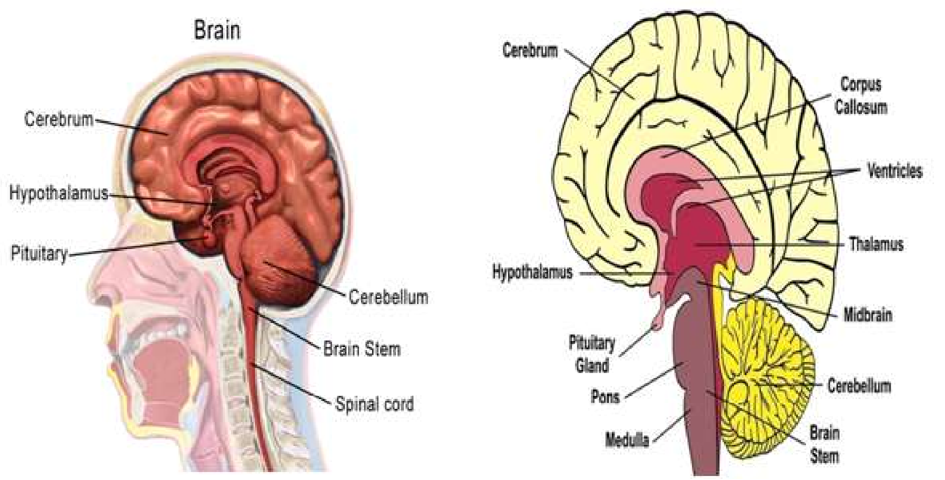

चित्र 11.2: मानव मस्तिष्क की संरचना

टिप्पणी

मानव मस्तिष्क की मूल रचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई न्यूरॉन कहलाती है। लगभग एक खरब (100 Billions) न्यूरॉन मिलकर मानव मस्तिष्क का निर्माण करते हैं। न्यूरॉन में सबसे कम पुनरुद्भवन क्षमता होती है अर्थात् एक बार नष्ट होने के उपरान्त यह कोशिकाएं पुनः बहुत देर से निर्मित होती हैं। मस्तिष्क में कुछ गहरी धारियां उपस्थित होती हैं। मानव मस्तिष्क की संरचना का अध्ययन निम्न तीन भागों में बांटकर किया जाता है—

A Human Brain is composed of three main parts- the Forebrain, the Midbrain and the Hindbrain. These three parts have specific functions.

मस्तिष्क (Brain)

(क) अग्रभाग (Fore Brain)	(ख) मध्य मस्तिष्क (Mid Brain)	(ग) पश्च मस्तिष्क (Hind Brain)
This consists of the cerebrum, hypothalamus, and thalamus.	Consists of the tectum and tegmentum.	Hindbrain: consists of the cerebellum, medulla, and pons.

चित्र 11.3: मस्तिष्क

क) अग्रभाग (Fore Brain)

मस्तिष्क के अग्र भाग में गुम्बज की तरह होता है जिसे प्रमस्तिष्क (Cerebrum) कहा जाता है। यह मानव मस्तिष्क का सबसे बड़ा भाग होता है। (The Cerebrum is the largest part of the Human Brain).

यह मस्तिष्क का बहुत महत्वपूर्ण भाग होता है जिसके द्वारा विभिन्न चेतन एवं अचेतन क्रियाएं संचालित एवं नियंत्रित की जाती हैं। प्रमस्तिष्क बुद्धि, इच्छा, आवेग एवं स्मरण शक्ति जैसी उन्नत क्षमताओं का स्थल है। इसके साथ—साथ सोचना, समझना, सीखना तथा निर्णय लेना आदि का नियंत्रण भी अग्रमस्तिष्क के इसी भाग द्वारा संचालित होता है। मस्तिष्क के इस भाग में निम्नलिखित संवेदनाओं के केन्द्र होते हैं—

1. सेरीब्रम से वेदना, शीत, ताप, दबाव, स्पर्श तथा पेशियों की संवेदनाओं की अनुभूति होती है।
2. सोच—विचार एवं चिन्तन—मनन का केन्द्र सेरीब्रम होता है।
3. मस्तिष्क के सेरीब्रम भाग से बोलने की क्रिया नियंत्रित होती है।
4. सेरीब्रम से बाह्य वस्तुओं को देखने की संवेदनाएं ग्रहण की जाती है।
5. सेरीब्रम से स्वाद एवं गन्ध की संवेदनाएं ग्रहण की जाती है।

टिप्पणी

मस्तिष्क के अग्र भाग में ही थेलेमस (Thalamus) और हाइपोथेलेमस (Hypothalamus) नामक दो भाग स्थित होते हैं। थेलेमस सेरीब्रम से प्राप्त होने वाले संवेगों को मस्तिष्क के अलग–अलग भागों तक पहुंचाने का कार्य करता है। जबकि हाइपोथेलेमस अनुकम्पी और परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र को नियंत्रित करने का कार्य करता है। हाइपोथेलेमस मानव शरीर के तापक्रम, भूख और प्यास का नियंत्रण केन्द्र होता है। इसके साथ–साथ हाइपोथेलेमस वही भाग है जहां पिट्यूटरी नामक मास्टर ग्रन्थि उपस्थित होती है। मस्तिष्क का यह भाग पिट्यूटरी ग्रन्थि के साथ समन्वय स्थापित करता है। इस भाग अर्थात् हाइपोथेलेमस में ही शरीर की जैविक घड़ी (Circadian Clock) स्थित होती है जो सम्पूर्ण शरीर में कोशिकाओं की क्रियाशीलता को नियंत्रित और नियमित करने का महत्वपूर्ण कार्य करती है।

The Hypothalamus is a small and important part of the Brain, located exactly below the Thalamus of the limbic system within the Cerebrum. It is considered as a most important region of the brain which Coordinating the messages from the Autonomous Nervous System.

ख) मध्यभाग (Mid Brain)

मध्य मस्तिष्क अग्रमस्तिष्क और पश्चमस्तिष्क के बीच का भाग है। इसका संबंध देखने एवं सुनने की क्रिया से होता है। यह आँखों एवं कानों से सवेंदनाओं को ग्रहण करने के उपरान्त इन संवेदनाओं को सेरीब्रम तक पहुँचाने का कार्य करता है। सेरीब्रम प्राप्त संवेदनाओं पर चिन्तन और मनन करने का कार्य करता है।

ग) पश्चभाग (Hind Brain)

यह मस्तिष्क का, सबसे पीछे वाला भाग होता है, जिसमें पोन्स, मेड्यूला ऑब्लॉन्गाटा तथा अनुमस्तिष्क (सेरीबेलम) का समावेश होता है। (The Cerebellum is the second Largest part of the Brain which is located in the posterior portion of the Medulla and Pons).

खांसी आना, छींकना, निगलना, वमन, आदि प्रतिवर्ती क्रियाओं का नियंत्रण केन्द्र 'पोन्स' होता है। मेड्यूला ऑब्लॉन्गाटा ह्रदय गति एवं श्वसन तंत्र (Heart Beat and Breathing Rate) को नियंत्रित करने का कार्य करता है। इसके साथ–साथ मेड्यूला ऑब्लॉन्गाटा में निद्रा, जागरण एवं भोजन करते समय लार स्रावण के भी केन्द्र होते हैं। अर्थ यह है कि मस्तिष्क के इस भाग से उपरोक्त महत्वपूर्ण क्रियाएं संचालित होती हैं। मस्तिष्क के भाग सेरीबेलम का ऐच्छिक पेशियों पर नियंत्रण होता है। शरीर की मुद्राओं, पेशियों के तनावों एवं संधियों पर नियंत्रण मस्तिष्क के इसी भाग से होता है।

मानव मस्तिष्क को पोषण प्रदान करने के लिए इसमें सेरीब्रो स्पाइनल द्रव (Cerebro Spinal Fluid) भरा होता है। एक मनुष्य में लगभग 720 मिलीलीटर प्रतिदिन की दर से यह द्रव स्रावित होता है। इस द्रव में प्रोटीन, ग्लूकोज, यूरिया, यूरिक एसिड, सल्फेट एवं

फास्फेट आदि तत्व उपस्थित होते हैं। यह द्रव मस्तिष्क को पोषण (Nutrition) प्रदान करने का कार्य करता है। मानव मस्तिष्क को प्रतिक्षण क्रियाशील रहने के लिए ऊर्जा की निरन्तर आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए सेरीब्रो स्पाइनल द्रव के माध्यम से मस्तिष्क को निरन्तर ऑक्सीजन एवं अन्य पोषक तत्वों की आपूर्ति की जाती रहती है। महत्वपूर्ण तथ्य है कि शरीर द्वारा उपयोग में लाई गई कुल ऑक्सीजन का 20 प्रतिशत भाग मस्तिष्क द्वारा ही प्रयोग किया जाता है जबकि हृदय द्वारा पम्प किए गए कुल रक्त का 17 प्रतिशत भाग मस्तिष्क में पहुँचता है। यह तथ्य मानव शरीर में मस्तिष्क की उत्कृष्टता को सिद्ध करता है।

11.2.1.2 सुषुम्ना (Spinal Cord)

प्रिय शिक्षार्थियों, मानव मेरूरज्जु अथवा रीढ़ के आन्तरिक भाग को सुषुम्ना (Spinal Cord) कहा जाता है। मानव मेरूरज्जु 26 कशेरूकाओं से मिलकर बना अंग होता है जो पृष्ठ भाग में सिर से लेकर नितम्ब तक फैला होता है। इस मेरूरज्जु के अन्दर दृढ़ रस्सी की भाँति तंत्रिकाओं से बनी सुषुम्ना उपस्थित होती है। वयस्क मनुष्य में सुषुम्ना की लम्बाई 45 सेण्टीमीटर होती है। सुषुम्ना का निर्माण श्वेत एवं भूरे द्रव्य (White & Grey Matter) से होता है। इसमें प्रेरक एवं संवेदी (Motor & Sensory Nerves) तन्तु उपस्थित होते हैं। यह तन्तु संवेदनाओं को ग्रहण कर मस्तिष्क तक पहुंचाने का कार्य करते हैं। सुषुम्ना का कार्य सम्पूर्ण शरीर से प्राप्त संवेदनाओं को मस्तिष्क तक पहुंचाना होता है। इसके साथ–साथ शरीर की सभी ऐच्छिक पेशियों की गति भी सुषुम्ना से सम्बन्धित होती है। शरीर की कार्य करने की मुद्रा, शरीर का संतुलन एवं चलने का ढंग आदि में सुषुम्ना बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सुषुम्ना से ही मनुष्य के शरीर का संतुलन एवं चाल निर्धारित होती है।

इस प्रकार मानव मस्तिष्क एवं सुषुम्ना मिलकर केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में निर्माण करते हैं और विभिन्न महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करते हैं।

11.2.2 परिसरीय तंत्रिका तंत्र (Peripheral Nervous System)

प्रिय शिक्षार्थियों, परिसरीय तंत्रिका तंत्र के अन्तर्गत मस्तिष्क से निकलने वाली 12 जोड़ी कपालीय तंत्रिकाओं (12 pairs Cranial Nerves) एवं सुषुम्ना से निकलने वाली 31 जोड़ी सुषुम्नीय तंत्रिकाओं (31 pairs Spinal Nerves) का समावेश होता है। मस्तिष्क से 12 जोड़ी तंत्रिकाएं एवं सुषुम्ना से 31 जोड़ी तंत्रिकाएं निकलकर सम्पूर्ण शरीर के विभिन्न अंगों एवं ऊतकों तक फैल जाती हैं। इन तंत्रिकाओं का कार्य अंगों एवं ऊतकों से संवेदनाओं का ग्रहण कर मस्तिष्क तक पहुंचाना होता है एवं मस्तिष्क से प्राप्त आदेशों को प्रेषित करना होता है। मानव शरीर में पाई जाने वाली इन तंत्रिकाओं के निम्नलिखित तीन वर्ग होते हैं–

क) संवेदी तंत्रिकाएं (Sensory Nerves)

ख) प्रेरक तंत्रिकाएं (Motor Nerves)

ग) मिश्रित तंत्रिकाएं (Mixed Nerves)

टिप्पणी

क) **संवेदी तंत्रिकाएं–** तंत्रिकाओं का वह वर्ग जो संवेदनाओं को ग्रहण करने की क्षमता रखता है, संवेदी तंत्रिकाएं कहलाती हैं। ये तंत्रिकाएं प्रायः त्वचा में पायी जाती हैं तथा बाह्य वातावरण से संवेदनाओं को ग्रहण करने का कार्य करती हैं।

ख) **प्रेरक तंत्रिकाएं–** तंत्रिकाओं का वह वर्ग जो संवेदनाओं को वहन करने का कार्य करता है, प्रेरक तंत्रिकाएं कहलाती हैं। ये तंत्रिकाएं आवेगों को मस्तिष्क एवं स्पाइनलकोर्ड से लेकर जाने का कार्य करती हैं।

ग) **मिश्रित तंत्रिकाएं–** तंत्रिकाओं का वह वर्ग जो उपरोक्त दोनों कार्यों को करने में सक्षम होता है, मिश्रित तंत्रिकाएं कहलाती हैं।

मनुष्य के मस्तिष्क से 12 जोड़ी कपालीय तंत्रिकाएं निकलती हैं। इनमें संवेदी, प्रेरक एवं मिश्रित अर्थात् तीनों प्रकार की तंत्रिकाएं होती हैं। इन तंत्रिकाओं का ज्ञानेन्द्रियों से सीधा सम्बन्ध होता है। यह ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान एवं संवेदनाओं को मस्तिष्क तक पहुंचाने का कार्य करती हैं। इसी प्रकार मनुष्य की रीढ़ अर्थात सुषुम्ना से 31 जोड़ी सुषुम्नीय तंत्रिकाएं निकलती हैं, जो सुषुम्ना से निकलकर सम्पूर्ण शरीर में फैली होती हैं। इन तंत्रिकाओं का एक विच्छिन जाल सम्पूर्ण मानव शरीर में फैला होता है तथा इनके अन्तिम सिरे हाथों एवं पैरों में स्थित होते हैं।

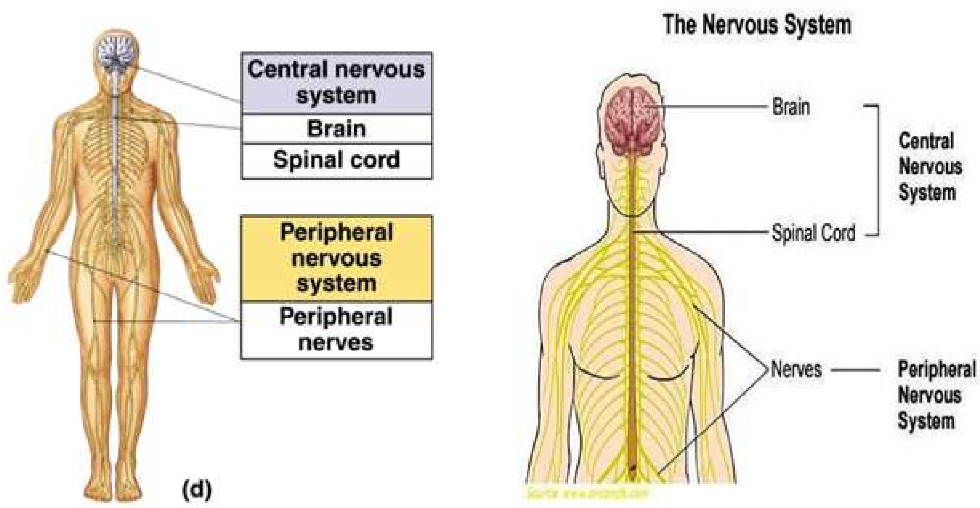

चित्र 11.4: केन्द्रीय और परिसरीय तंत्रिका तंत्र

हाथों एवं पैरों से प्राप्त सूचनाएं इन्हीं तंत्रिकाओं द्वारा सुषुम्ना के माध्यम से मस्तिष्क को प्राप्त होती है। इसी प्रकार मस्तिष्क से प्राप्त आदेश सुषुम्ना के माध्यम से इन्हीं तंत्रिकाओं द्वारा सम्पूर्ण शरीर में प्रेषित किये जाते हैं। इन तंत्रिकाओं का सम्बन्ध शरीर की समस्त ऐच्छिक एवं अनैच्छिक पेशियों से होता है जिनके द्वारा विभिन्न ऐच्छिक एवं अनैच्छिक कार्य सम्पन्न होते हैं।

11.2.3 स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (Autonomic Nervous System)

प्रिय शिक्षार्थियों, तंत्रिका तंत्र का एक महत्वपूर्ण भाग स्वायत्त तंत्रिका तंत्र होता है जो शरीर में स्वतः होने वाली क्रियाओं को संचालित एवं नियंत्रित करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। यह तंत्र अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के साथ समन्वय स्थापित करते हुए कार्य करता है। तंत्रिका तंत्र का यह भाग वातावरणीय दशाओं एवं मानसिक स्थिति (सोच–विचार) के अनुरुप शरीर की चयापचय दर को परिवर्तित करता रहता है। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के निम्न दो भाग होते हैं–

i) अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र (Sympathetic Nervous System)

ii) परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र (Parasympathetic Nervous System)

उपरोक्त दोनों भाग क्रियात्मक रूप से शरीर पर एक–दूसरे के विपरीत प्रभाव रखते हैं और शरीर में समस्थिति बनाये रखने का कार्य करते हैं। अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र तनाव अथवा उत्तेजना की स्थिति में सक्रिय होता है जबकि परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र विश्राम अथवा निष्क्रियता की अवस्था में सक्रिय होता है। इनका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है–

11.2.3.1 अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र (Sympathetic Nervous System)

अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र के सक्रिय होने पर शरीर में निम्न लक्षण उत्पन्न होते हैं –

1. रक्त वाहिनियों में संकुचन उत्पन्न होता है, जिससे रक्तचाप एवं शारीरिक उत्तेजना बढ़ जाती है।

2. स्वेद ग्रन्थियों की क्रियाशीलता बढ़ जाती है, जिससे त्वचा में पसीना उत्पन्न होता है।

3. पाचन क्रिया मन्द पड़ जाती है एवं भोजन के पाचन की क्रिया मन्द होने के साथ भूख की अनुभूति नहीं होती है।

4. ग्लाइकोजन अधिक मात्रा में टूटकर रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ा देता है, जिससे शरीर ऊर्जावान हो जाता है और कार्य करने में ऊर्जा की कमी नहीं होती है।

5. नेत्र की मांसपेशियां फैल जाती हैं जिससे शारीरिक सक्रियता बढ़ जाती है।

6. ऐच्छिक पेशियाँ अधिक सक्रिय हो जाती हैं जिसके फलस्वरूप शारीरिक थकान दूर हो जाती है एवं मनुष्य कार्यों के प्रति अधिक सचेत और सक्रिय हो जाता है।

7. हृदय गति एवं श्वास गति बढ़ने के साथ शरीर की चयापचय दर में वृद्धि हो जाती है।

   इस प्रकार अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र शरीर एवं शारीरिक क्रियाओं पर उत्तेजक प्रभाव रखता है।

टिप्पणी

11.2.3.2 परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र (Para Sympathetic Nervous System)

परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र के सक्रिय होने पर शरीर में निम्नलिखित लक्षण उत्पन्न होते हैं—

1. हृदय गति एवं श्वास गति कम हो जाती है जिससे शरीर की चयापचय दर कम हो जाती है।
2. स्वेद ग्रन्थियों की क्रियाशीलता कम जाती है जिससे पसीने की उत्पत्ति कम हो जाती है।
3. पाचक रसों का स्रावण बढ़ जाता है, आँतों के स्राव एवं गतिशीलता बढ़ने से पाचन क्रिया तीव्र हो जाती है एवं भूख की अनुभूति होने लगती है।
4. शरीर की मांसपेशियां शिथिल हो जाती हैं जिससे शारीरिक क्रियाशीलता कम होने के साथ—साथ विश्राम की अनुभूति होने लगती है।

इस प्रकार परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र शरीर एवं शारीरिक क्रियाओं पर शामक प्रभाव रखता है। अनुकम्पी और परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र मिलकर शरीर में समस्थिति बनाये रखने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं।

यूनिटगत प्रश्न 11.1

क) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. मानव मस्तिष्क की मूल रचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई .... कहलाती है।
2. संरचना और कार्य के आधार पर मानव तंत्रिका तंत्र को .... भागों में बांटा जाता है।
3. मानव मस्तिष्क देखने में .... के समान आकार का होता है।
4. मस्तिष्क का .... नामक भाग ऐच्छिक पेशियों पर नियंत्रण करता है।
5. मानव रीढ़ से .... जोड़ी स्पाइनल नर्व निकलती हैं।

ख) बहुविकल्पीय प्रश्न

1. मानव शरीर का सबसे उत्कृष्ट अंग है

a) हृदय	b) वृक्क
c) फेफड़े	d) मस्तिष्क

टिप्पणी

2) केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र का भाग है

a) मस्तिष्क b) सुषुम्ना

c) कपालीय तंत्रिकाएं d) a और b दोनों

3) मानव शरीर में ऊपर से प्रारम्भ करते हुए निम्न तंत्रिकाओं को उचित क्रम में व्यवस्थित करें–

I) सेक्रल तंत्रिका II) लम्बर तंत्रिका

III) सर्वाइकल तंत्रिका IV) थौरेसिक तंत्रिका

सही उत्तर के लिए निम्न कूट का उपयोग करें–

a) I, II, III, IV b) I, III, II, IV

c) III, IV, II, I d) II, III, IV, I

4) मानव मस्तिष्क में भूख और प्यास का नियंत्रण केन्द्र है

a) सेरीब्रम b) हाइपोथेलेमस

c) सेरीबेलम d) मेड्यूला ऑबलेंगेटा

5) एक स्वस्थ मनुष्य की सामान्य आई0 क्यू0 कितनी होती है

a) 90 से 110 b) 50 से 70

c) 80 से 120 d) 120 से 140

11.3 मानव तंत्रिका तंत्र पर योग का प्रभाव

मानव तंत्रिका तंत्र का मन के साथ बहुत घनिष्ट सम्बन्ध होता है। मन के स्वस्थ और सकारात्मक रहने से तंत्रिका तंत्र भी स्वस्थ एवं सक्रिय रहता है जबकि मन में नकारात्मक विचार एवं भावनाएं उत्पन्न होने से तंत्रिका तंत्र में भी भिन्न–भिन्न प्रकार के विकार जैसे मानसिक तनाव, उत्तेजना, सिर दर्द, अवसाद, निराशा, चिन्ता, घबराहट और बेचैनी आदि उत्पन्न हो जाते हैं। वर्तमान काल में इन रोगों की समाज में एक बाढ़ सी आयी हुई है। छोटी उम्र के बच्चों से लेकर वयस्क और वृद्ध, सभी आयु वर्ग के मनुष्यों में ऐसी समस्याएं दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। वर्तमान समय में मन की चंचलता बढ़ने के साथ मनुष्य में धैर्य का स्तर और भाव–संवेदनाएं समाप्त सी होती जा रही हैं। आपसी मतभेद दिनोंदिन तेजी से बढ़ते जा रहे हैं और सामंजस्य कम होता जा रहा है। मानवीय गुणों– सहानुभूति, क्षमा, दया और सरलता के ह्रास के साथ तामसिक वृत्तियां– क्रोध, अहंकार, ईर्ष्या और द्वेष बढ़ते जा रहें हैं। इस क्रम में नई पीढ़ी अपने अलग सपनों की दुनिया के साथ नशे के जंजाल में जकड़ती जा रही है। सम्पूर्ण विश्व में वर्तमान समाज की नई पीढ़ी के पहनावे, खान–पान, दिनचर्या और व्यवहार को देखकर समाजशास्त्री, चिन्तक और विचारकों के माथे पर चिन्ता की गहरी लकीरें उभर रही हैं। विचारणीय प्रश्न यह प्रकट हो रहा है कि इसका भविष्य क्या

टिप्पणी

होगा। कहना गलत प्रतीत नहीं होता, कि यदि इस समय युवा पीढ़ी को सही दिशा और दशा प्रदान नहीं की जाती है तो सम्पूर्ण मानव जाति का अस्तित्व खतरे में आ जाएगा। इन्हीं बिन्दुओं पर विचार और मनन–चिन्तन करते हुए विश्व धरातल पर 21 जून 2015 को प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस आयोजित किया गया। वर्तमान समय में भारतवर्ष के साथ–साथ विश्व के अन्य देशों में भी प्राथमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रमों, माध्यमिक स्तर एवं उच्च शिक्षा में योग विषय का समावेश किया जा रहा है जिसका उद्देश्य नई पीढ़ी को शारीरिक के साथ–साथ बौद्धिक और मानसिक स्तर पर स्वस्थ और उन्नत बनाना है। वास्तव में यौगिक क्रियाएं मनुष्य के मन, मस्तिष्क और सम्पूर्ण तंत्रिका तंत्र को बहुत सकारात्मक रूप से प्रभावित करती हैं। मानव तंत्रिका तंत्र पर यौगिक क्रियाओं के प्रभाव को इस प्रकार समझा जा सकता है–

1. यम–नियम का प्रभाव

योगसूत्रों के रचनाकार महर्षि पतंजलि अष्टांग योग का प्रारम्भ यम–नियम के साथ करते हुए कहते हैं –

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहार धारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि।।

(पा0 यो0 सूत्र 2/29)

अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि अष्टांग योग के आठ अंग हैं। यम मनुष्य को सामाजिक स्तर सकारात्मक बनाते हैं तो वहीं दूसरी ओर नियम का पालन करने से मनुष्य के व्यक्तिगत् स्वास्थ्य का स्तर उन्नत बनता है। यम–नियम का पालन मनुष्य को हिंसा, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष एवं संग्रह की वृत्ति से मुक्त बनाता है। यम और नियम का जीवन में पालन करने से मनुष्य का मन स्वच्छ एवं मस्तिष्क शान्त–स्थिर बनता है। यम–नियम का पालन मनुष्य के चारों ओर सकारात्मक ऊर्जा का घेरा बनाने लगता है। वाणी में प्रभाव, आचरण में श्रेष्ठता और व्यवहार में दिव्यता आने लगती है। ऐसे साधक पुरुष की शारीरिक और मानसिक ऊर्जा सकारात्मक कार्यों की ओर उन्मुख होने लगती है तथा नकारात्मक भाव एवं तामसिक राक्षसी वृत्तियां स्वतः ही नष्ट होने लगती हैं। यम–नियम को व्रत के रुप में धारण कर पालन करने वाले मनुष्य का तंत्रिका तंत्र पूर्ण रूप से स्वस्थ, विकारमुक्त एवं उन्नत अवस्था में बना रहता है तथा ऐसे व्यक्ति का जीवन समाज के लिए एक आदर्श होता है।

2. षट्कर्म का प्रभाव

षट्कर्म की छह शोधन क्रियाएं भी मानव तंत्रिका तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव रखती हैं। शोधन क्रियाओं में नेति, त्राटक और कपालभाति का अभ्यास अधिक लाभकारी प्रभाव रखता है। नेति क्रिया से मस्तिष्क प्रदेश का शोधन होता है और नाड़ियां स्वच्छ होने का सकारात्मक प्रभाव तंत्रिका तंत्र पर पड़ता है। त्राटक मानसिक एकाग्रता और स्थिरता

प्राप्त करने का एक महत्वपूर्ण साधन है। मनुष्य की बिखरी ऊर्जा एवं शक्तियाँ त्राटक क्रिया के अभ्यास से केन्द्रित होने लगती हैं। मस्तिष्क का अचेतन भाग भी जाग्रत अवस्था में आने लगता है। मानसिक तनाव, अनिद्रा, अस्थिरता, कमजोर स्मरण शक्ति एवं एकाग्रता का अभाव आदि विकारों में त्राटक क्रिया बहुत लाभकारी प्रभाव देती है। कपालभाति क्रिया का अभ्यास करने से प्रश्वास के रूप से गन्दगियां शरीर से बाहर निकलती है। इसके साथ–साथ सम्पूर्ण शरीर से सूक्ष्म स्तर पर प्राण ऊर्जा का प्रवाह होता हैं। कपालभाति का अभ्यास मस्तिष्क की न्यूरॉन सैल्स की क्रियाशीलता में भी वृद्धि करता है।

3. योगासनों का प्रभाव

योगासनों के अभ्यास का फल महर्षि पतंजलि द्वंद्व सहन करने की क्षमता में वृद्धि के रूप में वर्णित करते हुए कहते हैं–

ततो द्वन्द्वानभिघातः।।

(पा0 यो0 सूत्र 2/48)

अर्थ यह है कि आसन का अभ्यास मस्तिष्क की सहन शक्ति और धैर्य क्षमता में वृद्धि करता है। इससे एक ओर जहां शरीर की क्षमता विकसित होती है तो वहीं दूसरी ओर मन तथा बुद्धि में धैर्य का विकास होता है। इसके परिणामस्वरूप सांवेगिक स्थिरता (Emotional Balance) प्राप्त होती है और विपरीत परिस्थितियों को सहन करने की क्षमता विकसित होती है। सर्वांगासन, शीर्षासन, भुजंगासन, मत्स्यासन, सिंहासन, वृक्षासन, गरुड़ासन आदि आसनों के साथ–साथ सूर्य नमस्कार का नियमित अभ्यास करने से, सम्पूर्ण शरीर एवं मस्तिष्क में रक्त संचार भली–भांति होता रहता है। आसन करने से मेरुदण्ड स्वस्थ एवं लचीली बनती है, साथ ही साथ सम्पूर्ण शरीर में फैली तंत्रिकाएं सक्रिय बनती हैं, जिसके परिणामस्वरूप मनुष्य का तंत्रिका तंत्र जीवन पर्यन्त स्वस्थ, ऊर्जावान एवं रोगमुक्त बना रहता है।

इसके साथ–साथ ध्यानात्मक आसनों जैसे– पद्मासन, सिद्धासन, स्वस्तिकासन और शवासन का अभ्यास करने से मस्तिष्क एवं तंत्रिकाओं को आराम के साथ–साथ स्थिरता और ऊर्जा भी प्राप्त होती है जिसका मनुष्य के तंत्रिका तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इन आसनों के अभ्यास से मानसिक तनाव, सिर दर्द, बेचैनी और अनिद्रा जैसे मानसिक रोगों में विशेष लाभ प्राप्त होता है।

4. प्राणायाम का प्रभाव

प्राणायाम का अभ्यास, मनुष्य के तंत्रिका तंत्र को बहुत सकारात्मक रुप में प्रभावित करता है। प्राणायाम का अभ्यास करने से अधिक मात्रा में शुद्ध प्राणवायु अर्थात् ऑक्सीजन शरीर की कोशिकाओं को प्राप्त होती है। नियमित प्रातःकाल प्राणायाम का अभ्यास करने से मस्तिष्क की न्यूरॉन सैल्स को पर्याप्त ऑक्सीजन प्राप्त होती है जिससे एक

टिप्पणी

ओर जहां मस्तिष्क की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है, तो वहीं दूसरी ओर इन महत्वपूर्ण कोशिकाओं की औसत आयु में वृद्धि होती है। सार रूप में स्पष्ट करें तो नियमित प्राणायाम के अभ्यास से मस्तिष्क की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता में वृद्धि होती है, स्मरण शक्ति तीव्र और दीर्घ बनती है, मानसिक एकाग्रता बढ़ने के साथ कठिन और जटिल विषयों को समझना आसान हो जाता है। प्राणायाम के लाभों को स्पष्ट करते हुए महर्षि पतंजलि योगसूत्र में कहते हैं–

ततः क्षीयते प्रकाशवरणम् ।।

(पा0 यो0 सूत्र 2/52)

अर्थात् प्राणायाम का अभ्यास करने से अज्ञानता का आवरण नष्ट होता है और ज्ञान का प्रकाश उत्पन्न होता है। चूंकि मनुष्य की अधिकांश समस्याओं और दुखों की जननी अविद्या है जिससे तनाव और अवसाद जैसे गंभीर रोग उत्पन्न होते हैं और प्राणायाम का अभ्यास करने से अविद्या का नाश और ज्ञान की प्राप्ति होती है अतः प्राणायाम का अभ्यास इन विकारों में बहुत लाभकारी प्रभाव रखता है। भस्त्रिका प्राणायाम का अभ्यास शरीर में स्थित 72 हजार सूक्ष्म नाड़ियों को शुद्ध करता है और इडा–पिंगला नाड़ी में सन्तुलन स्थापित करते हुए प्राण का प्रवाह सुषुम्ना नाड़ी में करता है। इसी प्रकार भ्रामरी प्राणायाम का अभ्यास मस्तिष्क में सकारात्मक स्पंदन उत्पन्न करता है। नाड़ी शोधन, अनुलोम–विलोम, शीतली, सीत्कारी, उज्जायी और भ्रामरी आदि प्राणायामों का विधिपूर्वक और नियमित अभ्यास करने से मन स्थिर एवं एकाग्र, मस्तिष्क क्रियाशील एवं तंत्रिका तंत्र स्वस्थ बना रहता है। नियमित प्राणायाम का अभ्यास करने से उम्र बढ़ने पर भी मनुष्य की स्मरण शक्ति तीव्र बनी रहती है।

5. प्रत्याहार का प्रभाव

इन्द्रियों पर संयम का मनुष्य के तंत्रिका तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इन्द्रियों पर असंयम अथवा प्रज्ञापराध से तंत्रिका तंत्र विभिन्न प्रकार के विकारों से ग्रस्त हो जाता है। इन्द्रियों पर संयम करते हुए प्रतिदिन प्रातःकाल सूर्योदयपूर्व उठने, प्रातःकालीन भ्रमण, नियमित योगाभ्यास, सुव्यवस्थित दिनचर्या और शुद्ध सात्विक आहार का सेवन करने से मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र स्वस्थ बना रहता है। इन्द्रियों पर संयम करते हुए साप्ताहिक अथवा शुक्ल–कृष्ण पक्ष में एक बार विधिपूर्वक उपवास करने का मनुष्य के तंत्रिका तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

6. धारणा, ध्यान एवं समाधि का प्रभाव

योग में धारणा, ध्यान और समाधि को सम्मिलित रूप से संयम की संज्ञा दी जाती है। मनुष्य के तंत्रिका तंत्र पर धारणा, ध्यान एवं समाधि सीधे और स्पष्ट रुप से अनुकूल प्रभाव डालती हैं। सकारात्मक सोच–विचार को धारण करने एवं अच्छे विषयों का ध्यान करने से तंत्रिका तंत्र स्वस्थ एवं विकारमुक्त बनता है जबकि नकारात्मक सोच–विचार एवं गलत संगत तंत्रिका तंत्र को रोग ग्रस्त बना देती है। वर्तमान काल में बढ़ते तंत्रिकीय

टिप्पणी

रोगों का मूल कारण नकारात्मक चिन्तन के साथ नकारात्मक वातावरणीय दशाएं हैं। वर्तमान काल में समाज में बढ़ती हिंसात्मक घटनाओं के दुष्प्रभाव से मन और मस्तिष्क दोनों ही विकारों से ग्रस्त हो रहे हैं। मन–मस्तिष्क को स्वस्थ बनाने के उद्देश्य से एवं सकारात्मक चिन्तन–मनन को विकसित करने हेतु महर्षि महेश योगी द्वारा भावातीत ध्यान का उपदेश दिया गया। महर्षि महेश योगी द्वारा प्रतिपादित **'भावातीत ध्यान'** सम्पूर्ण विश्व में अत्यन्त लोकप्रिय होते हुए एक आन्दोलन के रूप में प्रचलित हुआ। इसी प्रकार विपश्यना ध्यान का अभ्यास मस्तिष्क को सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करने के उद्देश्य से किया जाता है।

मनुष्य का मस्तिष्क असीम और अपार शक्ति का केन्द्र होता है। मस्तिष्क की शक्ति का आंकलन करना मनुष्य के सामर्थ्य से परे होता है किन्तु मस्तिष्क की अधिकांश शक्ति सुप्तावस्था में सोई रहती है, जिसे यौगिक क्रियाओं के अभ्यास से जाग्रत किया जा सकता है। स्मृति के तीन महत्वपूर्ण बिन्दू– कूटलेखन (Encoding), संचय (Storage) और पुनःप्राप्ति (Recall) पर ध्यान की क्रिया सकारात्मक प्रभाव रखती है, जबकि नकारात्मक सोच–विचार के साथ काम, क्रोध–भय, ईर्ष्या और द्वेष आदि स्मृति पर नकारात्मक प्रभाव रखते हैं। एक स्वस्थ मनुष्य की औसत आई क्यू 90 से 110 होती है। एकाग्रता एवं ध्यान का अभ्यास करने से मनुष्य की आई क्यू का स्तर 110 से आगे बढ़ने लगता है जबकि इसके विपरीत मानसिक तनाव एवं अवसाद में रहने से आई0 क्यू0 का स्तर कम होने लगता है। अधिक समय तक लगातार मन–मस्तिष्क में नकारात्मकता का चिन्तन–मनन करने से मस्तिष्क से सम्बन्धित रोग उत्पन्न होने लगते हैं। मस्तिष्क विकारों की विशेषता होती है कि इनकी चपेट में आने के पश्चात् मनुष्य जल्दी से ठीक नहीं हो पाता है अपितु लम्बे समय तक द्वंदों के जाल में फंस जाता है। इसके विपरीत योगांगों का पालन, यौगिक क्रियाओं का अभ्यास एवं सकारात्मक विषयों को धारण करने के साथ अपने चारों ओर सकारात्मक वातावरण की अनुभूति करने से मनुष्य अपने मस्तिष्क की क्षमता का ज्ञान करते हुए उसका सदुपयोग करने में सक्षम बनता है। स्वार्थ और संकीर्णता की तुच्छ भावनाओं का त्याग करते हुए श्रद्धा और निष्कपट भाव से सेवा, परोपकार, यज्ञ और सामर्थ्यानुसार दान करने से मनुष्य के तंत्रिका तंत्र पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पडता है। इसी प्रकार प्रातः और सांय दोनों समय सन्ध्याकाल में एकाग्रचित्त होकर ईश्वर का ध्यान करने से मन और मस्तिष्क सदैव सकारात्मक ऊर्जा से परिपूर्ण रहते हैं। प्रदूषित वातावरण, तामसिक आहार और नशीले पदार्थों का सेवन तंत्रिका तंत्र पर बहुत नकारात्मक प्रभाव रखता है। इसके स्थान पर शुद्ध सात्विक आहार, मौसमी फल और सब्जियां और सूखे मेवे जैसे– अखरोट, बादाम, काजू, किशमिश, मुनक्का आदि का सेवन करने से मनुष्य का तंत्रिका तंत्र स्वस्थ, सक्रिय, ऊर्जावान एवं रोगमुक्त बना रहता है।

टिप्पणी

यूनिटगत प्रश्न 11.2

क) सत्य अथवा असत्य कथन का चयन कीजिए –

1) यम का पालन मनुष्य को सामाजिक स्तर पर सकारात्मक बनाता है। ( )

2) योग में धारणा, ध्यान और समाधि को सम्मिलित रूप से संयम की संज्ञा दी जाती है। ( )

3) स्वायत्त तंत्रिका तंत्र अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के साथ समन्वय स्थापित करते हुए कार्य करता है। ( )

4) स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के तीन भाग होते हैं। ( )

5) अनुकम्पी तंत्रिका तंत्र शारीरिक क्रियाओं पर उत्तेजक प्रभाव रखता है। ( )

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए –

1) अष्टांग योग के वर्णित प्रथम यम का नाम लिखिए।

2) मानव मस्तिष्क के सबसे बडे भाग का नाम लिखिए।

3) मस्तिष्क का कौन सा भाग अनुकम्पी और परानुकम्पी क्रियाओं को नियंत्रित करता है ?

4) प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस कब आयोजित किया गया ?

5) मस्तिष्क के किस भाग से बोलने की क्रिया का नियंत्रण होता है ?

ग) सुमेलित करें

1.	सेरीब्रम	a.	स्थिति और स्थिति सम्बन्धी क्रियाओं का नियमन करता है।
2.	सेरिबेलम	b.	तापमान, भूख और प्यास सम्बन्धी क्रियाओं का नियमन करता है।
3.	मेड्युला ऑब्लॉन्गाटा	c.	भाव, श्रवण और दृष्टि को नियंत्रित करता है।
4.	हाइपोथेलेमस	d.	श्वसन और रक्त परिसंचरण तंत्र को नियंत्रित करता है।

टिप्पणी

आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने सीखा कि,

- मानव तंत्रिका तंत्र के तीन प्रमुख भाग होते हैं– केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र, परिसरीय तंत्रिका तंत्र और स्वायत तंत्रिका तंत्र।
- केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र के अन्तर्गत, मस्तिष्क और सुषुम्ना, जबकि परिसरीय तंत्रिका तंत्र के अन्तर्गत 12 जोड़ी कपालीय तंत्रिकाएं और 31 जोड़ी मेरु तंत्रिकाओं का वर्णन आता है। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के भी दो भाग, अनुकम्पी और परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र होते हैं।
- यूनिट के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि शरीर के सबसे महत्वपूर्ण अंग मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र को हम, योगाभ्यास, उपयुक्त आहार–विहार और संयमित जीवनचर्या के द्वारा उन्नत बनाकर अपने मानव जीवन को सफल बना सकते हैं।
- योग की क्रियाओं का नियमित अभ्यास करने से, मनुष्य का तंत्रिका तंत्र जीवन पर्यन्त स्वस्थ, सक्रिय और रोगमुक्त बना रहता है।

यूनिटांत प्रश्न

1. मानव तंत्रिका तंत्र को समझाते हुए, इसके महत्व पर प्रकाश डालिए।
2. मानव तंत्रिका तंत्र पर योगाभ्यास के प्रभाव की सविस्तार व्याख्या कीजिये।
3. तंत्रिका से आप क्या समझते हो ? परिसरीय तंत्रिका तंत्र की, सविस्तार चर्चा कीजिए।
4. निम्न पर टिप्पणियां लिखिए–

   क) मानव मस्तिष्क के महत्वपूर्ण भाग

   ख) मानव मस्तिष्क पर योग का प्रभाव

   ग) परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र

   घ) सुषुम्ना

यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

11.1

क	ख
1. न्यूरॉन	1. d
2. तीन	2. d

टिप्पणी

3.	अखरोट	3.	c
4.	सेरीबेलम	4.	b
5.	31	5.	b

11.2

क		ख		ग
1.	सत्य	1.	अहिंसा	1 – c
2.	सत्य	2.	सेरीब्रम	2 – a
3.	सत्य	3.	हाइपोथेलेमस	3 – d
4.	असत्य	4.	21 जून 2015	4 – b
5.	सत्य	5.	सेरीब्रम	

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कल्याण आरोग्य अंक – गीता प्रेस गोरखपुर।
2. मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान– प्रो0 अनन्त प्रकाश गुप्ता, सुमित प्रकाशन, आगरा।
3. शरीर और शरीर क्रिया विज्ञान – मंजु तथा महेश चन्द्र गुप्ता, सांई प्रिन्ट, नई दिल्ली।
4. मानव शरीर संरचना एवं योगाभ्यास का प्रभाव– डॉ0 मलिक राजेन्द्र प्रताप, राघव पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
5. स्वस्थवृत्त विज्ञान– प्रो0 रामहर्ष सिंह , चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
6. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान– डा0 राकेश जिन्दल, आरोग्य सेवा प्रकाशन, मुरादनगर (उ0 प्र0) ।
7. प्राकृतिक चिकित्सा – राम गोपाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. एक्यूप्रेशर – डा0 अतर सिंह, एक्यूप्रेशर हैल्थ सेटंर, चण्डीगढ।